हिन्दी साहित्य के स्रोतों के आधार पर अट्ठारहवीं शताब्दी

का

समाज - चित्रण

(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डो० फिल्० उपाधि हेतु प्रस्तुत)

शोध-प्रबन्ध

शोधकर्त्री

मधु बाला

निर्देशक

डॉ० हेरम्ब चतुर्वेदी

मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय

इलाहाबाद

१९९२

विषय- सूची

पृष्ठ संख्या

	प्राक्कथन	
1-	पृष्ठभूमि - अट्ठारहवीं शताब्दी की राजनैतिक दशा	1 - 15
2-	सामाजिक विभाजन (हिन्दू -मुस्लिम)	16 - 38
3-	नारी की स्थिति	39 - 85
4-	वेश भूषा	
	(क) वस्त्र	86 - 140
	(ख) आभूषण	141 - 180
5-	प्रसाधन	181 - 220
6-	(क) खान पान व आवास	221 - 243
	(ख) मनोरंजन के साधन	244 - 255
7-	धार्मिक अवस्था, पर्वोत्सव, आस्थाएं तथा संस्कार	256 - 328
8-	आर्थिक स्थिति	329 - 342
9-	कवि व उनके काव्य	343 - 397
10-	पुस्तक सूची	398 - 420

प्राक्कथन

प्राक्कथन

1707 में औरंगजेब की मृत्यु हुयी और पुनः सिंहासन के लिए दौड़ शुरू हुयी । औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् अट्ठारहवीं शताब्दी का इतिहास राजनैतिक अव्यवस्था एवं अराजकता का इतिहास है । राजनैतिक रूप से इस संक्रामक युग की तत्कालीन समाज पर प्रतिक्रिया अवश्यमभावी थी किन्तु इस परिस्थिति में अट्ठारहवीं शताब्दी के भारत की सामाजिक दशा के विचार पर यह प्रश्न स्वभाविक रूप से मस्तिष्क में आते हैं कि तत्कालीन समाज पर विभिन्न आंतरिक विद्रोहों, सम्राट की दुर्बलता, अमीरों के षड्यंत्र तथा वाह्य आक्रमणों का किस सीमा तक प्रभाव पड़ा ? क्या अट्ठारहवीं शताब्दी में मुगल -सभ्यता और संस्कृति का उसी गति से ह्रास हुआ जैसा कि राजनैतिक विघटन का । अतः इन प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए तत्कालीन समाज का सूक्ष्म अध्ययन आवश्यक है किन्तु, इस उद्देश्य की पूर्ति मात्र राजनैतिक ऐतिहासिक ग्रन्थों द्वारा करना असंभव है, क्योंकि इस प्रकार के स्रोत केवल राजनैतिक विवरण तक ही सीमित रहते हैं, यदि विदेशी यात्रियों के विवरण को आधार बनाया जाय तो उनके विवरण मात्र क्षणिक पर्यटन पर आधारित हैं अतः उनके आधार पर विभिन्न सामाजिक प्रवृत्तियों को समझना कठिन है अतः प्रस्तुत शोध प्रबंध में मैंने अत्यन्त महत्वपूर्ण स्रोत हिन्दी साहित्य को अट्ठारहवीं शताब्दी के भारत के समाज के चित्रण हेतु मुख्य आधार बनाया है ।

साहित्य में जीवन का स्थान, जीवन एवं साहित्य में अविच्छेद्य संबंध समीक्षा के क्षेत्र में अब विवाद के विषय नहीं रहे । काव्य की भाव वस्तु ही नहीं उसके रूप एवं उपकरण भी युगानुशासित होते हैं । ऐसा न होने पर

युग - विशेष का पाठक उसे ग्रहण नहीं कर पायेगा । अभिव्यक्ति के माध्यम से ही अभिव्यक्त वस्तु युग की आत्मा की संवेद्य होती है ।

इतिहास तथ्य के निकट होता है और साहित्य के संबध में यह कहा जाता है कि उसमें सत्य का निदर्शन होता है । इतिहासकार राजघराने को ही अपना अध्ययन-क्षेत्र मानता रहा है लोक जीवन उसे अपने अनुसंधान की गरिमा के अनुरूप नहीं प्रतीत हुआ । इतिहासकार राजदरबार की अनर्गल एवं महत्वहीन घटनाओं के अनुसंधान में ही अपने कर्त्तव्य, कर्म की इति श्री समझता रहाहै । साहित्य भी अब तक सामान्य की उपेक्षा और विशिष्ट का आलेखन करता रहा । साहित्य एवं साहित्य समीक्षा के वर्तमान युग का देय यह है कि वे हर क्षेत्र में " मामूली आदमी" की भी प्रतिष्ठा करते हैं ।

अवलोकित काल हिन्दी कवितामें कारीगरी का युग है । कवियों के काव्य के आधार पर तत्कालीन समाज का अध्ययन इतिहासवेत्ता , समाज-शास्त्री और काव्य समीक्षक तीनों के लिए समानरूप से उपयोगी है ।

तत्कालीन समाज के कवि की सीमा यही नहीं कि वह समाज या युग-जीवन के प्रति निरपेक्ष था या उसके काव्य में तत्कालीन सामाजिक रचना के बहुमुखी चित्र नहीं मिलते वास्तव में काव्य का अभाव यह भी है कि उसके काव्य में स्पंदन गति, क्रियाशीलता सजगता एवं वैविध्य नहीं है, सारत: उसमें जीवन का भी आभाव है । मुगल बादशाहों का वैभव प्रदर्शन उसकी विलासलीला और राजकर्तव्यों की उपेक्षा सभी कुछ इस साहित्य में सच्चाई के साथ व्यक्त हुआ है जिसे देखने के लिए अध्येता को सकारात्मक नकारात्मक साक्ष्यों का समान रूप

से आधार लेना चाहिए । वैविध्य एवं अनेकता जीवन जगत की मूलभूत विशेषता है। वह सदैव पूर्णता की ओर विकासमान है । तत्कालीन काव्य में एकरसता है, विश्रांति है, पौरूष का धरातल छोड़कर नारी के आंचल की छाया में सो जाने की पुरूष की प्यास है और इस प्यास में भी तीव्रता नहीं, आकुलता है । काव्यमें स्त्री-जीवन की संपूर्ण विविधता को रमणीरूप में सीमित कर दिया गया है, उसे निहारने और आह भरने में ही पुरूष के पौरूष की इतिश्री हो गयी है । कवि जहाँ कहीं सामाजिक आदर्श, नैतिक उदात्तता धर्म और भक्ति की चर्चा करने बैठता है, उसका साहित्य निर्जीव हो जाता है रागबेसुरा और खण्डित हो जाता है, कारण स्पष्ट है । उसके पीछे अनुभूति नहीं है, केवल दृष्टि और बुद्धि काम कर रही है यह क्रिया चेष्टित है, साहित्यकार स्वयं उसमें तन्मय नहीं है । उसकी रागमय अनुभूतियों का नैसर्गिक प्रवाह यहाँ नहीं है इस लिए वह साहित्यक प्रवंचना सी लगती है ।

वह युग सामाजिक आदर्शों से हीन नहीं था, उसकी अपनी नैतिक मान्यताएं और उदात्त जीवन-संबंधी धारणाएं थी । इतिहास इसका साक्षी है किन्तु साहित्यकार दूसरे जीवन का अंग था वह संभ्रांत व्यक्ति था और लोक जीवन से अछूता था । वहाँ वैभव था तो अपरिमेय और पतन था तो अकथनीय ।

यद्यपि, हिन्दी साहित्य में समाज के चित्रण के क्षेत्र श्रृंगार काल होने के कारण व्यापक नहीं था, फिर भी इनमें नायक नायिका के

क्रियाकलाप का वर्णन, अध्यात्म का दृष्टिकोण आदि हिन्दी- साहित्य का अंधानुकरण ही नहीं वरन् अट्ठारहवीं शताब्दी में सामंतवादी समाज का पूर्ण प्रतिबिम्ब है विभिन्न काव्यों से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से सामाजिक जीवन के अनेक पक्षों पर प्रकाश पड़ता है । कविता के क्षेत्र में यद्यपि अतिशयोक्तिपूर्ण प्रशंसात्मक विवरण लिखने के लिए कवियों की आलोचना की जाती है किन्तु, आलोचक यह भूल जाते हैं कि जब सम्राट की दुर्बलाएं समाज के विभिन्न वर्गों पर कुप्रभाव डालने लगे तो इन्हीं कवियों ने विभिन्न काव्यों में इतनी निर्भीकता एवं स्पष्टवादिता से काम लिया कि उनके साहस पर युग आश्चर्य करताहै ।

हिन्दी कविता के इस रूप से समाज का सर्वाधिक स्पष्ट चित्रण प्राप्त होता है । नायक-नायिकाओं के प्रेम कहानियों पर अधिकतर आधारित इन कविताओं में सांस्कृतिक जीवन उभरकर सामने आ जाता है उसके अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है मानो उस युग का एक विशेष वर्ग अपने पूरे जीवन के साथ हमारे समक्ष आ गया इसके द्वारा सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में अनेकानेक दुर्लभ सूचनाएं प्राप्त होती हैं ।

यद्यपि यह सत्य है कि इस शताब्दी के कवि केवल अपने युग को प्रतिबिम्बत कर सके सामाजिक अव्यवस्था के निवारण का कोई उपाय न सोच सके वह परिस्थितयों की गम्भीरता पर मातम करते रहे किन्तु अपनी प्रतिक्रिया के साथ कोई ऐसा दृष्टिकोण न प्रस्तुत कर सके जिससे समाज का उद्धार हो सकता किन्तु, इसके लिए वे स्वयं व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी नहीं हैं वरन् सामंतवादी पृष्ठभूमि उत्तरदायी है ।

कवि भाव लोक का प्राणी होता है युग जीवन उसके सृजन में प्रतिबिम्बित अवश्य होता है किन्तु उसके चित्र को सम्यक् एवं पूर्णरूप से देखने के लिए काव्येतर स्त्रोतों में विवेच्य काल की सामाजिक परिस्थितयों का ज्ञान अपेक्षित है। इस दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए काव्येतर स्रोतों से तत्कालीन समाज की प्रतिमा निर्मित करने का प्रयास किया गया है।

इन स्रोतों के अतिरिक्त विभिन्न ऐतिहासिक साक्ष्यों तथा विदेशी यात्रियों के ग्रन्थ सहायक रहे किन्तु विभिन्न कवियों की कृतियां हिन्दी साहित्य की सामाजिक पृष्ठभूमि पर लिखे गये तथ्यों से मैंने पग-पग पर सहायता ली है। सौभाग्यवश इसी विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में विषय वस्तु से संबंधित सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो गयी। इसके अलावा हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पब्लिक लाइब्रेरी हिन्दुस्तानी एकेडमी इलाहाबाद तथा दिल्ली की पब्लिक लाइब्रेरी, हिन्दी साहित्य अकादमी आदि से पर्याप्त सामग्री एकत्रित की। अत: अपने चार वर्ष के प्रयत्नों के पश्चात् यत्र तत्र स्त्रोतों को एकत्रित करके ऐतिहासिक तथ्यों के प्रकाश में अट्ठारहवीं शताब्दी के समाज-चित्रण करने में आंशिक रूप से सफलता प्राप्त हो सकी है। यद्यपि इस शोध प्रबंध में विभिन्न कविताओं की संख्या अधिक है किन्तु विभिन्न सामाजिक प्रवृत्तियों के स्पष्टीकरण हेतु उदाहरणों को लाना आवश्यक था।

शोध कार्य में जो उत्थान-पतन और उच्चावच के दिन आते हैं उनमें शोधकर्ता के जीवन में पर्याप्त महत्वपूर्ण चिन्ह निहित रहते हैं। ऐसे अवसरों पर मुझे अपने वरेण्य निर्देशक डॉ० हेरम्ब चतुर्वेदी जी से जो सहारा, स्नेह व

मार्गदर्शन मिला वह अविस्मरणीय है । निराशा के क्षणों में आपने तथा आपकी पत्नी पूज्यनीया श्रीमती आभा चतुर्वेदी जी ने जो उत्साह दिलाया है, अपने ऊपर विश्वास करना मैनें आपसे ही सीखा है । शोध की गुत्थियों को सुलझाने और इसकी वैज्ञानिक व्यवस्था बनाये रखने में मैनें जब - जब चाहा मुझे श्रद्धेय गुरूजी का उदारतापूर्ण मार्गदर्शन मिला जिसका बदला कृतज्ञता प्रकाश से क्या दूँ । इस विभाग के माननीय अध्यक्ष प्रोफेसर राधेश्याम की स्नेहिल छाया विभाग के सभी विद्यार्थियों पर रहती है उनके सामान्य स्नेह को पाकर भी हम विशिष्ट हो जाते हैं ।सदैव आपने मार्गदर्शन किया तथा सहयोग दिया। साथ ही हमारे पारिवारिक सदस्यों, विशेष रूप से बड़े भ्राता श्री गिरीशचन्द्र तथा मित्रों का समान रूप से सहयोग रहा आज जब शोध प्रबध पूरा हो गया तो लग रहा है कि जैसे किसीअज्ञात प्रेरणा ने मेरा हाथ पकड़कर लिखवा लिया हो । मुझे शोध प्रबंध पूरा करने को सर्वाधिक प्रेरणा मेरे पति श्री सुनील कुमार जी से मिली, जिन्होंने मेरा साहस और उत्साह बढ़ाया तथा प्रतिक्षण अपना सहयोग दिया । इसके अतिरिक्त मैं उन सभी के प्रति नतशर हूँ जिनकी कृतियों और विचारों का जाने अनजाने में मैने उपयोग किया ।

अन्त में मैं राजबहादुर पटेल को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंनें शोध - टंकण में रूचि दिखाई और इसे पूरा करने में सहयोग दिया ।

सितम्बर 1992 , मधु बाला

मार्गदर्शन मिला वह अविस्मरणीय है । निराशा के क्षणों में आपने तथा आपकी पत्नी पूज्यनीया श्रीमती आभा चतुर्वेदी जी ने जो उत्साह दिलाया है, अपने ऊपर विश्वास करना मैनें आपसे ही सीखा है । शोध को गुत्थियों को सुलझाने और इसकी वैज्ञानिक व्यवस्था बनाये रखने में मैनें जब - जब चाहा मुझे श्रद्धेय गुरूजी का उदारतापूर्ण मार्गदर्शन मिला जिसका बदला कृतज्ञता प्रकाश से क्या दूँ । इस विभाग के माननीय अध्यक्ष प्रोफेसर राधेश्याम की स्नेहिल छाया विभाग के सभी विद्यार्थियों पर रहती है उनके सामान्य स्नेह को पाकर भी हम विशिष्ट हो जाते हैं ।सदैव आपने मार्गदर्शन किया तथा सहयोग दिया। साथ ही हमारे पारिवारिक सदस्यों, विशेष रूप से बड़े भ्राता श्री गिरीशचन्द्र तथा मित्रों का समान रूप से सहयोग रहा आज जब शोध प्रबध पूरा हो गया तो लग रहा है कि जैसे किसीअज्ञात प्रेरणा ने मेरा हाथ पकड़कर लिखवा लिया हो । मुझे शोध प्रबंध पूरा करने को सर्वाधिक प्रेरणा मेरे पति श्री सुनील कुमार जी से मिली, जिन्होंने मेरा साहस और उत्साह बढ़ाया तथा प्रतिक्षण अपना सहयोग दिया । इसके अतिरिक्त मैं उन सभी के प्रति नतशार हूँ जिनकी कृतियों और विचारों का जाने अनजाने में मैने उपयोग किया ।

अन्त में मैं राजबहादुर पटेल को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंनें शोध - टंकण में रूचि दिखाई और इसे पूरा करने में सहयोग दिया ।

सितम्बर 1992 ,

मधु बाला

प्रथम अध्याय

पृष्ठभूमि : अठारहवीं शताब्दी की राजनैतिक दशा

1707 ई0 में औरंगजेब की मृत्यु हुयी ।[1] औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात् से मध्यकालीन राजनैतिक जीवन में नवीन अध्याय का प्रारम्भ होता है इसकी मृत्यु के बाद औरंगजेब के पुत्रों ने तलवार निर्णय पर बल दिया[2] जिसमें शाहजादा मुअज्जम विजयी हुआ जो बहादुरशाह के नाम से सिंहासनासीन हुआ ।[3] किन्तु बहादुरशाह औरंगजेब के समय से उत्पन्न कठिनाइयों को यथा: जागीरदारी संकट, उमरा के आपसी संघर्ष, वजीर मुनीमखाँ तथा मीर बख्शी जुल्फिकारखाँ के मध्य मतभेद के कारण वह इन विद्रोही शक्तियों का सामना नहीं कर सका परिणामस्वरूप बहादुरशाह 27 फरवरी 1712 को परलोक सिधार गया पुन:संघर्ष की प्रक्रिया[4] राजसिंहासन प्राप्त करने के लिए शुरू हुयी । परस्पर संघर्ष के पश्चात् जहाँदारशाह ने राज्य भार संभाला । जहाँदार के शासन काल में संकट पहले से ही विद्यमान था । इस समय तक जाटों ने मथुरा एवं दिल्ली के मध्य का क्षेत्र विनष्ट कर डाला था । पंजाब में सिख, बंगाल बिहार में अलीवर्दी खाँ तथा दक्षिण में मराठों ने अपनी शक्तियाँ बढ़ा ली थी । इतनी समस्याओं का समाधान करने के लिए जहाँ उसे

1- इरविन : द लेटर मुगल्स, 1 पृ0 18

2- अब्दुल्ला यूसुफ अली: मेकिंग आफ इंडिया, पृ0 168

3- इलियट एण्ड डाउसन: भाग 7, पृ0 398-99

4- विस्तृत विवरण: खाफी खाँ, मुन्तखब-उल- लुबाब , इरविन: लेटर मुगल्स, पृ0 135

दूरदर्शिता से काम लेना चाहिए था वह एक निम्न श्रेणी की स्त्री लालकुँवर के इशारों पर नाचने लगा ।[1] एक प्रकार से जहाँदार के अल्पशासन काल में विलास और हिंसा का दौर-दौरा रहा । यह गवैयों, भांडों और नर्तकों तथा तवायफों का युग था । ऐसा मालूम होता था कि अब काजी तो नशेबाजी करेंगे और मुफ्ती शराब पीयेंगें । लालकुँवर के निकट और दूरसंबंधियों को चार पाँच हजार के मनसब और हाथी, नक्कारे और अलंकार तथा ऊँचे-ऊँचे पद प्राप्त हुए । योग्य बुद्धिमान और विद्वान पुरूषों को अलग कर दिया गया । योग्य था किन्तु, वह लालकुँवर और सम्राट के भाई कव नाश रव. यद्यपि इसका वजीर जुल्फिकारखाँ के गुट में मतभेद होने के कारण समस्याओं के समाधान के लिए कोई कदम नहीं उठा सका ।[2]

इस बिगड़ी परिस्थिति का लाभ बहादुरशाह के पौत्र ने उठाया वह बहादुरशाह का द्वितीय पुत्र अजीमउश्शान का पुत्र था जिसका नाम फर्रूखसियर था उसने सैय्यद बंधुओं को सहायता से सैय्यद अब्दुल्ला खाँ तथा हुसैन अली से दिल्ली का सिंहासन प्राप्त करना चाहा अतः उसने आगरा के निकट जहाँदरशाह को पराजित किया। फर्रूखसियर ने गद्दी पर बैठते ही सम्राट जहांदारशाह तथा उसके वजीर जुल्फिकारखां का वध करवा दिया ।[3]

1- जहांदारशाह और लालकुँवर के व्यसन तथा मूर्खताओं का विस्तृत विवरण, इरविन: द लेटर मुगल्स, पृ0 192-97

2- वही,

3- जुल्फिकारखां के वध और जहाँदार की हत्या के विस्तृत विवरण खाफी खाँ,मुन्तखब उल-लुबाब, पृ0 443-45; इरविन द लेटर मुगल्स, पृ0 248-58

चूँकि फर्रूखसियर ने सैय्यद बंधुओं को सहायता से सिंहासन प्राप्त किया था फलत: उसने हुसैन अलोखाँ को मोरबख्शो नियुक्त किया और बिहार का गर्वनर बनाया, अब्दुल्ला खाँ को 7000 का मनसब दिया और मालवा का गर्वनर नियुक्त किया। एक प्रकार से इस काल को सम्पूर्ण राजनीति सैय्यद बंधुओं के हाथ में केन्द्रित हो गयो जिसका परिचालन वे अपने ढंग से करते थे। फर्रूखसियर महात्वाकांक्षी सम्राट था अत: उसने पद को गरिमा बढाने और साम्राज्य को समस्याओं का निवारण करने का प्रयत्न किया। सिख उस समय बहुत विद्रोही प्रवृत्ति के हो रहे थे अत: उसने गुरू बन्दा बहादुर तथा अन्य सिखों को बंदी बना लिया जाटों को दबाने के लिए राजा जयसिंह की अध्यक्षता में एक विशाल सेना भेजो तथा जाट सरदार चूणामन को बंदो बना लिया। किन्तु सैय्यद अब्दुल्ला ने जाटो से 20 लाख रू0 रिश्वत प्राप्त करके जयसिंह को घेरा उठाने पर विवश कर दिया। फर्रूखसियर सैय्यद बंधुओं को इस बढ़ती हुयी शक्ति को और अधिक नहीं स्वीकार करना चाहता था अत: उसने अमीरों के साथ उनके विरूद्ध षडयंत्र रचना शुरू किया। दरबार को इस प्रक्रिया से विरोधी शक्तियों ने फायदा उठाया और वह देश के विभिन्न भागों को प्रभावित करती रहीं परिणामत: फर्रूखसियर और सैय्यद बंधुओं का पारस्परिक द्वेष बढ़ता गया। अन्तत: इस द्वेष का परिणाम अत्यन्त भयानक तथा दर्दनाक हुआ। सैय्यद बंधुओं ने शाही महल में घुसकर फर्रूखसियर को पकड़ लिया और उसे दीवाने-खास में ले आये जहाँ उसकी आँखों पर सलाइयां फेर कर उसे अंधा कर दिया और बंदी गृह में डाल दिया। इस घटना के पश्चात् सैय्यद बंधु सर्वशक्तिमान हो बैठे।

एक प्रकार से सैयद बंधु इतने प्रभावशाली हो गये कि वह सम्राटों को गद्दी पर बिठाने और उतारने लगे। फर्रुखसियर को सिंहासन से उतारे जाने (28 फरवरी 1719) से लेकर मुहम्मदशाह के सिंहासनारूढ़ (24 सितम्बर सन् 1719) होने तक तीन शहजादों को सिंहासन पर बैठाया गया जो पानी के बुलबुलों की भाँति उठे और अल्पकाल में ही अपने अस्तित्व को समाप्त कर बैठे। सैय्यद बंधुओं ने रफीउद्दौला और रफीउरदरजात कोक्रमश: कठपुतली सदृश सम्राट बनाया।[1] ये नाममात्र के सम्राट थे क्योंकि कोई भी कार्य सैय्यद बंधुओं की आज्ञा के बिना करने में असमर्थ थे। रफी-उरदरजात बहादुरशाह का पौत्र औररफीउश्शान का छोटा पुत्र था। भाग्य ने भी इनका साथ न दिया और कुछ ही महीनों में इनकी मृत्यु हो गयी।

इसके पश्चात् शाहजादारोशन अख्तर को मुहम्मद शाह के नाम से सिंहासन पर बैठाया गया। मुहम्मदशाह जहाँदारशाह का पुत्र था/ जिस समय यह सिंहासन पर बैठा उसकी आयु 18 वर्ष की थी। सैय्यद बंधुओं के अधिकार अभी तक पूर्ववत् बने रहे। उन्होंनें मुहम्मदशाह को सिंहासन पर बिठाया और राज्य संचालन के सभी कार्यों में अपना हस्तक्षेप बनाये रखा।[2] उनका दीवान रतनचन्द भी अपने इच्छानुसार लोगों पर अत्याचार करता रहा। सैय्यद बंधुओं की इस बढ़ती हुयी शक्ति से अमीरों का तूरानी गुट सशंकित हो गया और यह गुट सैय्यद बंधुओं की शक्ति को कम करने का उपाय सोचने लगा। तूरानी अमीरों में हैदर बेग तथा अमीन खाँ ने एक षडयंत्र रचकर हुसैन अलीखाँ को छुरा भोंककर

1- खाफी खाँ: पृ0 818;

2- इलियट एण्ड डाउसन, भाग7, पृ0 485-86

हत्या कर दी और उसका सामान लूट लिया गया । इधर अब्दुल्लाखाँ सैय्यद राजधानी से दूर एक षडयंत्र रच रहा था । वह मुहम्मदशाह को हटाकर दूसरा मुगल सम्राट बनाना चाहता था इस ध्येय से उसने रफीउश्शान के पुत्र इब्राहीम को सम्राट बनाया तथा स्वयं सैन्य प्रबन्ध में लग गया। यह समाचार पाते ही मुहम्मदशाह अब्दुल्लाखाँ का सामना करने के लिए निकला अब्दुल्लाखाँ को बंदी बनाया गया और 1723 ई0 में उसकी मृत्यु हो गयी । इस प्रकार मुगल राजनीति से सैय्यद बंधुओं के प्रभावपूर्ण युग का अन्त हुआ । मुहम्मद अमीन खां वजीर बना किन्तु दो माह में ही उसकी मृत्यु हो गयी उसके पश्चात् निजामुल्मुल्क को वजीर नियुक्त किया गया । निरपराध सुल्तान इब्राहीमखां ने जंगल की शरण ली लेकिन उसको पकड़कर बंदी बना लिया गया और उसे बादशाह के सामने लाया गया। जिस रात को वह दरबार में आया तो मुहम्मदशाह ने उसका आलिंगन किया और पूछा "तुम कैसे आये ? शाहजादे ने कहा जिस रास्ते आप हैं । सम्राट ने पूछा तुमको कौन लाया ? उत्तर मिला, वही व्यक्ति जो आपको लाया है ।[1] सम्राट ने इसके प्रति उदारता दिखाई उसने जो कुछ किया वह विवश होकर किया था इसलिए उसको शाही क्षमा प्रदान कर दी गयी । इब्राहीम को निर्वाह के लिए 40 रू0 प्रतिदिन मंजूर किये गये और उसको शाहजहाँनाबाद के किले में कैद कर दिया गया जहाँ 30 जनवरी 1746 को लगभग 50 वर्ष की आयु में उसकी मृत्यु हो गयी ।[2]

1- इसका अभिप्राय यह है कि दोनों को अब्दुललाखाँ ने सिंहासन पर बैठाया था ।

2- इरविन , द लेटर मुगल्स, 2पृ0 94

इधर दरबार में भी गड़बड़ी चलती रही यद्यपि निजामुल्मुल्क योग्य एवं अनुभवी था किन्तु बुद्धिमत्ता होते हुए भी वह कुछ न कर सका क्योंकि सम्राट् के कृपापात्र समसामुद्दौला खानेदौरा, कोकी जिऊ, अब्दुल गफूर खिदमतगार खाँ, ख्वाजासरा एवं रोशनुद्दौला, जफरखाँ आदि समय-समय पर निजामुल्मुल्क कार्यों में बाधा उत्पन्न करते रहे अतः विवश होकर निजामुलमुल्क ने विजारत छोड़कर दक्षिण में स्वतंत्र राज्य की स्थापना का संकल्प किया और मुरादाबाद की जागीर को देखने के बहाने से हैदराबाद चला गया जहाँ उसने 1723 में स्वतंत्र राज्य की स्थापना कर ली।

तत्पश्चात् मुहम्मद अमीनखां के पुत्र कमरूद्दीन खाँ को वजीर बनाया गया किन्तु कमरूद्दीन खाँ भी स्वार्थसिद्धि को महत्ता देता रहा तथा उसने राजनैतिक जटिलताओं की ओर ध्यान देने की चेष्टा नहीं की। दूसरी ओर सम्राट रंगरेलियों में व्यस्त था तथा अन्य उमरा परस्पर संघर्षरत रहे। परिणामस्वरूप मराठों ने मालवा तथा गुजरात के प्रान्तों पर अधिकार कर लिया। इससे उसके उत्साह में वृद्धि हुयी तथा वे आगरा और दिल्ली पर अधिकार जमाने के लिए सक्रिय हो गये। यद्यपि जनवरी 1738 मे मुगल सेना ने आगरे के समीप मराठों को पराजित किया किन्तु यह समाचार पाकर मराठा पेशवा बाजीराव ने दिल्ली के निकटवर्ती क्षेत्रों में लूटमार प्रारम्भ कर दिया। अब इनसे निपटने के लिए मुहम्मदशाह ने निजामुल्मुल्क को दक्षिण से बुलवाया। निजामुल्मुल्क की सेना तथा पेशवा की सेनामें संघर्ष हुआ किन्तु निजामुल्मुल्क मराठों का कुछ न बिगाड़ सके और मराठोंको सूबा मालवा

1- इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 488-89

तथा 50 लाख रूपये देने का वायदा किया गया । इस समय तक बंगाल, बिहार, उड़ीसा केन्द्र से पृथक् हो गये थे, रूहेलखंड का क्षेत्र रूहेलों ने दबा लिया, जाट अत्यधिक शक्तिशाली हो गये भरतपुर के क्षेत्र पर सैय्यदों ने अपना अधिकार जमा लिया, फर्रूखाबाद में बंगशवंश स्वतंत्र होने की चेष्टा में लगा था ।

इस परिस्थिति में जबकि विशाल साम्राज्य का द्रुतगति से विघटन हो रहा था, आंतरिक समस्याएं पराकाष्ठा पर पहुँच गयी थीं, विद्रोही शक्तियाँ अपने प्रभाव क्षेत्र विस्तृत कर रही थीं, अकस्मात् वाह्य आक्रमण के प्रकोप ने जर्जर मुगल साम्राज्य की खोखली जड़ों को भीतर से हिलाकर रख दिया । इस प्रकार समाज की नियति पर दो दुर्भाग्यपूर्ण आक्रमणकारियों ने अन्तिम मुहर लगा दी । पहले नादिरशाह ने और फिर अहमदशाह अब्दाली ने इस लड़खड़ाते हुए साम्राज्य पर ऐसे प्रहार किये जिनको सहन करने के लिए इसमें सामर्थ्य नहीं थी । मुहम्मदशाह (1719-1748) के शासन काल में तो असंतोष अपनी चरम सीमा पर की पहुँच चुका था । इस काल में निजाम, सिख मराठे तथा नादिरशाह ने बड़ा उपद्रव मचाया ।[1]

नादिरशाह का भारत पर आक्रमण मुगल साम्राज्य के लिए घातक सिद्ध हुआ नादिरशाह के दिल्ली में आने से पहले तक उसके विरूद्ध मुगल सम्राट ने कोई पग नहीं उठाया । अन्त में विवश होकर मुहम्मदशाह ने शाही सेना के साथ कर्नाल

1- आनन्दराम मुखलिस: सफरनामा, संपा. सैय्यद अज़हर अली, लखनऊ, पृ0 88

के मैदान में नादिरशाह का सामना किया किन्तु मुगल सेना को हथियार डालने पड़े । संधिवार्ता प्रारम्भ हुयी जिसके द्वारा निश्चित हुआ कि नादिरशाह पचास लाख रू0 हर्जाने के रूप में लेकर वापस चला जाएगा किन्तु इसी समय वजीर सादत खाँ ने लालचदी कि यदि वह राजधानी चला जाये तो उसे करोड़ों रूपये हाथ आ सकते हैं अतः नादिरशाह ने निजामुल्मुल्क कोबुलाकर 20 करोड़ रूपये की माँग की और स्वयं दिल्ली पहुँचा, उसी दिन कुछ नादिरी सिपाहियों का दिल्ली निवासियों ने वध करवा दिया । जब नादिरशाह को यह समाचार मिला तो उसने कत्लेआम का आदेश दिया परिणामतः ईरानियों ने इतना नरसंहार किया कि दिल्ली के इतिहास में इस प्रकार के नरसंहार का और कोई उदाहरण नहीं प्राप्त होता । इस नरसंहार में 20 हजार से अधिक लोगों का वध हो गया महलों में आग लगा दी गयी तथा घनी बस्तियों में लाशों के ढ़ेर दिखाई पड़ने लगे । प्रातः 9 से 2 बजे तक यही क्रम चलता रहा इसके पश्चात् निजामुल्मुल्क और कमरूद्दीन खाँ की याचना पर नादिरशाह ने कत्लेआम रोकने की आज्ञा दी तथा नगर निवासियों पर 2 करोड़ रू0 जुर्माना लगाया। सम्पूर्ण नगर को घेरकर अत्यअधिक कठोरतापूर्वक धनराशि एकत्रित की गयी । साधारण जनता केअतिरिक्त नगरवासियों तथा गर्वनरों को शीघ्रतिशीघ्र बड़ी-बड़ी रकमें अदा करने की आज्ञा दी गयी ।

इसके अतिरिक्त अपने पुत्र का विवाह मुहम्मद शाह की पुत्री से करवाया हरम की 16 स्त्रियों को भी अपने हरम में सम्मिलत किया कुछ बड़े बड़े अमीर जो कर्नाल के युद्ध में मारे गये थे उनकी संपत्ति पर अधिकार कर लिया ।

एक सप्ताह बाद धनराशि वसूल कर लेने पर नादिरशाह ने दरबार किया तथा मुहम्मदशाह को मुगल सम्राट बनाया । मुगल सम्राट ने सिन्धु नदी के निकटवर्ती क्षेत्र एवं अफगानिस्तान नादिरशाह को समर्पित कर दिए तथा संधि पत्र पर हस्ताक्षर किए जिसके अनुसार पेशावर काबुल, गजनी, हजारा, भक्कर, घट्टा आदि भी उसे प्रदान किये गये । इन सूबों के कोष में संचित धनराशि पर भी मुगलों का कोई अधिकार न रह गया । इसके अतिरिक्त जुर्माने के रूप मे दिल्ली से पन्द्रह करोड़ रूपये नगद, तख्ते ताउस, जवाहरात, शाही भंडार घर के साजो-सामान पर नादिरशाह का अधिकार हो गया ।

नादिरशाह के आक्रमण का मुगल राज्य पर अत्यअधिक घातक प्रभाव पड़ा इससे साम्राज्य की वास्तविक दुर्बलताएं खुले रूप में सामने आ गईं, उत्तरो-पश्चिमी सीमांत प्रदेश पूर्ण रूप से निकल गये , साम्राज्य के आर्थिक स्रोत विनष्ट हो जाने से व्यापार तथा वाणिज्य की स्थिति गम्भीर हो गयी ।[1] दिल्ली की गलियों और हवेलियों में इतना विनाश हो चुका था कि वर्षों के परिश्रम से भी इसका विगत वैभव वापसनहीं लौट सकता था ।[2] और इस प्रकार मुहम्मद-शाह नादिरशाह का सामना नहीं कर सका दिल्ली कटे हुए कुत्ते बिल्ली की तरह भयानक लगने लगी तथा बाबर हुमायूँ जैसे बहादुरों द्वारा चलाया हुआ राजवंश गर्हित अवस्था को प्राप्त हुआ :

1- आनन्दराम मुखलिस: सफरनामा, संपा० सैय्यद अज़हर अली, लखनऊ, 1954, पृ088

2- घनानंद ग्रंथावली: पृ0 61 भूमिका से उद्घृत

दिल्ली भई बिल्ली कटैला कुत्ता देखि डरी,
भूल्यौ मुहम्मदशाह पहिले अब कह टोकिये ।
बाबर हुमायुँ को चलायो अब बंस,
ताको यह फैलो सोक परजा करम ठोकिए[1]

यह घातक युद्ध 13 फरवरी सन् 1739 को हुआ था ।

नादिरशाह के आक्रमण का घाव पूरा होता तभी दिसम्बर 1747 में अहमदशाह अब्दाली ने लाहौर जीत लिया । वजीर कमरूद्दीन तथा शहजादा अहमदशाह उसके विरूद्ध युद्ध केलिए निकले, अब्दाली के तोपखाने में आग लग जाने के कारण वह पराजित होकर वापस चला गया इसी मध्य 1748 में मुहम्मदशाह की मृत्यु हो गयी ।

मुहम्मदशाह की मृत्यु के पश्चात् शहजादा अहमदशाह शासक बना। अहमदशाह तो औरभी विलासी शासक निकला । वह हरम की चाहरदीवारी में बन्द रहने के कारण प्रशासनिक गुणों एवं राजनैतिक दूरदर्शिता से परे था । अत: उसके शासनकाल में साम्राज्य की गतिविधियों पर उसकी माता ऊधम बाई तथा उसके कृपापात्र जावेदखाँ का अत्यअधिक प्रभाव बढ़ गया। वजीर सफदरजंग अपनी नीतियों को कार्यान्वित करने में असफल रहा तथा अन्य दरबारी उमरा भी अपने व्यक्तिगत हितों की पूर्ति में लगे रहे ।

राजनैतिक विघटन को इस प्रक्रिया में पुन: अहमदशाह अब्दाली ने सहयोग दिया । उसने 1752 में पुन: लाहौर जीत लिया अत: सम्राट के वजीर

1- घनानंद ग्रंथावली: पृ० 61, भूमिका से उद्धृत

सफदरजंग ने मराठों की सहायता से अहमदशाह पर आक्रमण करने के लिए और दूसरी ओर अपने कृपापात्र जाविदखाँ से परामर्श कर अहमदशाह अब्दाली की मांग के अनुसार उसे मुल्तान और थट्टा उसे सौंप दिया। वजीर सफदरजंग जब मराठों की सेना लेकर दिल्ली पहुँचा और उसने संधि की बात सुनी तो उसने नगर में घुसने से इन्कार कर दिया किन्तु मराठों को इससे उनकी तय की हुयी धनराशि नहीं मिली परिणामत: उन्होंने दिल्ली के आसपास के प्रदेशों को लूटना प्रारम्भ किया। अंतत: दक्कन की सूबेदारी लेने के बदले में मराठों को दिल्ली से हटाया गया।

सफदरजंग को उसके पद से हटा दिया गया उसके विरुद्ध विजय प्राप्त करने वाला इमाद-उल-मुल्क था जो निजाम-उल-मुल्क का पौत्र था। ऐतमादुद्दौला को वजीर तथा इमादु-उल-मुल्क को मीर बख्शी नियुक्त किया गया किन्तु ये लोग भी विश्वासपात्र न निकले। इमादु-उल-मुल्क मराठों के साथ दिल्ली की ओर बढ़ा और शाही शिविर पर आक्रमण कर दिया अहमदशाह जान बचाकर भागा किन्तु शाही बेगमों पर बहुत अत्याचार किये गये। अत: विवश होकर सम्राट ने होल्कर की माँगों को स्वीकार इमादु-उल-मुल्क को वजीर बना दिया। अब इमादु-उल-मुल्क ने बादशाह और वजीर दोनों को कोने में बिठा दिया तथा जहाँदार के पुत्र अजीजुद्दीन को आलमगीर द्वितीय के नाम से गद्दी पर बिठाया। अहमदशाह और उसकी माता को बंदी बनाकर अंधा कर दिया गया।

आलमगीर द्वितीय केवल नाममात्र शासक था वास्तविक सत्ता इमादु-उल-मुल्क के हाथ में थी। 1757 में अहमदशाह अब्दाली दिल्ली आ

धमका और आस पास के क्षेत्रों को लूटना प्रारम्भ कर दिया। एमादु-उल-मुल्क युद्ध के लिए तैयार न था अत: उसने अब्दाली से दया की प्रार्थना की और पेशकस देने की प्रतिज्ञा की अब्दाली ने उसकी विजारत बनी रहने दी। उसने अवध से रूपया वसूल किया। इसी बीच अब्दाली से आलमगीर द्वितीय ने नजीबुद्दौला रूहेला को वजीर बना दिया तथा वापस लौट गया। अब इमादु-उल-मुल्क ने होल्कर से दिल्ली पर आक्रमण करके सम्राट तथा नजीबुद्दौला को बंदी बना लिया। होल्कर ने नजीबुद्दौला से बलात् रिश्वत लेकर संधि करवाई और उसे उसके क्षेत्र भेज दिया यह युद्ध 45 दिन तक चला था। इधर इमादु-उल-मुल्क ने आलमगीर द्वितीय की छलपूर्वक हत्या करवा दी।

अब इमादु-उल-मुल्क ने औरंगजेब के प्रपौत्र को शाहजहाँ द्वितीय के नाम से सिंहासन पर बिठाया। अहमदशाह अब्दाली ने फिर एक बार दिल्ली की ओर रूख किया लेकिन इस बार एमादु-उल-मुल्क दिल्ली छोड़कर सूरजमल जाट के पास चला गया। वहाँ से वह काल्पी चला गया जहाँ एकांतवास करना प्रारम्भ किया इस प्रकार मुगल राजनीति पटल से उसका प्रभाव समाप्त हो गया।

अहमदशाह अब्दाली ने हर बार की तरह लूटमार मचाई और 1759 में उसने शाहजहाँ द्वितीय को पदच्युत करके शाहजादा अलीगौहर को शाहआलम द्वितीय के नाम से गद्दी पर बिठाया। एक ओर तो दरबार में गुटबन्दी चल रही थी और दूसरी ओर मराठों ने अब्दाली की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर मराठों ने दिल्ली में लूटमार प्रारम्भ की। 1761 में पानीपत के

मैदान में अब्दाली तथा मराठा पेशवा बाला जी बाजीराव की सेना में भयंकर युद्ध हुआ । तोपखाने का सही नियंत्रण न होने के कारण मराठा सेनापति सदाशिव राव भाउ की रणक्षेत्र में मृत्यु होने के कारण मराठों को पराजयहुयी और पराकाष्ठा पर पहुँचे हुए इस शक्ति काअन्त हो गया । यद्यपि उस समय शाह आलम बंगाल में था किन्तु अहमदशाह अब्दाली ने उसे ही सम्राट स्वीकार किया और अवध के सूबेदार शुजाउद्दौला को उसका वजीर नियुक्त करके वापस लौट गया ।[1]

1764 में बंगाल में नवाब मीर कासिम के पक्ष से लड़ा किन्तु पराजित हुआ । उसने कड़ातथा इलाहाबाद एवं 26 लाख वार्षिक पेंशन के बदले में अंग्रेजों को बंगाल बिहार की दीवानी प्रदान की । इलाहाबाद में वह 1771 तक रहा । इसके पश्चात् मराठों की सहायता वह इलाहाबाद से दिल्ली आया । इन वर्षों में सम्राट की अनुपस्थिति में उसका पुत्र जवांबख्त जहांदारशाह दिल्ली में मराठों के प्रभाव में शासन चलाता रहा ।

इसी मध्यसिक्खों ने सहारनपुर तथा दिल्ली के आसपास के क्षेत्रों को लूटना प्रारम्भ कर दिया। नजीबुद्दौला ने उनको दबाने का प्रयत्न किया किन्तु स्वास्थ्य ने उसका साथ न दिया और वह अपने पुत्र जाब्ता खाँ पर दिल्ली का प्रबंध छोड़कर स्वयं नजीबाबाद आ गया जहाँ 1770 में उसकी मृत्यु हो गयी । शाहआलम की अनुपस्थिति में उसने सदैव दिल्ली को बचाने का प्रयत्न किया।

1- कामदार और शाह: ए हिस्ट्री ऑफ द मुगल रूल इन इंडिया, पृ0266, ओवन, द फाल आफ मुगल इम्पायर, पृ0 208-209

नजीबुद्दौला के पुत्र जाब्ता खाँ ने मराठों के साथ मिलकर दिल्ली पर हमला किया शाही फौज पराजित हुयी । यद्यपि शाह आलम ने उसे वजीर स्वीकार कर लिया । किन्तु 1785 में उसकी मृत्यु हो गयी और अब गुलाम कादिरखाँ वजीर बना उसने शाही परिवार के साथ अत्यधिक दुर्व्यवहार किया और मुगल सम्राट शाहआलम की आँखें निकाल लीं । इस अपमान जनक घटना से सिंधिया फौज ने गुलामकादिर पर आक्रमण कर दिया गुलामकादिर जब वजीर बना था तब शाह आलम सिंधिया की शरण में चला गया था । यद्यपि गुलाम कादिर भाग गया था लेकिन उसे पकड़कर सिंधिया के समक्ष लाया गया और अत्यअधिक कष्ट देकर बध कर दिया गया । इस समय मुगल सम्राट ने राज्य कार्यों से हाथ उठा लिया था और लाचार मराठों के पंजों में बंदी था सिंधिया सर्वशक्तिमान था । अन्त में 1803 में लाईलिक ने दिल्ली विजित करके सम्राट के पद पर तो उसे रहने दिया और 1 लाख 25 हजार पेंशन निश्चित करके उसके समस्त अधिकार छीन लिये । अब मुगल सम्राट अंग्रेजों की कृपा पर आश्रित रह गया । 1806 में सम्राट शाह आलम की मृत्यु हुई और अकबर द्वितीय नाममात्र का शासक बना ।

इस प्रकार तत्कालीन समाज की राजनैतिक अवस्था का चित्र कवि की एक पंक्ति से ही खिंच जाता है :

साहिब अंध मुसाहिब मूक, सभा बहिरी, रंग रीझ को मान्च्यो ।[1]

राजनैतिक अव्यवस्था तथा विलासिता इन बिगड़ी हुयी परिस्थितियों के भँवर

1- देव ग्रंथावली: वैराग्यशतक, संपादक पुष्पारानी जायसवाल, 33, छं0 25

में पड़कर तत्कालीन कवि वर्ग एक विशेष विचारधारा का अनुगामी हो गया । अब कवियों ने हिन्दी साहित्य को आध्यात्मिक स्तर से उतार कर लौकिक स्तर पर ला खड़ा किया और उनकी लेखनी श्रृंगार से ओत-प्रोत कामिनियों का चित्रण करने का माध्यम बनी ।

द्वितीय अध्याय

सामाजिक-विभाजन (हिन्दू-मुस्लिम)

हिन्दू समाज की महत्वपूर्ण वर्ण-व्यवस्था चार भागों में विभाजित थी ।[1] वर्ण व्यवस्था हिन्दू समाज की एक ऐसी विशेषता है जो संसार के किसी भी भाग में नहीं पाई जाती ।[2] भारत के यूरोपीय लेखकों तथा उनका अनुसरण करने वाले देशी लेखकों ने वर्ण शब्द का अर्थ-चर्म (रंग) ही बताया है और तदुपरान्त जाति ।[3] अंग्रेजी भाषा में जाति शब्द के लिए "कास्ट" का व्यवहार किया जाता है जो पुर्तगाली शब्द "कास्टा" से बना है जिसका अर्थ है नस्ल, प्रजाति या जन्म ।[4] प्राचीन पुस्तकें समाज का ऐसा चित्र प्रस्तुत करती हैं जिससे ज्ञात होता है कि समाज सर्वथा जाति के आधार पर व्यवस्थित था ।[5] यह जाति प्रथा अथवा वर्ण व्यवस्था काफी पहले से भारत में प्रचलित था ।[6] समाज के ये चार

1- डुबाएस - हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज - पृ0 14, 22, 32
ट्रेवेर्नियर- ट्रवेल्स इन इण्डिया - पृ0 142-144,

2- योगेन्द्र नाथ भट्टाचार्य - हिन्दू कास्ट्स एण्ड सेक्ट्स- पृ0- 2 ।

3- इण्डियन एन्टीक्वेरी भाग- 60, 1931 पृ0 - 49 ।

4- वही

5- इण्डियन एन्टिक्वेरी भाग 49, (1920) में प्रकाशित लेख "ऑन द हिस्ट्री ऑफ इण्डियन कास्ट सिस्टम" में एच0 पी0 चकलादर द्वारा उद्धत - पृ0 206 ।

6- पुराणों के रचनाकाल में ही भारतीय समाज चार वर्णों के आधार पर निश्चित रूप से संगठित था। वे थे- ब्राह्मण अर्थात् पुरोहित, क्षत्रिय अर्थात् योद्धा, वैश्य अर्थात् व्यापारी, ... सी. डी. एम. जोड, दि हिस्ट्री ऑफ इण्डियन सिविलाईजेशन- पृ0 4 , लंदन, 1936

वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभाजित थे।

ब्राह्मण छत्री वैस्य सूद्र पुनि।[1]

ये ब्राह्मण, छत्रिय, वैश्य और शूद्र क्रमशः जन्म के आधार पर स्थित थे, जिनमें अन्तिम तीन एक दूसरे से निम्न होते थे।[2] ब्राह्मण को पंडित[3], द्विज[4], विप्र[5] और पुरोहित[6] भी कहा गया है। ब्राह्मण जाति अपनी

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 24; पृ0 699 छं0 20; भूषण ग्रंथावली; पृ0 83 छं0 293; आलम ग्रंथावली; पृ0 150; 73/198; निकोलाई मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 36, डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 124; ट्रेवेर्नियर, पृ0 142-144

2- धुर्ये : कास्ट, क्लास एंड आकुपेशन, पृ0 2-26

3- मतिराम: काव्यनिर्णय, पृ0 185; ललितललाम, पृ0 303 छं0 32; भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण, पृ0 56 छं0 348; सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 7 छं0 24; आलम ग्रंथावली; पृ0 128 छं 108; कालीकिंकर दत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एंड ऐकोनॉमिक कंडीशन इन दऐट्टीन्थ सेंचुरी, (1707-1813), पृ 37, 63

4- "द्विज" सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 699 छं0 20; रसपीयूषनिधि, पृ0 165 छं0 27; दीर्घनगर वर्णन पृ 820 छं0 17; सुजानविलास, पृ0 711 छं0 19; 804 छं0 18; पृ0 639 छं0 56; पृ0 639 छं0 57; पृ0 639 छं0 59; माधवविनोद, पृ0 335 छं0 8; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 98, 169

5. "विप्र" देव ग्रंथावली: पृ0 185 छं0 94; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 625 छं0 26; पृ0 627 छं0 46; पृ0 628 छं0 62; पृ0 721 छं0 19, 735 छं0 29; 774 छं0 43; पृ0 774 छं0 44; 752 छं0 44; पृ0 752 छं0 42; पृ0 762 छं0 30; वही पृ0 216

6- "पुरोहित" सोमनाथ ग्रंथावली : रामचरित- रत्नाकर, पृ0 1013 छं0 47; पृ0 364 छं0 55; वही पृ0 268, दत्त, ओरिजन ऐंड ग्रोथ आव इन इंडिया, पृ0 31 ।

श्रेष्ठता के कारण, अपनी उत्पत्ति की विशिष्टता के कारण, प्रतिबन्धित नियमों के पालन के कारण तथा अपने विशिष्ट संस्कार के कारण ब्राह्मण सभी वर्णों का प्रभु है ।[1] इस प्रकार पुरातन मान्यताओं के आधार पर सामाजिक, धार्मिक स्तर पर ब्राह्मण को श्रेष्ठतम माना गया है ।[2]

संस्कृतिक और आध्यात्मिक, सैनिक और राजनैतिक, आर्थिक और अकुशल श्रमिक - ये वर्ण- व्यवस्था के जो चार स्तम्भ माने गये इनके विभिन्न कर्त्तव्य और कर्म स्पष्टतः पृथक कर दिये गये तथा उनके विशिष्ट एवं पूरक स्वरूप को मान्यता दी गयी ।[3]

पढ़ना - पढ़ाना, ध्यान अराधना आदि ब्राह्मण वर्ग के सम्मानित मान्य कार्य थे (विशेषकर वेदाध्यन- अध्यापन)

वेद पुरानन को चरचा अरचा द्विज देवन को फिरिफैली [4]

1- दि लॉज ऑफ मनु, अध्याय 10वाँ श्लोक 3, सेक्रेड बुक्स आफ दि ईस्ट में उद्धत भाग 25, पृ0 402 एफ मैक्समूलर द्वारा संपादित, जे0 बी0 ट्रैवर्नियर, ट्रैवेल्स इन इंडिया, भाग 2 पृ0 413

2- पंडित, पंडित सों सुख मंडित, सायर सायर के मन मंनि ।
संतै, संत भैंनंत भलौ, गुँनवंतन कों गुँनवंत बखानैं ।।
देव-देवसुधा, पृ0 5 छं0 9; मतिराम-काव्यनिर्णय पृ0 185; सोमनाथ ग्रंथावली द्वि० ख०, पृ0 350 छं0 15;
वही, अध्याय 1, श्लोक 98-100 पृ0 25-26 ।

3- राधाकृष्णन् - द हिन्दू व्यू आफ लाइफ़, पृ0 76-77

4- भूषण ग्रंथावली, पृ0 83 छं0 293; देव-देवसुधा, पृ0 59, छं0 9; मतिरामग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 185; सोमनाथ ग्रंथावली; द्वितीय खंड, पृ0 319 छं0 3; पृ0 348 छं0 2; सुजानविलास पृ0 639 छं0 59; रसपीयूषनिधि, पृ0 7 छं0 24; आलमगीरनामा, पृ0 34-35; गोपीनाथ शर्मा: राजस्थान का इतिहास द्वितीय संस्करण, पृ0 480; ऋग्वेद 7, 103.8

ब्राह्मण वर्ग विवाह आदि उत्सवों में धार्मिक कृत्य संपन्न कराने में भाग लेते थे ।

या मालति के ब्याह कों प्रगटौ मंगलचार ।

विप्र वेद मंत्रनि पढौ नैकु न करौ अबार ।[1]

ब्राह्मणों का जीवन प्रारम्भ से ही चार आश्रमों में बँटा था -

आश्रम श्रु चारि । निजधर्म धारि ।[2]

प्रथम आश्रम में ब्राह्मण निम्न प्रकार से जीवन व्यतीत करता था -

" ब्राह्मणों के जीवन की यह अवधि पच्चीस वर्ष की आयु तक रहती है । उसे एक संयमित जीवन व्यतीत करना पड़ता है, वह वेद का अध्ययन और उसकी व्याख्या करता है, जिस गुरू से यह विद्याओं का ज्ञान प्राप्त करता है उसकी वह दिन रात सेवा करता है, दिन में तीन बार स्नान करता है तथा अग्नि में होमकरता है ।[3] प्राचीन काल से ही राजा का अभिषेक ब्राह्मणों

1- सोमनाथ ग्रंथावली , माधव विनोद, पृ0413 छं0 6; सुजानविलास 620 छं0 15; देव देवचरित्र , पृ0 5 छं0 12; पृ0 5 छं0 14; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 151, 223, 226,

2- सोमनाथ ग्रंथावली : दीर्घनगर वर्णन, पृ0 820 छं0 20; ब्रजेंदविनोद, पृ0 746 छं0 48; पृ0 745 छं0 41; पृ0 746 छं0 49; अलबेरूनीज, इण्डिया 2, {सचाऊ} , पृ0 130

3- भूषण ग्रंथावली: पृ0 83, छं0 293 ; देव देवचरित्र, पृ0 5 छं0 9; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, "करत अग्नि में होम उताले" पृ0 165 छं0 26; ब्रजेंदविनोद, पृ0 652 छं0 40; पृ0 654 छं0 56; सुजानविलास, पृ0 804 छं0 18; आलमगीरनामा, मुहम्मद काजिम, इलियट एड डाउसन, भाग 7, पृ0 179; अलबेरूनीज इंडिया 2, सचाऊ पृ0 130, ऋग्वेद 7, 103. 8

के हाथों से संपन्न होता रहा है ।

मुनि राजनि अभिषेक राजमुकुट धरि सीस,

तिलक दिया समाज पटु, कहि कहि जै जगदीस ।[1]

राजा के वेद विरूद्ध कार्य करने पर ब्राह्म्मण पहले के राजा को हटाकर दूसरे राजा का अभिषेक कर सकता था ।[2]

ब्राह्म्मणों के जीवन का द्वितीय आश्रम गृहस्थ आश्रम माना गया है जिसमें वह परिवार के साथ रहता है[3] तथा विवाह करके अपनी गृहस्थी बसाता है ।[4]

1- देव ग्रंथावली : देवमायाप्रपंच, पृ0 247 छं0 2; सोमनाथ ग्रंथावली : रामचरित्र-रत्नाकर, पृ0 397 छं0 2; 131 छं0 26; रामकलाधर, पृ0 450 छं0 35; विष्णु पुराण : 4, 20. 28-29 ; कृत्यकल्पतरू राजधर्मकांड, पृ0 9-18, (राज्याभिषेक में ब्राह्म्मण प्रमुख रूपसे भाग लेता था) : कल्हण राजतरंगिणी 1-70, यजुर्वेद (शुक्ला) 20.1-4,

2- सोमनाथ ग्रंथावली भाग 2, रामचरित्र-रत्नाकर पृ0 397 छं0 2, में लंकाधिपति रावण के अत्याचारी होने पर विभीषण का अगले राजा के रूप में अभिषेक किये जाने का उल्लेख है; विष्णु पुराण 4.20. 28-29, इसमें राजा देवापि के वेद विरुद्ध आचरण करने पर ब्राह्मणों ने शान्तनु को राजा बनाया ।

3- नंदन विप्र प्रधान की बहनि कनिका बाल ।।
- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद पृ0 382 छं0 143, पृ0 627 छं0 47; अलबरूनीज इण्डिया 2 (सचाऊ) पृ0 131-132

4- बर सास्त्रवंत पंडित निदान -
- सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 319 छं0 9; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 3 पृ0 72 ।

तीसरे आश्रम में वह परिव्राजक (संयासी) हो जाता है और प्रथम आश्रम की भाँति जीवन व्यतीत करता है :

पुनि करत कर्म अनुसार वेद ।[1]

आश्रम की चौथी अवधि जीवन की समाप्ति तक रहती है फलतः इस आयु में सारा समय परमार्थ और धार्मिक कृत्यों में बीत जाता है । और माया-मोह का परित्याग करके आध्यात्म की ओर बढ़ने काअधिक प्रयास किया जाता है ।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : पृ० 627 छं० 47, ब्रजेंदविनोद : पृ० 746 छं०49; अलबेरूनीज इंडिया 2, (सचाऊ) पृ० 132-133 ।

2- बाग्यो बन्यो जरतारको तामहिं ओस को हार तन्योअकरी ने, पानी मैं पाहन- पोतचल्यो चढ़ि, कागद की छतुरी सिर दीने । काँख मैं बाँधकै पाँख पतंग के देव सुसंग पतंग को लीने , मोम के मंदिर ,माखन को मुनि बैठ्यो हुतासन आसनकीने ।
प्रस्तुत पंक्तियों में माया मोह का परित्याग का वर्णन है अर्थात् इस आयु में ब्राह्मण सांसारिक वस्तुओं की असारता में विश्वास करने लगता है । - देव :- देवसुधा, पृ० 9 छं० 19; मतिराम ग्रंथावली:रसराज, पृ० 101 छं० 1; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद , पृ० 654 छं० 57; सुजानविलास पृ० 736 छं० 36; श्रृंगारविलास प्रथमोल्लास, पृ027। छं० 20; अलबेरूनीज इंडिया (सचाऊ) पृ० 133 :आलमगीर नामा, मुहम्मदकाजिम, इलियट एंड डाउसन, भाग7 , पृ० 179

ब्राह्मणों को ज्योतिषशास्त्र का अच्छा ज्ञान था फलतः सामान्य जनता के अलावा राजा लोग भी कोई कार्य करने से पहले पुरोहित को बुलाकर मुहूर्त निकलवाते थे ।[1] प्राचीन काल से ही राजन्य वर्ग ब्राह्मणों का आदर सम्मान करते थे तथा ब्राह्मणों की रक्षा करते थे :

" जो रक्षै गो विप्र को छिति पति पुर पुरहूत "[2]

राजा लोग ब्राह्मणों को बहुत अधिक दान-दक्षिणा भी देते थे ।[3]

जातिवाद की भावना बढ़ जाने के कारण ब्राह्म्मण ऊँचनीच का भेद बहुत ज्यादा मानने लगे परिणामतः वे न तो किसी का छुआ खाते थे और न ही किसी को अपनी रसोई में प्रवेश करने की अनुमति देते थे । उनके घर में वही व्यक्ति प्रवेश कर सकता था जिसको वे स्वंय अनुमति देते थे ।[4]

इस प्रकार ब्राह्मण वेद के अनुसार कार्य करते हुए अपने धर्म का पालन बड़ी कठोरता से करते रहे ।[5]

तहाँ नृप नेह तब विप्र बुलाई । कही कि सुहुरत देहु बताई

1- सोमनाथ ग्रंथावली : सुजानविलास, पृ0 625 छं0 26; 803 छं0 6; आलम: श्रृंगार संग्रह, पृ0 54 छं0 11; डॉ0 मोहन अवस्थी हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 113 ; मुहम्मद यासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इण्डिया, पृ0 93, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, 1 पृ0 213; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0219

2- देव ग्रंथावली : पृ0 185 छं0 94; सोमनाथ ग्रंथावली: 491 छं0 39; सुजानविलास पृ0 639 छं0 55; पृ0 639 छं0 56; ब्रजेंदविनोद , पृ0 491 छं0 39; गौतम् धर्म सूत्र: 12.5.11.5-9

3- सोमनाथ ग्रंथावली : पृ0 762 छं0 30; सुजानविलास, पृ0 721 छं0 19; पृ0 735 छं0 29; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 50 छं0 40; डुबाएस हिन्दू मैनर्स , कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 223

4- "तापर ऊँच और नीच विचार वृथा बकि वाद बढ़ावत पाँडे"
-देव: देवसुधा पृ0 5 छं0 9,
मतिराम; ललितललाम पृ0 303 छं0 32; काव्यनिर्णय पृ0 185; ट्रेवेर्नियर ट्रवेल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ0 142; डुबाएस , हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 181-201

5- सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास, पृ0 627छं0 47; दीर्घनगरवर्णन, पृ082छं017

ब्राह्मण प्रकृति से संतोषी होते थे । [1] ब्राह्मण वर्ग अपनी पवित्रता बनाए रखने के लिए गले में तुलसीमाला और उपवीत (जनेऊ) भी धारण करता था । [2]

वर्ण-व्यवस्था का क्रमिक आधार पुरातन मान्यताओं के आधार पर चलता रहा तात्पर्य यह है कि चार वर्णों के विभाजन क्रम में छत्रिय का स्थान ब्राह्मण के बाद रहा किन्तु उनका मान सम्मान ब्राह्म्मणो से कम नहीं था । [3] अपने युद्ध कौशल और प्रशासन से वे समाज को रक्षितऔर पोषित करते करते थे । [4]

1- सत्य शील संतोष निधि विप्र वधू सविवेक ।
न्हान ज्ञान जप तप नियम पूजन यजन अनेक
–देव ग्रंथावली: पृ0184 छं0 89;
सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0492 छं0 46

2- जहं बसत विप्र सद्बइ त्रिकाल, गावत प्रसन्नचित गुनगुपाल, गहगहे जगमगत तिलक भाल, उपवीत कंठ में तुलसि माल ।
– सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास पृ0627 छ0 42, पृ0 552 छं0 40; भूषण ग्रंथावली; शिवाबावनी, पृ0 127, छं0 51; कैरी, पृ0 259- 260

3- "ब्राह्मण छत्री वैश्य सुद्र पुनि,"
– सोमनाथ ग्रंथावली, बजेंदविनोद, पृ0 699 छं0 20, पृ0 708 छं0 24, ऋग्वेद, 8. 35. 16-18; 1:157. 2; घुर्ये: कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन, पृ0 2-27; बर्नियर पृ0 39; ट्रेवेर्नियर: ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 143, अलबेरूनीज इंडिया (सचाऊ) भाग 2 पृ0 134

4- ऋग्वेद: 8. 35. 16-18; 1. 157. 2, गौतम धर्म सूत्र: 8. 1

भारत में निरन्तर विदेशी आक्रमणों के परिणाम स्वरूप मध्यकालीन समाज में क्षत्रिय- जाति का पुरूष निश्चित रूप से महत्वपूर्ण व्यक्ति माना जाता था ।[1]

यद्यपि मुस्लिम शासन की स्थापना से पूर्व देश में छत्रिय का जो महत्व था वह अवलोकित काल में नहीं रह गया था, क्योंकि भारतीय जनता ने पराभव की मनोवृत्ति स्वीकार कर लिया था ।[2] फिर भी क्षत्रिय जाति अपने कर्तव्य से पूर्णतयाच्युत नहीं हुयी थी । प्राचीन समय से चले आ रहे क्षत्रियों के कर्तव्यों में से कुछ कर्तव्यों का उल्लेख कवियों ने किया है जो निम्न प्रकार से हैं -

प्रजा की रक्षा करना[3] दान देना[4] वेद पढ़ना[5] तथा अपने पराये

1- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 174; बर्नियर, पृ0 39

2- डॉ0 शकुन्तला अरोरा- वही, पृ0 174-175

3- ताही सो छत्री कहै हरै सदा पर पीर ।
देव ग्रंथावली: पृ0 185 छं0 94;
सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 627 छं0 47; ब्रजेंदविनोद पृ0 685 छं0 56; मतिराम! मतिराम रत्नावली पृ0 22 छं0 20; मनुस्मृति 1.89 जयशंकर मिश्र! ग्यारहवीं सदी का भारत पृ0 113; गौतम धर्मसूत्र: 2.2-9 ट्रेवेर्नियर ; पृ0143 डुबाएँस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 668

4- भूषण ग्रंथावली! शिवाबावनी, पृ0 50, छं0 40; मतिराम रत्नावली! पृ0 22 छं0 20; सोमनाथ ग्रंथावली! सुजानविलास पृ0 721 छं0 19; 735 छं0 29; पृ0 762 छं0 30; 720 छं0 15 ; गोपीनाथ शर्मा :राजस्थान का इतिहास! पृ0 480

5- .... पढ़त उमंग सौ धनुर्वेद
- सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 627 छं0 47;
अलबेरूनीज इण्डिया 2, (सचाऊ) पृ0 136 ; मनुस्मृति 2.135

की भावना का परित्याग करके धर्म के निमित्त युद्ध करना ।[1] अपने धर्म का दृढ़ता से पालन करते हुए प्राण जाने पर भी अपमान न सहन करना आदि छत्रियों के प्रमुख कर्तव्य बताये गये हैं।[2] छत्रिय जाति का विशेष गुण यह था कि यह जाति बहुत बहादुर होती थी ।[3] फलत: इनकी शौर्य गाथाएँ बहुत प्रचलित थीं ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 520 छं0 55; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण छं0 377; महाभारत 6·122· 37, खाफी खाँ· मुन्तखब उल- लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7 पृ0 300; डुबाएस· हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनोज, पृ0 668; ट्रेवेर्नियर पृ0 143

2- "अरू छत्री वैश्यहु तिही रीति । निज धर्म तज्जिहैं ताहि अनीति
- सोमनाथ ग्रंथावली; रामकलाधर, पृ0 442 छं0 14;
आहा छत्रिय तेहु मानभंग नहि सहि सक्यौ ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ0 553, छं0 41;
ब्रजेंदविनोद 737 छं0 27; देव ग्रंथावली, पृ0 185 छं0 94; जयशंकर मिश्र ग्यारहवीं सदी का भारत पृ0 112

3- " सब छत्री गुन -मंडित उदंड, अरू महाविक्रमी बल अखंड ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर, पृ0 410 छं0 40; ब्रजेंदविनोद पृ0 570 छं0 56;
मतिराम ललितललाम, पृ0 305 छं0 41; पृ0 307 छं0 54; पृ0 26, छं0 28; भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण पृ0 34 छं0 202; खाफी खाँ· मुन्तखब -उल लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7, पृ0 300, हेमिल्टन, भाग 8, पृ0 311, ट्रेवेर्नियर: भाग 2 पृ0 145; टाड: एनल्स एण्ड एन्टोक्विटीज ऑफ राजस्थान, पृ0 724

छत्रिय वर्ग प्रारम्भ से ही राजकुल से संबंधित रहा है जो अट्ठारहवीं शती तक पूर्ववत् बना रहा ।[1] कवि ने ब्राह्मणों की भाँति छत्रियों को भी वेदानुसार कार्य किये जाने का उल्लेख किया है ।[2]

छत्रिय-वर्ग को राजपूत कहकर पुकारा गया है[3] जिसके कारण राजपूत विशेष और छत्रियों के बीच अंतर करना कभी-कभी कठिन हो जाता है । राजपूतों की अनेक शाखाएं प्रशाखाएं होती थीं ।[4] इन शाखाओं के लोगों को चंद्रावत[5]

1- मतिराम ललितललाम: पृ0 307 छं0 54,' सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 317 छं0 4,' रसपीयूषनिधि, पृ0 165 छं0 27,' रामचरित्ररत्नाकर पृ0 1140 छं0 6 ; अर्थववेद: 7, 103,' वृहदारण्य उपनिषद् 3.1 क्षत्रिय-विदह शासक जनक का उल्लेख,' छान्दोग्यउपनिषद्,' क्षत्रिय के कम नरेश का उल्लेख 5.11.5; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, -भाग 2, पृ0 407

2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 627 छं0 47; रामकलाधर पृ0 442 छं0 14

3- "राजपूत" भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण पृ0 34 छं0 43,' छं0 377 ; मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम पृ0 345 छं0 272; पृ0 307 छं0 54,' पृ0 305 छं0 41,' खाफी खाँमुन्तखब उल-लुबाब,(इलियट एंड डाउसन,) भाग 7, पृ0 300 , 302; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 12, 14, 19, 32, 39,' ट्रेवेर्नियर पृ0 143, कालीकिंकरदत्त सर्वेऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन इन दऐटटीन्थ सेंचुरी पृ0 27, 53, 65, 67, 68

4- खाफी खाँ; मुन्तखब उल-लुबाब, (इलियट एंड डाउसन,) भाग 7 पृ0 229-300 ; गोपीनाथ शर्मा- राजस्थान का इतिहास, पृ0 48

5- भूषण ग्रंथावली; शिवराजभूषण , पृ0 45 छं0 277; पृ0 34 ; छं0 204 ।

कुंभावत [1] हाड़ावंश [2] महेवा वंश [3] और कछवाहा [4] आदि कहा गया। राजपूतों की श्रेणी में राठौर [5] और मराठों [6] का भी उल्लेख मिलता है। राजपूतों केलिए रजपूत [7] शब्द का भी उल्लेख मिलता है। राजपूतों के बारे में यह कहा गया कि जो वीर हो और रणभूमि में इज्जत रखे दान करे वही वास्तव में राजपूत कहलाता है;

1- "कुंभावत" वही पृ0 45 छं0 277

2- "हाड़ा" मतिराम: ललितललाम, पृ0 304 छं0 34; मतिराम रत्नावली; पृ0 22छं0 20; भूषण ग्रंथावली; छत्रसालदशक, बोधा; विरह वागीश 182/38; मनूची स्टोरिया द मोगोर, अनुवादक विलियम इरविन भाग 2, पृ0 408 ।

3- "महेवा" भूषण ग्रंथावली, वही

4- "कछवाहा" मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 26 छं0 29; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 34 छं0 204; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 407

5- "राठौर" भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 45 छं0 272; भूषणसंग्रह, पृ0 59 छं0 67; बोधा; विरह वागीश, पृ0 182छं0 38; खाफीखाँ: मुन्तखब -उल- लुबाब, (इलियट एंड डाउसन) भाग 7, पृ0 300; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 407 भाग 3, 242

6- "मराठा" सोमनाथग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन पृ0 825 छं0 12; रसपीयूषनिधि पृ0 4, छं0 14; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 28, छं0 22; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 403

7- "रजपूत," देवग्रंथावली पृ0 185 छं0 94; भूषण: भूषण संग्रह पृ0 34, छं0 272; शिवराजभूषण, छं0 377; भूषण ग्रंथावली 403; मतिराम; ललितललाम, पृ0 345 छं0 272; पृ0 307 छं054; पृ0 305 छं0 41; मतिराम रत्नावली, पृ0 26 छं0 28

रज राखे रन दान भट सो कहिये रजपूत ।[1]

तत्कालीन समय में राजपूतों ने मुगल साम्राज्य की बहुत सेवा की और युद्ध के समय अपने प्राण गँवाने से भी नहीं डरते थे ।[2]

भारतीय समाज का एक वैशिष्ट्य यह है कि यहाँ जन्म के आधार पर सामाजिक वर्गों का वर्गीकरण किया गया फलत: जो जहाँ और जिस स्थिति में उत्पन्न होता है वह उसी स्थिति में रहना चाहता है प्रगति की कामना नहीं होती । बुनकर अपने बेटे को बुनकर ही बनाता है, स्वर्णकार का पुत्र स्वर्णकार ही होता है। इस प्रकार हिन्दू जाति की ओर यूरोपीय लोगों की अपेक्षा कहीं अधिक आकृष्ट थे ।[3]

जाति व्यवस्था के श्रेणी क्रम के अन्तर्गत तीसरा स्थान वैश्य[4] का है ।

1- देवग्रंथावली: पृ० 185 छं० 94; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पृ० 737 छं० 27; पृ० 520 छं० 55

2- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ० 34 छं० 204; पृ० 45 छं० 277; छं० 377. मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ० 26 छं० 29, ट्रेवेर्नियर: ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ० 143; रोज, ग्लासएरी आफ ट्रिब्स एंड कास्टेस, पंजाब, भाग 2, पृ० 50।

3- बर्नियर पृ० 259; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ० 4।

4- "द्विज छत्री वैश्य शूद्र और
- सोमनाथ ग्रंथावली / ब्रजेंदविनोद, पृ० 699, छं० 20; पृ० 708 छं० 24; सुजान विलास पृ० 627 छं० 48; पृ० 807 छं० 7; दीर्घनगर वर्णन, पृ० 820 छं० 18, आलम: माधनानल कामकंदला पृ० 150; धुर्ये: कास्ट क्लास एंड आकुपेशन पृ० 5-6; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3 पृ० 36; ट्रेवेर्नियर: ट्रेवेल्स इन इंडिया पृ० 143; खाफी खाँ: मुन्तखब उल-लुबाब, (इलियट एंड डाउसन) भाग 7 पृ० 264; मनुस्मृति में भी वैश्य शब्द मिलता है: मनुस्मृति 1.10; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स पृ० 14-22

वैश्य को बनिया[1] भी कहा गया है । वैश्यवर्ण के कर्म के अन्तर्गत व्यापार का संयोजन किया गया है।[2] जन्म के आधार पर जाति निर्धारण के अतिरिक्त पारम्परिक व्यवसाय करने का इस जाति पर बहुत अधिक प्रभाव रहा । पारम्परिक व्यवसाय कि विशेषता यह थी कि सामान्य रूप से जो व्यापार पिता करता था, वही व्यवसाय पुत्र, इस प्रकार पीढ़ी दर पीढ़ी एक ही व्यवसाय चलता रहता था ।[3]

अन्य जातियों की ही भाँति "वैश्य" जाति भी अपने धर्म का पालन पूर्ण रूप से करती थी । धर्मपालन का तात्पर्य है कि जिसे जो कार्य सौंपा गयाहै वह वही कार्य करता था अपने से नीचे वाला व्यवसाय अपनाना अपनी शान

1- "बनिया " बोधा; विरह-वागीश, पृ0 67 छं0 3; देव; डॉ0 भगीरथ मिश्र, रीतिकाव्य- नवनीत , पृ0 67; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास पृ0 627 छं0 48; 807 छं0 7; 806 छं0 11; ब्रजेंदविनोद ; पृ0 699 छं0 20; 708 छं0 24; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 36, 293 ; घुर्ये; कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन पृ0 5-6; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 85; कालीकिंकर दत; सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 43, 83

2- "बर बनिक्न्ह आचारवंत , व्यौपार विविध सज्जत अनंत" ।
– सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास पृ0 627 छं0 48 ; 807 छं0 7; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 820 छं0 18; मुहम्मदयासीन; वही, ट्रेवेर्नियर' ट्रैवेल्स इन इंडिया पृ0 144; कालीकिंकरदत्त, वही पृ0 43; फायर 1, 281 प्राचीन काल से ही वैश्य व्यापार में रत थे, मनुस्मृति 1.10 जहाँगीर नामा, पृ0 313 -14; गोपीनाथ शर्मा, पृ0 480

3- सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 807, छं0 6; एडवर्थ इलिस, ओयाज , पृ0 26

के खिलाफ समझता था, क्योंकि वह अपने से नीचे वाले से अपने को उच्च कुल का समझता था ।[1] व्यवसाय परिवर्तन संभवतः विशेष परिस्थितियों पर निर्भर करता रहा होगा । बनिया जाति के लोग अत्यन्त लोभी और स्वार्थी होते थे । स्वार्थ के हेतु वे पर-हित पर ध्यान नहीं देते थे । कृपणता की इस निंदनीय व्यवहार से सामाजिक शोषण में बनिये का योगदान अपने आप में स्पष्ट है । कवि ने संसार की नश्वरता एवं क्षणभंगुरता को देखते हुए बनिये की कृपण वृत्तियों को निश्चित रूप से निंदनीय माना है :

> आवत आयु को घौस उघौत, गए रवि यों अँधियारिए ऐहे ।
> दाम खरे दै खरीदु गुरू, मोह की गोनी न फेरि बिकै हैं ।
> "देव" छितीस की छाप बिना जमराज जगाती महादुख दे है ।
> जात उठो पुर देह की पैंठ, अरे बनिये बनिये नहि रे है ।[2]

1- अरू बनिक जाति । निस घौस राति ।
जुत धर्मख्याल । उर में दयाल
— सोमनाथ ग्रंथवाली: दीर्घनगर वर्णन पृ0 820 छं0 18: रामकलाधर पृ0 442 छं0 14; कालीकिंकर: दत्त सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एन्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी 1707-1813 पृ0 53; धुर्ये: कास्ट क्लास एंड आकुपेशन पृ0 2, 27

2- देव: डॉ0 भगीरथ मिश्र, रीतिकाव्य- नवनीत, पृ0 67
ट्रेवेर्नियर, पृ0 145

वर्ण - व्यवस्था के अन्तर्गत शूद्र को प्रारम्भ से ही अन्तिम स्थान दिया गया जो अवलोकित काल में यथावत विद्यमान रहा ।[1]

शूद्र वर्ण के लोग ऊपर के तीन वर्णों अर्थात् ब्राह्मण छत्रिय, तथा वैश्य के सेवक माने गये हैं।

अरु सूद्र सजै सेवा विधान .... ।[2]

ऊपर के तीन वर्ण ब्राह्म्मण छत्रिय तथा वैश्य की भाँति शूद्र भी अपने सेवा धर्म या निर्धारित आचरण का पालन करते थे। "नगर लोग सब बसै सुकर्मो। ब्राह्मण क्षत्री, वैस सुधर्मो ।[3] उपर्युक्त विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता

1- देव ग्रंथावली: पृ0 5 छं0 9; सोमनाथ ग्रंथावली : ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 24; 699 छं0 20; 483 छं0 6; रामकलाधर पृ0 442 छं0 14; मनुस्मृति (चतुर्थ एकाजातिस्तु शूद्रो नास्ति तु पंचम:) 10.4; आपस्तम्ब-धर्मसूत्र, चत्वारो वर्णा ब्राह्मण छत्रिय वैश्यशूद्रा: 1.1.1.5; धुर्ये: कास्ट क्लास ऐंड आकुपेशन पृ0 5-6; ट्रेवेर्नियर: ट्रवेल्स इन इंडिया पृ0 144, जहाँगीरनामा! पृ0 314; शूद्रों पर विस्तृत विवरण के लिए देखिए आर0एस0 शर्मा! शूद्राज इन एंशियंट इंडिया, द्वितीय संस्करण, 1980; कालीकिंकर दत्त: सर्वे आफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी पृ0 62

2- सोमनाथ ग्रथावली: सुजानविलास पृ0 627 छं0 49; ब्रजेंदविनोद पृ0 843 छं0 6, धुर्ये: कास्ट, क्लास एंड आकुपेशन पृ0 80; जहाँगीरनामा' पृ0 314, अलबेरूनीज इंडिया2 (सचाऊ) पृ0 136

3- आलम: माधवानल. कामकंदला, पृ0 150; सोमनाथ ग्रंथावली: रामकलाधर पृ0 442 छं0 14; सुजानविलास पृ0 627 छं0 49

है कि भारतीय वर्ण- विन्यास किसी विधिविहित संहिता का अधिनियम नहीं है यद्यपि यह उसका दूरगत प्रभाव हो सकता है, यह भारतीय जन को अपनी सृष्टि है जिसमें निम्नतम वर्ण का व्यक्ति भी अपनी स्थिति से लज्जित नहीं, अपितु गौरवान्वित है। निम्नतम वर्ण का व्यक्ति वर्ण- व्यवस्था से बाहर नहीं है, समाज में उसे मान्यता विहित स्थान है वह एक वर्ण का सदस्य है और स्वयं हो अपने लोगों से अलग अपनी सत्ता बनाए रखना चाहता है।[1]

इन चारों वर्णों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र के अलावा अवलोकित काल में कुछ अन्यजातियाँ भी अस्तित्व में थीं यथा: कायस्थ जाति,[2] बन्जारा[3] आदि। कुछ जातियाँ व्यवसायिक आधार पर जानी जाती थीं जैसे लुहार :

त्यौ लोहे के काम सौ है लुहार कौ नाम।[4]

---

1. जे. मिल. हिस्ट्री ऑफ ब्रिटिश इंडिया, पहली जिल्द फुटनोट, पृ0 140

2- "कायस्थ" अरु धर्मसील। कायस्थ डील
बहु जाति और। लहिबसो ठौर
- सोमनाथ ग्रंथावली : दीर्घनगर वर्णन पृ0 820 छं0 19; देव ग्रंथावली: भाग 1, सुखसागर तरंग पृ. 96 छं 285; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 48, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 422; काली किंकरदत्त: सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एंड इकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी पृ0 39, 47,

3- 'बन्जारा' देव ग्रंथावली: भाग 1, सुखसागरतरंग पृ0 99 छं0 304; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 29, छं0 22; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 27; कालीकिंकरदत्त: वही पृ0 70 टेवेनियर: ट्रेवेल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ0 34

4- "लुहार", सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि पृ0 165 छं0 27; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 94 छं0 278; आसीर-ए-आलमगीरी (इलियट एंड डाउसन) भाग-7, पृ0 187; गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, पृ0 482, आईन-ए- अकबरी, भाग 2, पृ0 191-92

लुहार के अतिरिक्त सुनार[1] तेली-तमोली[2], अहीर[3], चमार[4], धोबी[5] चारण[6] आदि जातियों का उल्लेख मिलता है ।

मुस्लिम समाज : मुस्लिम समाज में सुल्तान प्रजा का नेता और समाज का प्रधान होता था । [7]वह राज्य का सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति होता था तथा समाज के नेता की हैसियत से वह सामाजिक और सांस्कृतिक आचरण निर्धारित करता था ।[8] सामान्यत: सम्राट विलासी जीवन व्यतीत करते थे ।[9] सुल्तान प्राय: निरंकुश शक्ति का

1- "सुनार" धनानंद, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, पृ0 66 छं0 11; बोधा: विरह-वागीश, पृ0 107 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजान-विलास, 670 छं0 52; पृ0 670 छं0 53; देव ग्रंथावली; सुखसागरतरंग पृ0 91 छं0 263; गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास पृ0 482, कालीकिंकर दत्त; सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन पृ0 47

2- "तेली-तमोली" बोधा: विरह-वागीश, पृ0 198 छं0 52; पृ0 67 छं0 3; देव ग्रंथावली; सुखसागरतरंग पृ0 92 छं0 268, पृ0 92 छं0 269

3- "अहीर" आलम ग्रंथावली, पृ0 13 पृ0 4, आलम; अक्षर-मालिका, पृ0 139, छं0 303; धनानंद, जगदीशगुप्त, रीतिकाव्य संग्रह पृ0 66 छं0 11; 66 छं0 12; सोमनाथ ग्रंथावली; रामचरित्र-रत्नाकर पृ0 407, छं0 23; देवचरित्र पृ0 5 छं0 14; सुखसागरतरंग 97 छं0 291; कुमारमणि, रसिक-रसाल पृ0 10 छं0 20; बोधा; विरह वागीश पृ0 28. छं0 5

4- "चमार" भिखारीदास ग्रंथावली :काव्यनिर्णय पृ0 135 छं0 19; कालीकिंकर दत्त.... सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन पृ0 27

5- "धोबी" देव ग्रंथावली : । देवचरित्र, पृ0 24 छं0 125; कालीकिंकरदत्त-सर्वे ऑफ इंडियांज सोशल लाइफ एंड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेंचुरी पृ0 48 ।

6- "चारण", सोमनाथ ग्रं0; ब्रजेंदविनोद पृ0 110 छं0 70; वही, गोपीनाथ शर्मा राजस्थान का इतिहास पृ0 483

7- तारीखे फखरूद्दीन मुबारकशाह, ई0 डेनिसन रॉस द्वारा संपादित 1927, पृ0 483

8- वही

9- इरविन, लेटर मुगल्स, भाग 1 पृ0 192; विलियम होए मेमोएर्स, ऑफ डेल्ही; पृ0 176-82 मौ0 जकाउल्ला, तारीखे हिन्दुस्तान भाग 9-10 पृ0 91

उपभोग करते थे ।[1] किन्तु, धीरे-धीरे अट्ठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध से ही परम्परागत शाही वैभव एवं प्रतिष्ठा में विघटन प्रारम्भ हो गया था जिससे मुगल साम्राज्य जर्जरित होता गया।[2] मुस्लिम सम्राट के पश्चात् दो स्थूल सामाजिक विभाजन थे " अहल-ए-सैफ " (तलवारधारी) जिसमें उमरा खान[3] आदि की गणना की जाती थी तथा "अहल-ए-कुलम" (लेखनीधारी) जिसमें वजीर[4] आदि आते थे । अवलोकित काल में उमरा याखान तथा वजीर का उल्लेख मिलता है

1- औरंग उठाना साह सूर को है मानै आनि,
जब्बर जोराना भयो जालिम जमाना को ।
देवल डिगाने रावराने मुरझाने अरू,
धरम ढ़हाना पन मेट्यो है पुरानन को ।
-(भूषण:) राजा़मल बोरा- पृ0 21
भूषण: भूषण संग्रह पृ0 127 छं0 127; शिवाबावनी पृ0 57 छं0 47

2- इरविन: लेटर मुगल्स भाग 1, पृ0 192; विलियम होए मेमोएर्स ऑफ डेल्ही पृ0 176-82

3- ए. बी. एम. हबीबुल्लाह: दि फाउन्डेशन आफ मुस्लिम रूल इन इंडिया, पृ0 274

4- वही

5- 'उमरा याखान,' मतिराम : मतिराम -रत्नावली, पृ0 23 छं0 22, पृ027 छं0 30; भूषण ग्रंथावली: छत्रसालदशक पृ0 178, छं0 5; पृ0 179 छं0 8; शिवराजभूषण, पृ0 37, छं0 224; पृ0 42, छं0 254; पृ0 45 छं0 277; छं0 266, पृ0 50 छं0 314 ; भूषण संग्रह, पृ0 120 छं0 121; पृ0 107 छं0 110; खान भूषण ग्रंथावली; छत्रसाल दसक, पृ0 178 छं05 ; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 350; "वजीर" भूषण संग्रह पृ0 33 छं043 ; शिवराजभूषण पृ0 44 छं0 265, पृ0 39 छं0 238; शिवाबावनी पृ0 37छं0 40; खाफी खाँ:मुन्तखब-उल-लुबाब(इलियट एन्ड डाउसन) भाग 7, पृ0 264-265; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 330 तथा 393 भाग 3 पृ0 469; मुहम्मद यासीन; एसोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 43

कुलीन वर्ग में विलासिता से पूर्ण जीवन बिताने वाले सामंतों[1] का उल्लेख मिलता है ।

सामंतों के अलावा मुस्लिम समाज में प्रशासनिक अधिकारियों का अपना विशिष्ट महत्व होता था। इन प्रशासनिक अधिकारियों में मंसबदार[2] बख्शी[3] तथा सूबेदार [4] आदि का उल्लेख मिलता है । मुस्लिम समाज में

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 626 छं0 30; भूषण ग्रंथावली; पृ0 102 छं0 361; डॉ0 भगीरथ मिश्र, पृ0 16

2- "मंसबदार" मतिराम; ललितलाम, पृ0 320 छं0 122; शिवराजभूषण: पृ0 51 छं0 322; भूषण संग्रह : पृ0 35 छं0 45 , मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 352, 397-398

3- "बख्शी" या सिंहासन थित्त हो सो विक्रम अबिकार।
मंत्री बकसी आदि सब ठाढ़े हैं सिरदार ॥
सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 677 छं0 3; यहाँ बख्शी को कवि ने बकसी कहा है, खाफी खाँन: मुन्तखब उल-लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7, पृ0 314 -315; मुहम्मद यासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 31,151; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2 पृ0 353 तथा 394

4- "सूबेदार" जोई सूबे-दार जात सिवाजी सों हारि-
- शिवराजभूषण , पृ0 51 छं0 321;
पृ0 54, छं0 332 ; पृ0 48, छं0 298; पृ0 50 छं0 316; भूषण संग्रह : पृ0 70 छं0 79 ; पृ0 89 छं0 95; शिवाबावनी : पृ0 34 छं0 27 (प्रस्तुत छंदों में कही कही सूबेदार को सूबन, सूबा आदि भी कहा गया है।) । खाफी खाँन; मुन्तखब उल-लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग 7, पृ0 265 मुहम्मद यासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 47

विभिन्न जाति के लोग अफगानी[1], पठान[2], तुर्क[3], मुगल[4] तथा सैयद[5] आदि होते थे, जिन्होंने समय क्रम के अनुसार अपने को भारतीय वातावरण के अनुकूल बना लिया।

1- "अफगान" भूषण ग्रंथावली : छत्रसालदशक, पृ0 178छं0 7; भूषण ग्रंथावली, पृ0 79 छं0 56; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 11, 13; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 453-454: यूसुफ हुसैन: ग्लिमसेस, ऑफ मेडाइवल इण्डियन कल्चर, पृ0 129

2- 'पठान' भूषण संग्रह : पृ0 32 छं0 43; पृ0 57, छं0 66; शिवराजभूषण: पृ0 34 छं0 204: पृ0 45 छं0 277; पृ0 48, छं0 292, पृ0 31 छं0, 24, मनूची: वही, पृ0 453 मुहम्मद यासीन, वही पृ0 4, 12

3- 'तुर्क' "तिमिर तुलित तुरकान प्रबल दिसि विदिसि प्रगट्ट" मतिराम: मतिराम-रत्नावली पृ0 21 छं0 19, भूषणग्रंथावली, छत्रसालदशक, पृ0 10 छं0 9, पृ0 178छं07, शिवराजभूषण पृ0 52 छं0 11; पृ0 330 (536), सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 460, 14, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 825 छं0 12, पृ0 825 छं0 13, मुहम्मद यासीन; वही पृ0 1, 20

4- "मुगल" भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 31 छं0 24, शिवराजभूषण पृ0 34छं0 204, मुहम्मद यासीन; वही पृ0 10, 12, युसुफ हुसैन: ग्लिमसेस ऑफ मेडाइवल इण्डियन कल्चर पृ0 129।

5- "सैयद": सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 471 छं0 103; भूषणग्रंथावली: शिवराजभूषण: पृ0 45 छं0 277; शिवाबावनी, पृ0 31 छं0 24; छत्रसाल दशक, पृ0 178 छं0 7; खाफी खाँ: मुन्तखबउल-लुबाब (इलियट एंड डाउसन) भाग7, पृ0 514, सरकार: हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, भाग 5, पृ0 266, मुहम्मदयासीन, वही, पृ0 16-17

समाज में एक वर्ग दास व दासियों का भी मिलता है ।[1]

" हिन्दू वर्ण-व्यवस्था हिन्दुत्व पर बाहर से पड़ने वाले प्रभावों और तज्जन्य समस्याओं का समाधान सिद्ध हुयी जिसके द्वारा हिन्दुत्व ने विभिन्न जनजातियों को अपने भीतर लेकर उन्हें सभ्य और सामाजिक बनाया [2] जिसमें हर वर्ण का अपना सामाजिक प्रयोजन है उसकी अपनी आचरणसंहिता और परम्पराएं हैं.... । हर समूह अबाधित रूप से अपनी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील होने की स्वतंत्रता रखता है। विभिन्न वर्णों के कार्य समग्र समाज केलिए समान महत्त्व के समझे गये हैं । सभी सामाजिक समृद्धि में समान रूप से योग देते हैं प्रत्येक की अपनी पूर्णता है :

विप्रनि को व्रत नेम तपौ मख, राजनि रक्षनि दान दिखाए।
वैसनि बानिजु बानि जुदी, मधु सूदनि सेवन सूद सिखाए ।।[3]

किन्तु आलोच्य काल तक आते-आते वर्ण ने जन्म के स्थान पर कर्म को महत्ता दी और कर्म के अनुसार जाति जानी जाने लगी [4]। फलत: जाति-

---

1- बोधा: विरह वागीश, पृ0 37 छं0 8; सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ0 775 छं0 56 , 649 छं0 20; माधवविनोद:, पृ0 347 छं0110 ; पृ0 351 छं0 1; पृ0 351 छं0 2; पृ0 351 छं08; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 41 छं0 247; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज़, पृ0 56, मनूची: स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ0 197

2- राधाकृष्णनन्: द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ, पृ0 75

3- देवग्रंथावली: देवचरित्र, पृ0 11 छं0 44; वही, 76-77

4- राधाकृष्णन्: द हिन्दू व्यू ऑफ लाइफ पृ0 76-77

पाँति में जन्म के आधार पर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने वालों का विरोध होना स्वभाविक था । यद्यपि जाति-पाँति का खंडन आलोच्यकाल से पूर्व सूरदास तथा कबीरदास जैसे मानवतावादी समय-समय पर करते रहे । फलत: इस काल में समाज की जर्जर मान्यताओं थोथे विश्वासों और अवांछित पाखण्डों के साथ ही वर्ण-व्यवस्था पर निर्मम और कठोर आघात हुआ,

" सभी की उत्पत्ति रज-वीर्य से हुयी है, सभी कुम्हार के एक आँवा के बर्तनों जैसे हैं उस पर यह ऊँच-नीच का विचार करना और निराधार विवाद को बढ़ाना व्यर्थ है । वेद छोड़ देने के बाद ब्राह्मण और शूद्र एक हो जाते हैं, एक की पावनता और दूसरे की अपावनता का प्रश्न ही नहीं रह जाता अत: वेदों कोबंद करो जिन्होंनें ये द्वंद मचाया है कि वेद जानने के कारण ब्राह्मण पवित्र और शूद्र अपवित्र हैं :

हैं उपजे रजबीजहिं ते विनसें हू सबै छिति धाई के छांडे ।
एक से देखु कहूँ न विसेखु ज्यों एकै उन्हार कुम्हार के भाँडे ।
तापर ऊँच और नीच विचार वृथा बकवाद बढ़ावत चाँडे ।
वेदनि मूंद, कियो इन द्वंद कि सूद अपावन पावन पाँडे ।[1]

1-देव ग्रंथावली: देवसुधा, पृ0 4 छं0 9

तृतीय अध्याय

नारी की स्थिति

नारी की स्थिति

आरम्भ से ही भारतीय चिंतन में नारी के प्रति दो परस्पर नितान्त विरोधी और दूरवर्ती विचार-धाराएँ देखने को मिलती रही हैं। एक ओर यदि यह समझा गया है कि जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता वास करते हैं [1] या यह समझा गया कि नारी अपने विविध रूपों के द्वारा लोक, समाज एंव राष्ट्र को जीवन देती है, विकास के पथ पर निरन्तर अग्रसर रखती है और मानव जीवन को पूर्णता के साध्य शिखर तक पहुँचाने की परिस्थितियों का सृजन करती है जीवन का सारा रूखापन और संघर्ष उसकी छाया में पड़ते ही सरस और सहृदय हो जाताहै, तो दूसरी ओर उतने ही विश्वास और दृढ़ता के साथ नारी को नरक का द्वारा बताया गया है। [2]

<u>आदर्श नारी की धारणा</u> - भारतीय चिंतन धारा में स्त्री के लिए लज्जा और मर्यादा आदि गुण अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। घर की शोभा कन्या से होती है, संपति की शोभा पंडितों से होती है, पुरूष का भूषण सत्बुद्धि है और स्त्री का भूषण लज्जा। [3]

1- नारी के बिन घर ऐसा होताहै जैसे प्राण के बिना शरीर
नारी बिन गेह, जैसे प्रान बिन देह।
- देव, ग्रंथावली वैराग्यशतक पृ० 36 छं० 19; मनुस्मृति 3/55-60

2- योगशास्त्र, 2-87

3- वृहद्धर्मपुराण

"पर्दा"- समाज में विशेषकर उच्चवर्गीय लोगों में पर्दा बड़ी कठोरता से लागू था

समाज के हिन्दू वर्ग ने पर्दा प्रथा का पालन सामाजिक मर्यादा और सम्मान के रूप में बनाए रखा ।[2] मर्यादा को इस हद तक बांध दिया कि देहरी के बाहर भी नायिका नहीं जा सकती, ऐसा करने से उसके कुल की लाज चली जायेग फलत: नायिका भीतर ही खड़ी है ।

> भीतर भौन के द्वार खरा सुकुमारि तिया तन कंप बिसेषै ।
> घूँघट को पट ओट दिये पट ओट किये पिय को मुख देखै ।[3]

1- मैन्डल्सो, पृ0 51, डेला वेली: पृ0 461, बर्नियर पृ0 413

2- कापर, एलिज़ाबेथ, द हरेम एण्ड द पर्दा, पृ0 65: द स्प्रिट ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ0 163-164

3- मतिराम; रसराज, पृ0 251 छं0 217, पृ0 242 छं0 181, पृ 213 छं0 61, मतिराम रत्नावली, पृ0 74 छं0 134, मतिराम सतसई: पृ0 269 छं0 8; ललितललाम; पृ0 323 छं0 141; मतिराम ग्रंथावली; पृ0 318, पृ0 342, सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 294; पृ0 210 छं0 226; पृ0 183 छं0 12; सुजानविलास: पृ0 643 छं0 110; देवरसविलास (अष्टम् विलास) पृ0 233 छं0 6, पृ0 234 छं0 10; पृ0 238 छं0 34; पृ0 234 छं0 7; पृ0236 छं0 21; देव ग्रंथावली; पृ0 398; 142 तोष-सुधानिधि पृ0 105; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, पृ0 भाग 2 पृ0 175; डी लेट, द इम्पायर ऑफ द ग्रेट मुगल, होलीलैण्ड एण्ड बनर्जी, पृ0 80 (पी0 एन0 ओझा से उद्धृत)

तत्कालीन समय में पर्दा-प्रथा इतनी कठोरता से लागू थी कि स्त्रियाँ अपने रिश्तेदारों के यहाँ भी जल्दी नहीं जाती थीं[1] और यदि उन्हें अनुमति भी दी जाती थी जाने की तो वह पालकी में बैठकर (जो चारों ओर से ढकी रहती थी) तब जाती थीं।[2] मुस्लिम स्त्रियाँ बुर्का पहनती थीं कवि ने इसका उल्लेख अप्रत्यक्ष रूप से किया है।[3]

तत्कालीन समाज में पर्दा की कठोरता का संकेत इस संदर्भ से भी मिलता है कि जब ये उच्चवर्गीय स्त्रियाँ बीमार पड़ती थीं तो कोई पुरूष डाक्टर उन्हें देख नहीं सकता था उपचार के लिए एक रूमाल को भिगोकर उसे पानी में डाल

1- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, पृ0 352; बर्नियर पृ0 89; बिना किसी आदमी (पुरूष) की उपस्थिति में स्त्रियाँ अपने रिश्तेदारों से बात नहीं कर सकती थीं। डैला वैली, पृ0 430

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 146 छं0 9; मैन्डल्सो:, पृ0 51; बर्नियर, पृ0 413

3- अंदर ते निकसी न मंदर को देख्यो द्वार
बिन रथ पथ पै उधारे पाँव जाती हैं।
"भूषन" भनत सिवराज तेरी धाक सुनि
हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं।

– भूषण ग्रंथावली, शिवाबावनी, पृ0 13-14 छं0 9, आइन-ए-अकबरी, अनुवादक ब्लाखमैन, पृ0 96, अबुल फज़ल ने बुरके को अकबर द्वारा चित्रगोपिता नाम दिये जाने का उल्लेख किया है इसी पृष्ठ में (हेमिल्टन; 1, पृ0 164, डी लेट पृ0 80-81, मैन्डल्सो, पृ0 50,

लिया जाता था और उसमें से आने वाली गंध के अनुरूप डॉ0 इलाज करता था ।[1]

सम्पन्न श्रेणी की स्त्रियों में एक साधारण और संयतमार्गी परदे का चलन था जिसे "घूँघट"[2] कहा जाता था । घूँघट दुपट्टा या साड़ी माध्यम से निकालते थे ।

घूँघट निकालने की प्रथा हिन्दू समाज में कब से प्रचलित हुआ और किन परिस्थितियों के कारण हुआ यह तो अनुसंधेय है, परन्तु इतना निश्चित है कि

1- एके आफात जॉन मार्शल इनइंडिया, पृ0 338, लंदन, 1927

2- रंग लाल जरी पट घूँघट ओट लसै मुकतालर को लरक्यो।
प्रभात प्रभाकर मंडल मैं विधु मंडल बिंब सुधाधर को ।
– देव ग्रंथावली, रसविलास, (अष्टम भाग)

पृ0 234 छं0 10, (पट का तात्पर्य पटुका(चादर या दुपट्टा)जैसे वस्त्र से है) पृ0 233 छं0 6, पृ0238, छं0 34, पृ0 234 छं07, पृ0 236, छं0 21; मतिराम; रसराज, पृ0 251 छं0 217, पृ0 242 छं0 181; पृ0 213 छं0 61; मतिराम रत्नावली; पृ0 79 छं0 134 ; मतिराम सतसई; पृ0 369 छं0 8; ललितललाम; पृ0 323 छं0 141, सोमनाथ ग्रंथावली;, रसपीयूषनिधि, पृ0 41, छं0 8; पृ0 50 छं0 53; पृ0 210 छं0 227; पृ0 218 छं0294; पृ0 210 छं0 227 पृ0 183 छं0 12;(तोष) डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीति कविता और समकालीन उर्दू – काव्य, पृ0 106

भारत में पर्दे का प्रचलन ईसा से काफी पूर्व भी था ।[1]

निम्नवर्गीय स्त्रियाँ चूँकि अपने घरवालों के साथ बाहर काम पर जाती थीं इसलिए निम्नवर्ग में पर्दा प्रथा कठोरताथेलागू नहीं थी । ये स्त्रियाँ घूँघट हटाकर स्वतंत्र रूप से बाहर आ जा सकती थीं:

तन मन ओट पट घूँघट कपट खोलि ....।[2]

सामान्य रूप में रानी को सभा में लेकर बैठना उचित नहीं समझा जाता था :

राँनो कौ लै वैठिबो उचित न सभा मझार ।[3]

किन्तु, उत्सव आदि के अवसर पर स्त्रियाँ सम्पूर्ण अलंकरण के साथ उपस्थित होती थी तथा जब वे राजा के साथ बाहर जाती थीं तो घूँघट के बिना भी जा

1- रामायण में रावण की मृत्यु पर मंदोदरी घूँघटरहित हो विलाप करती आती है , भास: चारुदत्तम, मेंवंसत सेना वेश्या जब अपने प्रेमी को पति रूप में स्वीकार करती है तब उसकी अवस्था बदल जाती है उसकीमाँ कहती है कि वह घूँघट निकालकर आये औरगाड़ी में बैठजाये।(डॉ0 अवस्थी पृ0 104- 105)

2- देव ग्रंथावली: रसविलास , पृ0 238 छं0 34, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 41 छं0 8; पृ0 50 छं0 53; पृ0 210 छं0 227; पृ0183 छं0 12; ललितललाम, पृ0 323 छं0 141; कुमुदनी:स्टडीज इन मुगल पेन्टिंग शोध प्रबन्ध, (अंसारी पृ0 81)

3- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 643 छं0 110

सकती थीं ।[1]

पारिवारिक परिवेश में स्त्री- "माता" प्राचीन काल से ही पारिवारिक परिवेश में माता*[2] का विशेष स्थान है । दुराचारी पिता के त्याग देने की अनुमति दी गयी है किन्तु माता दुराचारिणी हो तो भी परित्याज्य नहीं ।[3]

कन्या : भारतीय नारी हमारे समक्ष प्रधानता पारिवारिक सीमाओं मे प्रस्तुत होती है। भारतीय समाज की रचना कुछ ऐसी है कि पुरूष का भी अधिकांश जीवन पारिवारिक परिवेश में बीतता है किन्तु स्त्रियों का सम्पूर्ण जीवन घर की चाहरदीवारी में सिमटा हुआ है। कन्या परिवार में रहकर घर के कार्यों में हाथ बँटाती है तथा ससुराल जाकर भी वह अपने मायके को नहीं भूलपाती| घर के कार्यों को सूर्यास्त होने से पहले समाप्त कर लेने की अनुमति कन्या माँ सेमाँगती है ,

> अंबे फिर मोहि कहाहिगी, क्यो न तूं गृह-काज ।
> कहै सु करि आऊं अबै, मुंदयो जात दिनराज ।[4]

1- राधाकृष्णन्- रिलीजन एण्ड सोसाइटी, पृ0143; मैन्डल्सी पृ05।

2- द रिप्रट ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ0 158, आपस्तम्ब, 2. 5 - 11- 7

3- बौधायन धर्मसूत्र 13-47; रामचरित मानस, राम की माँ कौशिल्या ने विमाता को भी विशेष स्थान दिया (गुटका) पृ0 233

4- भिखारीदास ग्रंथावली, पृ02 छं07, मतिराम ग्रंथावली, पृ0 316

अक्लोकित काल में कन्या के जन्म पर खुशी नहीं मनाते थे राजपूतों में विशेषरूप से कन्या जन्म को अच्छा नहीं मानते थे,[1] किन्तु कुछ परिस्थितियों में कन्या के जन्म पर उत्सव आदि करके खुशी मनाते थे।[2]

<u>पत्नी के रूप में</u> - भारत जैसे धर्मप्राण देश में विवाह एक अविच्छेद्य संबंध माना जाता है जो जीवन में नहीं, मृत्यु के उपरान्त भी नहीं टूटता है। जिस स्त्री का विवाह जिस पुरुष से हो जाता है, उसे जीवन भर उसका निर्वाह करना चाहिए।[3]

पत्नी के रूप में स्त्री के सारे सपने इस बात को साबित करने के लिए हैं कि वह पति के लिए पूर्णरूप से समर्पित है।[4] अनुराग और समर्पण की भावना इस हद तक होती है कि पत्नी अपने पति के सारे दोषों को छिपा जाती है और उसे कलंकित होने से बचा लेती है,

---

1- टाड; राजस्थान का इतिहास, पृ0 739-40 अर्थववेद भाग 6, 2-3

2- मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 343, पी0 एन0 ओझा गिलम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ062

3- - याज्ञवल्क्यस्मृति: व्याख्याकार डा0 उमेश चन्द्र पाण्डेय, 1 / 75 डॉ0 शकुन्तला अरोरा; रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 100

4- के0 एम0 अशरफ; लाइफ एंड कण्डीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 135

गुरूजन दूजे ब्याह को, प्रति दिन कहत रिसाइ ।

पति को पत राखे बहू, आपुन बाँझ कहाइ ।[1]

इस संदर्भ में नारी के पास किसी अधिकार का अभाव नहीं है, किन्तु उनके नैतिक संस्कारों की मर्यादा यह है कि वह एक बार वरण किये गये पति को किसी भी स्थिति में त्याग नहीं सकती चाहे वह पुरूषत्व हीन ही क्यों न हो अथवा क्रूर, कलंकी, या कोढ़ी ही क्यों न हो ।[2] ऐसी स्थिति में अपने संस्कारों के अनुसार वह इस स्थिति को दैवी घटना मानकर पति को निर्दोष समझती है तथा प्रत्येक स्थिति में उसका निर्वाह करना अपना नैतिक कर्तव्य समझती है । वस्तुतः कवियों की इस प्रकार की दृष्टि का आधार प्राचीन

1- मतिराम रत्नावली; पृ0 108 छं0 3; मतिराम ग्रंथावली (सतसई) सं0 कृष्ण बिहारी मिश्र, छं0 9; - तथा मतिराम सतसई छं0 7; (शकुन्तला अरोरा, पृ0 100) सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 83 छं0 20; पृ0 112 छं0 4; देव; भाव विलास, पृ0 103, वही ।

2- देव पतिव्रत पौरिया के उर,
कीरति की सिर चादरि ओढ़ी ।
अन्तर अन्त रमै भरमै नहिं,
कायर क्रूर कलंकी कि कोढ़ी ।
ना खिन डोलि सकै कुल लाज तें
आँखिन में दिढ़ लाज की ड्योढ़ी ।

–देव; रीति, श्रृंगार, डॉ0 नगेन्द्र, पृ0 106; +

सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 112 छं0 4; मतिराम, ग्रंथावली: (सतसई) सं0 कृष्ण बिहारी मिश्र, छं0 7; शकुन्तला अरोरा पृ0 100)

आइन-ए अकबरी, अनुवादक सरजदुनाथ सरकार, पृ0 336; कर्नल जेम्सटॉड: द ऐनल्स एण्ड एन्टीक्वटीज, ऑफ राजस्थान एडीटेड विलियम क्रुक, भाग 2 पृ0 784

मानदण्ड है जिसके अनुसार यह कहा जाता है कि सदाचार से हीन, परस्त्री में अनुरक्त, विद्या आदि गुणों से हीन भी पति, पतिव्रता के लिए देवता के समान पूज्य होता है ।[1]

तत्कालीन समाज में पत्नी के रूप में नारी का एक और आदर्श:- यह भी मिलता है कि वह केवल पति के दोषों को छिपाये ही नहीं बल्कि पति के गुणों का ही वर्णन करे उसे सब प्रकार से प्रसन्न रखे तथा पति के भोजन करने के उपरान्त ही भोजन करे :

पान औ खान तें पी सुखी लखै आपु तबै कछु पीवति खाति है ।[2]

पत्नी के रूप में नारी को परिवार के प्रति नैतिक कर्तव्यों का पालन [3]भी

1- - मनुस्मृति, गोपाल शास्त्री 5 /154

2- भिखारीदास ग्रंथावली, भा॰।। छं॰ 104 ; देव- देवसुधा, मिश्रबंधु छं0 35, देव-भवानी विलास, पृ0 14छं02 ; भिखारीदास ग्रंथावली; श्रृंगारनिर्णय पृ0 ख0 छं0 160; देवशब्दरसायन पृ0 63 पृ0 126; मनूची!, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 155, प्राचीन काल से ही पति को प्रसन्न रखने का उपदेश दिया जाता है अथर्ववेद, प्रथम खण्ड, संपादक, श्रीराम शर्मा 3| 30| 12

3- गृहस्थिक कर्त्तव्यों में संतान सेवा, घर के सम्पूर्ण कामकाज, घर को तथा परिवार वालों को देखभाल करना आदि आता है।

ब्याही कुल आचार सों। सुद्ध सुकीया बाम।
सुख सेवा संतानहित, जस रस निर्मल नाम ।।

-देव ग्रंथावली (सुमिलविनोद) सं0 लक्ष्मीधर मालवीय,

पृ0 2 छं0 12,' देवभावविलास, पृ0 89,' देव और उनकी कविता, डॉ0 नगेन्द्र पृ0 51; बोधा: विरह वागीश, पृ0 35,' भिखारीदास ग्रंथावली (काव्यनिर्णय) द्वितीय खंड पृ0 62 छं0 5,' ए0 एस0 अल्तेकर, द पोजीशन ऑफ वोमेन इन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ0 396

करना पड़ता था । साथ ही पारिवारिक सदस्यों के प्रति नारी का व्यवहार मधुर तथा मर्यादापूर्ण होना चाहिए इसका उल्लेख भी कवियों ने किया है ।[1]

<u>भाभी के रूप में</u> - पारिवारिक परिवेश में नारी का एक रूप भाभी के रूप में मिलता है । जिसमें पति के भाई को देवर और बहन को ननद कहा गया । परिवार मे नन्द और भाभी के कथन का महत्वपूर्ण स्थान है । ननद और भाभी का संबंध हमें दो रूपों में मिलता है : 1-ईर्ष्यामूलक 2-प्रेममूलक

1- नित सासु की सासन मानि हिऐं हित सौंअति सीलता को लहियै।

× × ×

ससिनाथ सुजान पे जानति मैं उन सों न रूखाई रती चहियै ।
जिय भावती बात सदा कहियै पन सौं मन हाथ लिये रहियै ।

- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 107 छं0 12; रसपीयूषनिधि पृ0 110 छं0 22; श्रृंगार विलास पृ0 287छं09; सोमनाथ रसपीयूषनिधि, पृ0 75 छं0 10; पृ0 95 छं0 42; पृ0 96 छं0 45; पृ0 12 छं0 12; पृ0 133 छं0 12; देव ग्रंथावली; देवमायाप्रपंच, पृ0 219, छं0 5; देव;सुखसागर तरंग: प0 179 छं0 784; भिखारीदास ग्रंथावली; श्रृंगारनिर्णय, छं0 260;मतिराम ग्रंथावली; (सतसई) छं0 156; कवि तोष और उनका सुधानिधि, सं0 सुरेन्द्रमाथुर छं0 19, प्राचीन भारतीय परम्पराओं में पत्नी को परिवार के सदस्यों के प्रति यथाशक्ति अच्छा व्यवहार करना चाहिए तथा मधुर भाषी होना चाहिए कामसूत्रम्, द्वितीय भाग, टीकाकार,गंगा विष्णु, श्रीकृष्ण, पृ0 696;मनूची;स्टोरिया द मोगोर, भाग1, पृ0 62

कभी-कभी तो इस उम्र की ननद होने से भाभी को प्यार मिल जाता है किन्तु स्नेह के साथ-साथ ही भाभी को कभी-कभी अपनी ननद की फटकार भी सुननी पड़ती है। ऐसी ननदें जो उम्र में भाभी से बड़ी होती हैं, वे अपनी छोटी भाभी को नाना प्रकार की ताड़ना देने के साथ ही उसे पारिवारिक जीवन से सम्बद्ध अच्छी बातों की शिक्षा भी दिया करती हैं। कवि के एक छन्द में नवबधू के प्रथम पुत्र के होने पर ननद उसकी रात दिन निन्दा करती है और सास क्षण-क्षण अपना रोष प्रकट करती है, किन्तु नायिका प्रथम पुत्र को गोद में लेकर खिलाने में लज्जा का अनुभव करती है। इसका वर्णन है। प्रसंग की दृष्टि से ऐसे छन्द पूर्ववर्ती श्रृंगार साहित्य में मिलना मुश्किल है। यह कवि की मौलिक उद्‌भावना कही जा सकती है :

निस दिन निंदति नंद है, छिन-छिन सासुरिसाति
प्रथम भयेसुत को बहू अंकहि लेति लजाति ।।[1]

तात्पर्य यह हैकि पुत्र होने पर बहू घर का काम-काज नहीं कर पाती और इसीलिए उसे ताने सुनने को मिलते हैं परन्तु आदर्श और लज्जाशील नारी के गुण होने के कारण वह न तो किसी बात का जबाब देती है और पुत्र कोगोद में लेने से भी हिचकिचाती है कि कहीं कोई ये न कह दे कि क्या सिर्फ तुम्हारा ही पुत्र है। कुल की मर्यादा रखने वाली ऐसी ही नारी का चित्र एक अन्य कवि ने प्रस्तुत कियाहै जिसमें देवर भाभी के साथ धृष्टता करता है वह भाभी के इतने पीछे पड़ गया कि दरबान की भाँति दरवाजे पर बैठा रहता है और

1- मतिराम: मतिराम सतसई, छं0 156

भाभी की समस्त गतिविधियों की जाँच करता है ।[1] किन्तु भाभी इस डर से कुछ नहीं कहती कि कहीं इन बातों से परिवार में कलह न हो जाये, अथवा परिवार की लाज न चली जाय निस्सन्देह पारिवारिक परिवेश में इस रूप में स्त्री का आदर्श रूप था । इन सब कर्त्तव्यों के अलावा नारी का एक महत्वपूर्ण आचरण यह स्वीकार किया गया कि यह गृह की श्रृंगार बनी रहे । कृपण जैसे धन की बाहर की हवा नहीं लगने देता, स्त्री का आचरण भी ऐसा ही होना चाहिए । यहाँ तक कि उसे देहरी लांघने की चेष्टा भी नहीं करनी चाहिए :

पति ते न करै तन बाहर औ जिमि जाहिर सूम करै न धनै ।

× × ×

कवि तोष काऊ न कबौ धरते गुनि द्वार की देहरी ना गमनै,

इस प्रकार तत्कालीन समाज में पर्दा भी नारी का एक आदर्श[1] बन चुका था । अट्ठारहवीं शताब्दी का सामाजिक परिवेश ही ऐसा था कि पर्दे की आवश्यकता अनुभव की जाने लगी थी । शासकों तथा सामंतों का कामिनी-रूप की ओर

1- देवर गाढ़ो गड़ो रहै द्वारहि जेठो खरी खिरकी में अरी है ।

- तोष सुधानिधि, पृ0 57 छं0 83

2- कवि तोष और उनका सुधानिधि, डॉ0 सुरेन्द्र माथुर पृ0 7 छं0 19; मतिराम; रसराज, पृ0 251 छं0 217: देव ग्रंथावली; सुमिलविनोद, पृ0 2 छं0 16; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 352 बर्नियर, 89

आकर्षित होना और स्त्री-संग्रह की मनोवृत्ति[1]; जिसके लिए इन्होंने एक अलग स्थान बना रखा था, जिसे हरम कहा गया है। जैसे दूषित सामाजिक वातावरण में स्त्री सुरक्षा के अभाव के कारण ही यह आवश्यक हो गया कि नारी घर में रहकर ही काम करे।

संभव है कि राजनैतिक और सामाजिक अव्यवस्था वाले इस काल में पुरूष ने ही स्त्री-विषयक धारणाओं में परिवर्तन नहीं किया अपितु स्वत: स्त्री ने ही सुरक्षा के अभाव में वाह्य-समाज के समस्त कार्यों को त्यागकर घर के सीमित अधिकारों को अपना लिया हो। इसके अतिरिक्त हमारे समाज में प्रचलित स्वातंत्र्य की विरोधी विचाराधाराओं ने भी निश्चित रूप से इन कवियों की नैतिक दृष्टि को प्रभावित किया होगा। कवियों का विचार है कि स्त्री-स्वातं:

1- स्त्री संग्रह की संख्या सहस्रों तक पहुँच जाती थी:

सोरह सहस्र पट्टरानी ओली।

– सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ० 775 छं० 56; रसपीयूषनिधि: पृ० 204, छं० 165; मतिराम ग्रंथावली; पृ० 403 – 404। पृ० 326 छं० 210; घनानंद, पृ० 585 छं० 460; बोधा: वि. वा. पृ० 177/78; स्त्री संग्रह का इतना शौक था कि हर प्रकार से नारी को वश में किया जाता था:

राखौ कैद नारीन को भय दिखाय समुझाय

– बोधा, विरह वागीश, पृ० 39;

मीर हसन अली: ऑब्जरवेशन्स आन द मुसलमान्स, पृ० 215; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक, इंडिया, पृ० 127; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 352

उसके पातिव्रत की रक्षा नहीं कर सकता :

बाल-रूप जोबँनवती, भव्य-तरूँन कौ संग ।
दोनो दई सुतंत्रता, सती होई किहि ढंग ।।[1]

परिणामत: स्त्री की रक्षा कौमार्य में पिता, यौवन में पति एवं वृद्धावस्था में पुत्र करता है ।[2]

नारी के इस प्रकार असुरक्षित होने के कारण बाल-विवाह जैसी कुप्रथा ने जन्म लिया । बाल-विवाह किस आयु में होता था इस संदर्भ में मतभेदहै। कोई बाल-विवाह के लिए चार पाँच वर्ष की आयु निर्धारित करता है, कोई सात-आठ तथा दस वर्ष, तो कोई यह विवरण देता है कि हिन्दुओं में बालक के बोलने से पूर्व ही विवाह कर दिया जाता था ।[3]

चूंकि अट्ठारहवीं शताब्दी का समाज काम प्रधान था और काम की प्रधानता केवल उच्च वर्गों तक सीमित नहीं थी, निम्न वर्गों के जीवन

1- भिखारीदास ग्रंथावली, काव्यनिर्णय, सं0 जवाहर लाल चतुर्वेदी, पृ0 469 छं0 322; देव ग्रंथावली; सुमिल विनोद, पृ0 2 छं0 16 ।

2- - बौधायन धर्म-सूत्र, चिन्न स्वामी शास्त्री, 3 /2/45 - 3/2/46, के0 एम0 अशरफ : द लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 134 ।

3- पेलसर्ट, पृ0 84 , 4=5 वर्ष की आयु, ट्रेवेर्नियर, XXIV, पृ0 181; सात-आठ; पी0 एन0 ओझा, गिलम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया 10, वर्ष, मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 54

को भी संचालिका शक्ति काम में ही संनिहित थी, फलतः इस युग के सभी लोग नारी के वश में हो जाते हैं ।[1] नारी भी कामान्धता में पर पुरुष गामी हो जाती है इसका भी उल्लेख मिलता है[2], किन्तु ऐसी स्थिति में भी पतिव्रताओं की संभावना तो मानी जा सकती है परन्तु एक पत्नीव्रत पति इस युग में अप्राप्य हो गये थे :

नारी पतिव्रत है बहुतै पतिनि व्रत नायक औ र न कोऊ ।[3]

काम की बुभुक्षा बढ़ने के कारण नारी के कोमल मनोभावों का विचार न करते हुए बहुविवाह का प्रचलन हो गया । तत्कालीन समाज में बहुविवाह तो जैसे आम बात हो गयी थी । पुरुष अपनी पत्नियों को प्रसन्न रखने में चेष्टारत है :

1- वेंकट रमण राव: रीतिकालीन काव्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ0 226, प0 227

2- कंत चौक सीमंत को, बैठो गांठि जुराइ ।
देखि परौसी कों पिया, घूँघट में मुसिक्याइ ।।
मतिराम ग्रंथावली; सतसई, पृ0 285 छं0 8;
मतिराम; रसराज, छं0 60, छं0 129: सोमनाथ ग्रंथावली, रसपंचाध्यायी, पृ0 1 छं0 48; देव- प्रेमतरंग, पृ0 2 छं0 42 ।

4- भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 40 छं0 78; देव- रागरत्नाकर, पृ0 68 छं0 36, पृ0 34 छं0 53

प्रेम जनायो मुरारि वहै बहु नारिनि में लखि प्यारी नवीनी ।

खेल रच्यौ अँखिमूदने को कहि तोष कियौ नँदलाल प्रवीनी ।[1]

बहु विवाह के बाद भी नारी को अपनी काम-तुष्टि का साधन बनाने के लिए अनैतिक- संबंधों को भी बनाया तथा प्रेम का उच्चादर्श समाप्त हो गया और नारी पुरूष के लिए भोग्या की वस्तु, या मनोरंजन का साधन बन गयी ।[2]

अनैतिक संबंधों की बढ़ोत्तरी से गणिका को जन्म दिया ।गणिका नारी के उस वर्ग को कहा गया जो धन लेकर किसी के भी साथ अनैतिक संबंध

1- कवितोष और उनका सुधानिधि सं0 सुरेन्द्र माथुर छं0 61, वही, छं0 47; मतिराम ग्रंथावली: रत्नावली, पृ0 108 छं0 3, तथा सतसई पृ02छं0 8, मतिराम ग्रंथावली : पृ0 48, पृ0 326; देव-देवसुधा, छं0 209, देव-शब्दरसायन, सं0 जानकी सिंह मनोज पृ0 117; भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगार निर्णय प्रथम खण्ड, छं0 63, पृ0 31; हेज; डिक्शनरी ऑफ इस्लाम, पृ0 314; द होली कुरान: अनुवादक मुहम्मद अली, चैप्टर 4,1, पृ0 199; कालीकिंकर दत्त, सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन, पृ0 60-61-65, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम एण्ड सेरेमनीज, पृ0 207-8 ।

2- प्रेम चरचा है, अरचा है, कुछ नेमन रचा है चित और अरचा हैचितचारी को।
छोड़ यो परलोक नरलोक बरलोक कहा हरख न सोख न अलोक नरनारी को

- देव प्रेमतरंग, पृ0 2 छं0 4,

मतिराम ग्रंथावली: रसराज, छं0 60, छं0 129; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ, हिन्दुस्तान ।

बना लेती है :

गणिका गनै न सत असत चाहै धनी उदार ।[1]

इस प्रकार समाज में स्त्री का (गणिका) यह रूप अत्यधिक प्रबल हो गया था । यद्यपि वेश्यावृत्ति की निंदा की गयी है गणिका को विश्वास पात्र न बनाने का परामर्श दिया गया है [2] पुरूष को वश में करके धन हरण करने वाला तथा समाज मे सौत के सदृश बताया गया, पुरूष की सामाजिक प्रतिष्ठा करने वाला कहा गया इतना सब कुछ होते हुए भी उसके हानि पर ध्यान न देते हुए पुरूष प्राचीन काल मे ही गणिका को सर्वसाधारण उपयोग की वस्तु समझता रहा तथा बाजारू वस्तुओं के सदृश उन्हें भी जो चाहे धन दे कर खरीद

1- देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 2 छं0 2, देव-प्रेमतरंग , पृ0 2 छं0 42; धन के रूपमें गहने भी लेती थी -गणिका आवति प्रीतमहि मन मन करति विचार।
लैहो कंकन कनक के बस करि भौंह बिलास ।।
- सोमनाथ: युक्तितरंगिणी, छं0 287; रसपीयूषनिधि पृ0 115 छं0 17; ~~छं0 287~~, तोष, सुधानिधि पृ0 63, मतिराम पृ0 142-143 (गहने न गढ़ाने पर रूठ जाती है), मतिराम ग्रंथावली पृ0 291 , के0 एम0 अशरफ :लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान , पृ0 227

2- बिस्या की प्रीति पलीत की मेवा।
-बोधा ग्रंथावली(बिरही-सुभान दंपति-विलास)
सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 94, शकुन्तला अरोरा (रीतिकालीन ...श्रृंगार .... पृ0 138)

सकता था ।[1]

सामान्यत: गणिका की जो परिभाषा कवियों ने दी है, उसमें धन की इच्छा को ही उसकी मूल प्रेरणा कहा है।[2] उस युग के परिवेश पर दृष्टिपात करते हुए यह कारण स्वत: स्पष्ट है। निस्संदेह, मुगल काल भारतीय इतिहास में वैभव का युग था तथापि आंतरिक रूप से वह पर्याप्त जर्जर हो चुका था। वेश्यावृत्ति का शिकार सामान्य और निम्न वर्ग का स्त्री समाज ही होता था । इस प्रकार धन और संरक्षण काअभाव इस व्यवसाय को अपनाने केलिए विवश करता होगा क्योंकि तत्कालीन समाज-व्यवस्था में समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग आर्थिक अभावों से पीड़ित था । जिस आर्थिक विषमताके कारण गणिका जीवन का सूत्रपात होता था, वही आर्थिक व्यवस्था की विषमता को इससे बढ़ावा भी मिलता था। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि गणिकाएं आर्थिक व्यवस्था का परिणाम थीं और कारण भी ।[3]

1- देव ग्रंथावली; रसविलास, पृ0 2 छं0 19; पृ0 4छं0 17; पृ02 छं0 2; प्रेम-तरंग;, पृ0 2 छं0 45, सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगारविलास पृ0 6 छं0 8; महाकवि शूद्रक, मृच्छकटिकम्, डा0 रमाशंकर त्रिपाठी, पृ0 5/[illegible] 9; चाणक्य, कौटिलीयं अर्थशास्त्रम्, सं0 रामतेगशास्त्री, 2/, 26

2- धन दै जाके संग में रमै पुरूष सब कोइ ।
ग्रंथन को मत देखिये गनिका जानहु सोई ।।
मतिराम-रसराज, पृ0 221 छं0 94; पृ0 291 छं0 94, वही

3- डॉ0 शकुन्तला अरोरा; रीति कालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 132-133

दासी:- नारी का सबसे विवश रूप दासी के रूप में दिखाई पड़ता है।

दासी सेवक होती थी जिसे अपने स्वामी का हर दुर्व्यवहार सहन करना पड़ता था।

> बनिता को बस कहा पुरुष अपलोक लगावै।
>
> सेवक को बस कहा गुसा साहिब फुरमावै।[1]

स्त्री के अन्य रूप: नारी के गृहस्थिक रूप का चित्रण तो मिलता है जैसा ऊपर किया जा चुका है, परन्तु समाज में नारी का क्या स्थान है इस विषय पर कवि मौन हैं। सामान्यतः घर से बाहर निकलने का अधिकार तो उसे नहीं दिया गया। परन्तु कुछ निम्नवर्गीय नारी पात्र हैं जो जीविकोपार्जन में सक्रिय थीं यथा:

तमोलिन - ऊँची दुकान पै बेंचत पान, तमोलिन प्रानन ऐंचति बैठी।[2]

हलवाइनि - हाट के ऊपर हाटक बेलि सी, बैंचति है हलुआ हलवाइनि।[3]

1- बोधा, विरह-वारीश पृ0 77 छं0 8, सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 775, छं0 56, पृ0 649 छं0 20, माधवविनोद पृ0 347 छं0 110, पृ0 351 छं0 1, पृ0 351 छं0 2, पृ0 351 छं02, पृ0 351 छं0 8, भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 41 छं0 247, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज़, पृ0 56।

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 92 छं0 269, एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 249

3- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 270, वही

बनीनी – चूनरि सुरंग, अंग ईंगुर के रंग देव, बैठो परचूनी की दुकान पर चूनो मी ।[1]

नाइन – औरन के पाइन दियो नायनि जावक लाल[2]।

इनके अतिरिक्त स्त्री के जौहरिनि, छीपनि, पटइनि, सुनारिन, गंधिनि तेलिनि, कुम्हारिन, दरजिन, जुलाहिन, मोचिनि, बढ़ईनि, लुहारिनि, ब्राह्मणी, खजानि अहीरी, भीलनी, आदि विभिन्न रूपों का उल्लेख मिलता है ।[3]

प्राचीन युग की आदर्श स्त्रियों का अनुकरण –

हिन्दू समाज सदैव से सीता और पार्वती सती–सावित्री आदि का अनुकरण करने वाली पतिव्रताओं की चरणरज से पवित्र होता रहा है। पतिव्रता नारी के आदर्श के लिए इस काल में भी प्राय: सीता पारबती तथा सती के उदाहरण दिये गये हैं :

1– देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93, छं0 271, वही

2– मतिराम, रसराज, पृ0 223 छं0 103, भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश पृ0 29 छं0 203; वही ।

3– विस्तृत विवरण, भिखारीदास ग्रंथावली; रससारांश, पृ0 30, 32; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 91– 94; भूषण ग्रंथावली, पृ0 55 छं0 169; एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 249,

भाग की भूमि सोहाग को भूषण राजसिरी निधि लाजनिवासू ।
आदिये मेरो दुहूँ कुल दोपक धन्य पतिव्रत प्रेम प्रकासू ।
लंक ते आई निसंक लिये सुख सर्वसु बारति कौशिलासासू ।
पाइनि पै ते उठाई सिमै हिय लाइ बलाइ लैपोंछति आँसू ।।[1]

बहुविवाह को एक सबसे बड़ी हानि यह थी कि एक पति की मृत्यु हो जाने से एक साथ उसकी कई पत्नियों को विधवा होना पड़ता था। चूँकि तत्कालोन समाज में सुरक्षा की स्थिति का अभाव था परिणामत: सती[2] (जौहर) जैसी कुप्रथा ने जन्म लिया ।

1- देव; भवानी विलास- पृ0 8 छं0 46;
मनसा बाचा कर्मना करि कान्हर सौ प्रीति।
पारबती सीता सती रीति लई तू जीति ।

- भिखारीदास ग्रंथावली; रससारांश प्रथम खंड
छं0 22

2- देव- सुखसागर तरंग छं0 320 ;कालीकिंकरदत्त; सोशल एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी,, पृ0 64-66; मनूची स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ0 57

नारी की दिनचर्या तथा रहन - सहन -

भारतीय समाज में नारी का कार्यस्थल और लीलाभूमि प्राय: घर ही रहा है चाहे वह पिता का हो या पति का । कवियों ने स्त्रियों की दिनचर्या में नारी को घर के सारे काम, यथा रसोई करती हुयी, किसी को आंख में अंजन लगाते दिखाया है तो दूसरी को पाँव में महावर देते । कोई उत्साह पूर्वक स्नान करने के लिए गयी है और उसके वस्त्र से पानी टपक रहा है तो किसी ने हाथ में पान का बीड़ा ले रखा है । कोई हाथ में मथानी लिए रह जाती है तो कोई सनी हुयी मिट्टी छोड़कर चल देती है । एक हाथ में लोई लिए चली आती है दूसरी के हाथ गोबर से भीगे हुए हैं ।[1]

1- दृग एक अंजन आँजि के एकै महावर देत बिसरे ।
एकै लिये कर में बीरी तेहू बने नहि खात ।
एकै कर मेंलिये मथानी एकै छोड़ै माटी सानी
एकै लोई कर में लीने एकन कै कर गोबर भीने ।

- बोधा - विरह वागीश, पृ0 35

देव-भावविलास, पृ089, मतिराम ग्रंथावली पृ0 184, छं0 138;
ए0 एस0 अल्तेकर: द पोजीशन आफ वीमेन, पृ0 396 ।

नारी के वस्त्र :

तत्कालीन समाज में रंग बिरंगी तथा विभिन्न प्रकार की साड़ियों का प्रयोग नारी परिधान के रूप में करती थीं।

1- देव भावविलास, पृ0 69 छं0 111; देव-प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; देव- राग-रत्नाकर, हरी सारी जरतारी को पृ0 15छं0 62; पृ0 3 छं0 10; पृ0 4 छं0 12; पृ0 4 छं0 13-14; पृ05 छं0 18; पृ0 5 छं0 19; पृ0 6 छं0 21, 22; पृ0 8 छं0 29, 31; पृ0 9 छं0 33; पृ0 9 छं034; पृ0 14, छं0 46; पृ0 12 छं0 49; पृ0 20 छं0 95; पृ0 20 छं0 91; पृ0 20 छं0 92; पृ0 20 छं0 93; पृ0 16 छं0 68; पृ0 16 छं0 65; अष्टयाम: पृ0 16 छं0 6; पृ0 16 छं0 5; पृ0 8 छं0 9; देव-सुजान विनोद, पृ0 34 छं0 18; पृ0 47 छं0 5; पृ0 52 छं0 26; पृ0 52 छं0 27; केसरि को रंग सारी पृ0 63 छं0 6; पृ0 64 छं0 10; देव सुखसागर, तरंग पृ0 22छं0 67; सूहो साड़ी (लाल रंग) पृ0 91, छं0 263; पृ0 76, 283; सारी छपाऊ पृ0 99 छं0 286; शाल की सारी पृ0 105 छं0 303; मतिराम सतसई; पृ0 511 छं0 592; केसरि रंग की सारी, पृ0 346 छं0 280; मतिराम; रत्नावली: सारी सुही, पृ0 96 छं0 168; रसराज, पृ0113 छं0 271; आलम-आलमकेलि: पृ0 9 छं0 20; पृ0 26 छं0 61; सारी सेत पृ0 31 छं0 71; कुसुंभी सारी पृ03 5 छं0 81; पृ0 38 छं0 90; झीनी सारी, पृ0 38छं0 9; पृ0 93 छं0 91; भिखारीदास ग्रंथावली; लालसारी, पृ015 छं0 83; पृ0 18छं0 115; पृ0 20 छं0 134; पृ 21 छं0 135; पृ0 356 , 240; सारी महीन पृ0 100 छं0 50; 145 छं0 253; सेत सारी पृ0 105 छं0 70; केसरिया सारी पृ0 119, छं0 139; भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड 2, बंधनी सारी पृ0 125 छं0 14; पृ0 106 छं08; पृ0 131 छं0 48; पृ0 139 छं0 40; पृ0 143 छं0 17; सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि पृ0 172 छं0 15; श्रीमती जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स, एण्ड टेक्सटाइल्स आफइंडिया पृ0 39; इस्लामिक कल्चर क्वाटरली, पृ0 19, 59, पृ0 64, 13; ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 13; ट्रेवेर्नियर, ट्रवेल्स इन इंडिया भाग 2, पृ0 125; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 34।

स्त्रियाँ साड़ी के एक छोर को कमर में खोंस लेती थी तथा दूसरे छोर को कंधे से ले जाती हुयी सिर को ढँक लेती थीं जो घूँघट निकालने में सहायक होता था :

जरतारी सारी ढ्के नैन लसति मतिराम ।

मनो कनक पंजर परे खँजरोट मतिराम ।[1]

तत्कालीन समाज में साड़ियों के विभिन्न प्रकार के साथ किनारीदार साड़ी का बहुत प्रचलन था, जिसके किनारे कढ़ाई से युक्त होते थे या सजे हुए होते थे (लेस आदि लगाकर) और कोरों पर मोती झुग्गे तथा झालरि आदि लटकते रहते थे :

कंचन किनारी वारी सारी तासकी में, आस पास झूमी

मोतिन की झालरि इकहरी । [2]

स्त्रियाँ अधिकांशतः चमकीले तथा गाढ़े रंगों का प्रयोग अधिक करती थीं जैसे लाल रंग ।[3]

1- मतिराम -सतसई पृ0 408 छं0 480; देवग्रंथावली : शब्दरसायन, पृ0 7 छं0 70 थैवनॉट, चैप्टर ,XX, पृ0 39,

2- देवग्रंथावली :सुखसागर तरंग, पृ0 71 छं0 146; रसविलास: पृ0 197 छं0 34; भाव विलास, पृ0 123, देव ग्रंथावली, पृ0 96 छं0 52; शब्दरसायन, पृ0 7, छं0 70; मतिराम: ललितललाम, पृ0 346 छं0 280; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 172, छं0 15; इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जनवरी 1960, पृ0 113,

3- मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341, श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 39

कटि से ऊपरी भाग को ढंकने के लिए नारी अनेक प्रकार की कंचुकी, अंगिया तथा चोली का प्रयोग करती थी ।[1] इन वस्त्रों का प्रयोग अमीर तथा गरीब दोनों वर्गों में समान रूप से होता था [2] अंतर सिर्फ वस्त्रों की बहुमूल्यता का होता था

1- आलम- आलमकेलि संग्रह, कंचुकी पृ0 123 छं0 298; कंचुकी, नील पृ0 124 छं0 305,' कंचुकी, कुमारमणि; रसिक -रसाल पृ0 77 छं0 49,' पृ0 92 छं0 104; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद पृ0 505 छं0 33,' रसपीयूष-निधि, एकादशतरंग, पृ0 97 छं0 52,' पृ0 103 छं0 72 ; पृ0 96 छं0 48,' कंचुकी लाल पृ0 215 छं0 270,' देव; रागरत्नाकर, सित कंचुकी पृ0 9 छं0 35, नील कंचुकी पृ0 6 छं0 21,' कपूर सी कंचुकी पृ0 9 छं0 34,' कंचुकी लाल पृ0 12 छं0 47,' कंचुकी पीत पृ0 15 छं0 60,' पृ0 18 छं0 75; पृ0 20 छं0 91; सुखसागर तरंग, लाल कंचुकी पृ0 77 छं0 223,' कंचुकी बंद, पृ0 79 छं0 230 ; पृ0 86 छं0 249,' पृ0 96 छं0 278,' पृ0 97 छं0 283 ; भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड 1 देव सुधा 141 / 122 , 154/90 , 100/107 ; कंचुकी बंद पृ0 64 छं0 451 ; भिखारीदास ग्रंथावली खण्ड2, कंचुकी, बाफ्ते पृ0215 छं0 91; कंचुकी नीली पृ0 248 छं0 21; मतिराम; रसराज, पृ0 41 छं0 30,' पृ0 70 छं0 112,' पृ0 109 छं0 258,' तोष-सुधानिधि, कंचुकी लाल पृ0 98 छं0 286; जरतारी की कंचुकी पृ0 103 छं0 303 ,' "अंगिया"-देव, प्रेम चन्द्रिका जारीदार अंगिया, पृ0 35 छं0 23,' राग रत्नाकर, आँगी लाल पृ0 11 छं0 46,' आँगी सुरंगित पृ0 12 छं0 49,' पृ0 16 छं0 74; पृ0 20 छं0 95,' सुखसागर तरंग, छीर की आँगी, पृ0 99 छं0 286; अंगिया नीली पृ0 104, छं0 301; आलम-आलमकेलि, सेत आँगी, पृ0 35 छं0 81,' झीनो आँगी पृ0 37 छं0 86; अंगिया सित झीनी, पृ0 125 छं0 306; तोष-सुधानिधि पृ0 103 छं0 302; "चोली" भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड1, पृ0 145 छं0 255; देव; सुखसागर तरंग, चोली की गांठ, पृ0 92 छं0 268,' थैवेनॉट इंडियन ट्रैवेल्स पृ0 53, (कमर तक पहने जाने वाले चुस्त वस्त्र थे जो ब्लाउज का काम करते थे, -जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37, कमरतक कंचुकी का वर्णन आइन-एअकबरी, भाग 3, अनुवादक जैरेट, में भी मिलता है पृ0 343 स्टैवोरीनिस भाग 1, पृ0 415; गोस भाग 1, पृ0 142-143

2- मनूची: स्टोरिया द मोगोर पृ0 341, बर्नियर, पृ0 272 , आइनए अकबरी, भाग3, अनुवादक, जैरेट पृ0 311-12

कटि से नीचे पहने जाने वाले वस्त्रों में स्त्रियाँ पायजामा (शलवार) लहंगा तथा घाघरा आदि पहनती थीं।[1]

1- लसति गूजरी ऊजरी बिलसति लाल इजार।
हिये हजारनि के हरे, बैठी लाल बजार।
- मतिराम, सतसई पृ0 389 छं0 253; (यहाँ इजार का तात्पर्य तंग मुहरी के पायजामे से है), रसराज पृ0 221 छं0 96; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 8 छं0 5; पृ0 9 छं0 6; (अधिकांशतः ये मुस्लिम औरतें पहनती थी), मुहम्मयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 40, डेला वेली पृ0 414; मैन्डल्सो पृ0 50 पृ0 63; टेरी पृ0 202-203; आईन; अनु0 एच0एस0 जैरेट, जिल्द 3, पृ0 312।

'लहँगा' - लहँगा सुरूख धनवाँ को
- तोष-सुधानिधि पृ0 98 छं0 286; पृ0 103 छं0 303; देव: सुखसागर तरंग, लाल लंहगा, पृ0 101 छं0 294; आलम-आलमकेलि, पृ0 21;

'घाघरा': एड़िन ऊपर घूमत घाघरे
- देव: सुखसागर तरंग पृ0 103 छं0 303; पृ0 104 छं0 301; पृ0 74 छं0 215; रसविलास पृ0 226 छं052; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड1, पृ0 119 छं0 138; पृ0 144 छं0 252; पृ0 145 छं0 253; तोष सुधानिधि, पृ0 21 छं0 67; पृ0 103, छं0 302; पृ0 141 छ0 418; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 642 छं0 100; ए. इ. आई. कुच: - अठारहवीं शती के अंत में बना चित्र जिसमें स्त्री को घाघरा पहने दिखाया गया है। चित्र नं0 670; श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्साइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 27; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 314; आईन-भाग 3, जैरेट, पृ0 314, (भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) राधा-कृष्ण गुलेर, लगभग 1760 ई0 राधा का लंहगा पहने दिखाया गया है। (लल्लनराय के प्रबन्ध में चित्रफलक 12 पर) अंसारी: द हरम आफ द ग्रेट मुगल्स, इम्परर्स 1960 पृ0 112-113,

उत्तरीय वस्त्रों को विभिन्न नामों यथा-ओढ़नी, चादर, निचोल, अंचल, चूनर आदि से अभिहित किया गया जो विभिन्न प्रकार के वस्त्रों की तथा विभिन्न रंगों की होती थीं।[1] उत्तरी वस्त्रों से सिर भी ढका जाता था तथा साड़ी की भाँति इन वस्त्रों मे घूँघट भी निकाला जाता था।[2]

1- "ओढ़नी", सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, (प्रथमोल्लास) पृ0 502 छं0 8; रसपीयूषनिधि, पृ0 152 छं0 5; देव: सुखसागरतरंग, पृ092 छं0 278; नीली ओढ़नी पृ0 101 छं0 294; लाल ओढ़नी, पृ0 104 छं0 301; देवसुधा पृ0 164; भिखारीदास, ग्रंथावली; खंड 1, चाँचरि चारू आसवरि ओढ़नी, पृ0 54; छं0 380; कपूर धूर की ओढ़नी पृ0 99 छं0 46; देव-सुजान-विनोद, रेसमी सतूल साल, (साल का तात्पर्य एक विशेष प्रकार की मोटी चादर से बताया है); देव-सुजान विनोद अरून निचोल पृ0 55, छं0 37; मतिराम ललितललाम, पृ0 91; तोष:सुधानिधि, अंचल, पृ0 31 छं0 93, पृ0 59 छं0 171; पृ0 123 छं0 362; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1 अंचल पृ0 47, छं 0324; देव: राग रत्नाकर, चूनरी सुरंग, पृ0 7छं0 27; चूनरी राती पृ0 15 छं0 60; सुजानविनोद, चुनि चूनरी, लाल पृ0 35, छं0 22; चूनरी चुनि पृ0 51छं0 124; पृ0 50 छं0 55; चूनरि सुरंग, पृ0 78, छं0 24; सुखसागरतरंग, चूनरि सुरंग, पृ0 93 छं0 270; चटकीली चूनरि पृ0 96 छं0 278; मतिराम; रसराज, पृ0 75 छं0 141; तोष सुधानिधि, नील निचोल की चूनरी पृ0 11 छं0 26; चूनरि खासे की, पृ0 119 छं0 350; आलम-आलमकेलि, पृ0 117 छं0 277; निकोलाई-मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 341; बर्नियर पृ0 272; श्रीमती जमीला बृजभूषण:कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया पृ0 46; भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविधालय से प्राप्त राधा-कृष्ण गुलेर लगभग 1760 ई0 में राधा को चादर ओढ़े दिखाया गयाहै। (लल्लनराय के प्रबन्धकाव्य रीतिकालीन , चित्रफलक12 से उद्धृत), आईन-ओढ़नी जैरेट, पृ0 342

2- पृ0 342, डॉ0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, प्राचीनभारत के कलात्मक विनोद पृ0 92, (इसमे घूँघट प्राचीन समय से ही था, कालिदास द्वारा रचित शाकुन्तलम् में शकुन्तला को चादर से ढकी हुयी घूँघट निकाले हुए दिखाया गया है) चूनर से घूँघट, श्रीमती जमील बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडियापृ0 38; सिर पर ओढ़नी चूनरआदि से घूँघट; भारतकला भवन से प्राप्त चित्र स्नान, दृश्य मुगल शैली, का 1750ई0 सौन्दर्य की लौ शाह आलमकालीन चित्र 1725 ई0चित्रफलक 9-11 राधा किशनगढ़ शैली का चित्र 1700-1850

स्त्रियाँ जूती पहनती थीं ये जूतियाँ सभी दुर्गों में होती थी :

हाथ हरी हरी छाजै छरी अरू

जूती चढ़ी पग फूँद फुँदारी ।[2]

स्त्रियाँ मोजे नहीं पहनती थीं ।[3]

स्त्रियों के आभूषण -

शारीरिक सौन्दर्य की वृद्धि अथवा शरीर को सुसज्जित करने की दृष्टि से आभूषण[4] को स्त्रियाँ बहुत महत्वपूर्ण वस्तु मानती थीं । आभूषण के आकर्षण केलिए यह कहा गया कि स्त्री आभूषण के प्रति इतना आकर्षित रहती थी कि सुनार सदैव आभूषण बनाने में व्यस्त रहते थे किन्तु अधिकांशत: बहुमूल्य गहने राजकुमारियों आदि के लिए बनता था ।[5]

1- "जूती" भूषण ग्रंथावली पृ0 8 छं0 5; पृ0 5 छं0 63; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303; पृ0 96 छं0 278; रसविलास; पृ045 छं0 15; भाव विलास, पृ0123; भिखारीदास ग्रथावली, खण्ड 1, पृ0 54, छं0 380; पृ0 145 छं0 252; थैवनॉट पृ0 52; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 1, पृ0 193; पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ़ इन मुगल इंडिया, पृ0 14,

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303; भिखारी दास ग्रंथावली: पृ0 145 छं0 252; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1, पृ0 54 छं0 380, वही ।

3- मिसेज मीर हसन अली-" ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 80

4- मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41

5- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 339-40

आभूषण का क्रम सिर से शुरू होकर पाँव तक चलता है । शिरोभूषण के अन्तर्गत नारियाँ शीसफूल , सिरफूल, टीका, माँगमोती आदि धारण करती थी ।[1]

"शीसफूल"

1- सोमनाथ ग्रंथावली: व्रजेंदविनोद, पृ0 503 छं0 50, देव ग्रंथावली: राग रत्नाकर पृ0 7 छं0 27, सुजान विनोद पृ0 47 छं0 5, शब्द-रसायन, पृ0 7 छं0 70, आलम-आलमकेलि, पृ0 31 छं0 22; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317; आईन-भाग 3, जदुनाथ सरकार पृ0 343; 'सिरफूल,' तोष-सुधानिधि, पृ0 97 छं0 273; देव: सु. तरंग, पृ0 83 छं0 243, पृ0 84-छं0 243, मनूची ; स्टोरिया, द मोगोर, भाग 2 पृ0 317; 'टीका'- सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 503 छं0 49, जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स का चित्र सं0 4; आईन- जैरेट, जिल्द 3, पृ0 312; "माँगमोती" भिखारीदास ग्रंथावली, माँग भरी मोती, पृ0 145 छं0 255, देव: सुखसागरतरंग पृ0 83 छं0 241, सुजानविनोद पृ0 52 छं0 27, जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ...., राजस्थानी फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी चित्रफलक । तथा 4,

माथे के आभूषण में थिंदुली (बेंदी) तथा बेंदा का उल्लेख मिलता है।[1]

नारी को आभूषण इतने प्रिय थे कि वह शरीर के प्रत्येक अंग में इसे धारण करती थी फलतः वह केशों को भी आभूषण से सुसज्जित रखती थी :

केसनि में छाई छवि फूलन के वृन्दकी ।[2]

कर्णाभूषण-कर्णाभूषण में विभिन्न प्रकार के कुण्डल विशेष प्रिय होने के साथ-साथ

1- आलम-आलमकेलि - "जराऊको बिन्दु" पृ० 146 छं० -; देव: शब्द-रसायन, पृ० 70 छं० 42; सुखसागर तरंग पृ० 83 छं० 241; "बेंदा" ललित लाल बेंदा लसै बाल भाल सुखदानि ।
दरपन रवि-प्रतिबिंब लौं दहै सौति अँखियानि ।

- भिखारीदास ग्रंथावली: रस सारांश पृ० 76 छं० 518; छंदार्णव, पृ० 223 छं० 9, देव-सुजानविनोद पृ० 47, छं० 5; वही, पृ० 51, चित्र सं० 3, 4 पृ० 58 चित्र सं० 1, निकोलाई मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 317

2- मतिराम: रसराज, पृ० 64 छं० 103; ललितललाम, पृ० 89 छं० 100; देव ग्रंथावली: पृ० 110 छं० 92; गौस, भाग 1, पृ० 143; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम एण्ड सेरेमनीज, पृ० 342 ।

लुरकी कर्णफूल , झुमका , तरुयौना तथा बीर नामकआभूषणकानों में पहने जाते थे ।[1]

1- कनक मेखला पहिरे नारी, कानन सोहत कुंडल भारी ।

-सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंद्रविनोद पृ0 708 छं0 24,"तोष सुधानिधि , पृ0 60 छं0 173; पृ0 112 छं0 331; कुण्डल मकर पृ0 260 छं06;मतिराम; रसराज, पृ0 120 छं0 297," पृ0 123 छं0306; ललितललाम, पृ0 62 छं0 76; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश कुण्डल मकरवारे पृ0 38 छं0 256;, पृ0 85 छं0 581; पृ0 90 छं09; हेमिल्टन , भाग 1, पृ0 163; थैवनॉट, भाग 3, पृ0 37, अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114, लुरकी मोतिन की लुरकीन , देव; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 243; निकोलाई मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2, पृ0 317; 'कर्णफूल' आलम-आलमकेलि, सुखिफूल पृ0 9 छं0 20; भूषण ग्रंथावली पृ0 252 ; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12, मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317; जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, मेल एण्ड फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स पृ0 60, चित्र सं0 4; थैवनॉट भाग 3, पृ0 37, अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल पृ0 114; 'झुमका' सोमनाथ ग्रंथावली :शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9; मासीर -ए- आलमगीरी, अनुवादक, जदुनाथ सरकार पृ0 93; बर्नियर पृ0 223-224 ; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 339 -340; 'तरयौना' देव-शब्दरसायन पृ0 67 छं0 70; सुजानविनोद पृ0 10 छं0 19; मतिराम; रसराज, पृ0 13 छं0 31; सोमनाथ ग्रंथावली; श्रृंगार विलास, पृ0 305 छं0 44; सुजानविलास, पृ0808 छं0 17, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 317; 'बीर' आलम-आलमकेलि, पृ031, छं0 73, देव-रागरत्नाकर पृ0 6 छं0 23, सुखसागर तरंग पृ0 83 छं0 239, सुजान विनोद, पृ0 47, छं0 5, मनूची; स्टोरिया द मोगोर , भाग2, पृ0 339-340 मासीर-ए-आलमगीरी; अनुवादक, जदुनाथ सरकार , पृ0 93, बर्नियर पृ0 223-224

नासिका भूषण में नारी के प्रिय आभूषण बेसर नथ, नथुनी, झुलनी तथा लटकन आदि थे। जिनमें विभिन्न प्रकार के रत्न मोती लगे होते थे :

अधर सुरंग भूमि नृपति अनंग आगे
नृत्य करे बेसर को मोती नृत्यकारी है।[1]

---

1 बेसर आलम–आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; पृ0 12 छं0 29; पृ0 35 छं0 31; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि पृ0 126 छं0 12; शशिनाथ विनोद; पृ0 504 छं0 12; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 22 छं0 28; मतिराम: ललितललाम, पृ0 348 छं0 288; देवग्रंथावली; सुखसागरतरंग पृ0 61, छं085; पृ0 87 छं0 237; बेसरि को मुक्ता 81/236; भावविलास, पृ0 84 छं0 26; डोलेट अंसारी पृ0 81; अंसारी भाग34, हरम आफ द ग्रेट मुगल इम्परर्स पृ0 114; आइन-ए-अकबरी, जैरेट, जिल्द 3 पृ0 313; थैवनॉट पृ0 37; 'नथ' देव-ग्रंथावली; प्रेमचन्द्रिका, मोती नथ, पृ0 35 छं0 23; शब्दरसायन, पृ07छं070; रसविलास, पृ0 273 छं0 26; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 248छं0 21; भारत कला भवन, काशी विश्वविद्यालय से प्राप्त चित्र राधा किशनगढ़ शैली, 1700–1850 ई0 के मध्य (लल्लनराय के प्रबन्ध काव्य से), डोलेट पृ0 81; थैवनॉट पृ0 37; अंसारी; भाग34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल इम्परर्स पृ0 114; 'नथुनी' – तोष-सुधानिधि, मुक्ता नथुनी में, पृ098, छं0 286; मतिराम; रसराज, पृ0 282 छं0 358; ललितललाम, पृ0 346 छं0 280; प0 314 छं0 86; सतसई, पृ0 395 छं0 326; पृ0 373 छं0 50; रत्नावली पृ0 42 छं081; सोमनाथ ग्रंथावली पृ0502 छं0 9; निकोलाई मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 317; 'झुलनी' तोष-सुधानिधि, पृ0 61 छं0 178; 'लुरकी' देव सुखसागर तरंग पृ0 81 छं0 226; लटकन देव सुजानविनोद पृ0 57 छं0 42,

कंठ के आभूषण में विभिन्न प्रकार के हार, मालाएं आदि पहनी जाती थी जिसमें पुष्पाहार मोती के हार तथा रत्नजटित हार मुख्य थे :

कंचन पंचलरा गज मोती हरा ।[1]

1- भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 98 छं0 43; 105 छं0 65; गुलीक हार पृ0 47, छं0 335; मुक्ताहार पृ0 112 छं0 104; पृ0 144 छं0 252; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, मुक्ताहल केहार, पृ0 77 छं0 53; मोतिम हार पृ0 186 छं0 68; मतिराम: रसराज, पृ0 60 छं0 93; सतमई, गुंज के हार, पृ0 72 छं02; चन्द्रहार, पृ0 364 छं0 134; तोष सुधानिधि, पृ0 16 छं0 53; पृ0 31 छं0 99; मोतिन को हार 51 छं0 152; हीरन को हार पृ0 103 छं0 302; घनानंद ग्रं0पृ0 13 छं0 36; आलमकेलि, पृ0 7 छं0 16; पृ0 15 छं0 33; देव- रागरत्नाकर पृ0 8 छं0 29; सुजानविनोद, मोती नग हीरन हार, पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; पृ079 छं0 25; अष्टयाम पृ0 1 छं04; पृ0 18 छं0 10; सुखसागर तरंग, चंद्रहार पृ0 77 छं0 223; पृ078 छं0 226; हरा घुंघचीन के पृ0 105 छं0 303; पुष्पाहार, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 95 छं0 42; पृ0 85 छं0 9; मतिराम: ललितललाम पृ0 351 छं0 313; रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; पृ0 54 छं0 84; 75 छं0 127; देव ग्रंथावली: रस विलास पृ0 202 छं0 24; मआसीर-ए आलमगीरी अनुवादक जदुनाथ सरकार, पृ0 93; मनूची: स्टोरिया दमोगोर, पृ0 317, 339-340; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 343; अंसारी, हरम आफ द ग्रेट मुगल, भाग34, पृ0114; आईन भाग3, 313; बर्नियर पृ0268; पेलसर्ट पृ0 25 (पुष्पाहार) डोलेट पृ081; बर्नियर पृ0 223; 'माला' देव सुजानविनोद, मनिमाल पृ060, 54; तोष-सुधानिधि माला मुक्ताकी पृ0 89, छं0259; मुक्तानि पृ0 63, छं0 182; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, मोतीमाल पृ0 102 छं0 36; भिखारी ग्रंथावली । मुकुतमाल पृ0 15छं080; सोमनाथ ग्रंथावली, पंचलरी पृ0505 छं0 33; आल पंचलरीपृ0 306, 70; 'कंठमाल' भिखारी ग्रंथावली पृ0 145 छं0 252; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, कंठमाल, पृ0 612 छं0 123; मनूची: वही, लल्लनराय के प्रबन्धकाव्य: रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, चित्रफलक 17, विभिन्न प्रकार के हार मालाएं हैं; अग्रोला बृजभूषण: कास्टयूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 60 चित्र 1 तथा 4,

हाथ को बाजूबंद पहुँची कंगन चूड़ी तथा विभिन्न प्रकार की अंगूठियों से सुसज्जित करती थीं।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 329 छं0 75; शशिनाथविनोद (प्रथमोल्लास) 505 छं0 33; देव: सुखसागर तरंग पृ0 97 छं0 283; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; 'पहुँची' भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 85 छं0 581, 1/85 तोष: सुधानिधि हीरन को पहुँची, पृ0 51 छं0152; पृ0 63 छं0 182; घनानंद ग्रं.पन्नन को पहुँची छं0 37 छ0 17; 'कंगन' भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; काव्यनिर्णय पृ0 130 छं0 42; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 502 छं0 44; माधवविनोद 469 छं0 104; पृ0 329 छं0 76; सुजानविलास पृ0 642 छं0 92; देव: देवचरित्र पृ0 17 छं0 83; रसविलास, पृ0 237 छं0 28; राग रत्नाकर, पृ0 3 छं0 10; भाव विलास, पृ069; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, पृ0 130 छं0 42; 'चूड़ी' देव: सुखसागर तरंग, कांच कंचन रतन चुरी पृ0 79 छं0 228; सुजान विनोद, पृ0 1 छं0 2; पृ0 52 छं0 27; पृ0 60 छं0 59; अष्टयाम 24/16; तोष: सुधानिधि पृ023 छं0 70; पृ0 58 छं0 170; 'अंगूठी' कुमारमणि: रसिकरसाल पृ0 85 छं0 75 सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 510 छं0 110; माधवविनोद पृ0 329 छं0 77; देव: सुखसागर तरंग, दर्पन की मुँदरी पृ0 छं0 13 छलनि (मणिकुंदन) पृ0 79 छं0 228; पृ0 79 छं0 229; मतिराम: सतसई, छला 152 छं0 120; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, छला पृ0 26 छं0 175; मआसीर-ए-आलमगीरी: अनुवादक सरकार, पृ0 93; बर्नियर पृ0 223-224; कैरी भाग 3, पृ0 252; डीलेट पृ0 81 मैन्डल्सो, पृ0 50; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 239-340; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया; अंसारी: भाग 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल्स, पृ0114; इरफान हबीब, पृ0 99; थैवनॉट 53; पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

स्त्रियाँ कटि के आभूषणों में किंकिणी रसना, मेखला आदि धारण करती थीं ।[1]

1- देव: सुजान विनोद, पृ0 61 छं0 59; "किंकिणी," सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ068 छं0 43; पृ0 67 छं0 38; श्रृंगार विलास, पृ0 282 छं0 38; 283 छं0 42 ; माधव विनोद, 415 छं0 33; रामचरित्र रत्नाकर 173 छं0 18; ब्रजेंद विनोद, किंकिणी, 501 छं0 40; देव: देवचरित्र, पृ0 7 छं0 21; भाव विलास, पृ0 91 छं0 63; पृ0 43, छं0 18; चतुर्थ भाव विलास, पृ0 110 छं0 4; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 218; पृ0 79 छं0 194; पृ0 74 छं0 163; देव ग्रंथावली, 115 छं0 6; भिखारीदास ग्रं0; रस सारांश, पृ021 छं0 134 ; श्रृंगारनिर्णय, 149 छं0 273; मतिराम: रत्नावली, 56 छं0 89; 91 छं0 158; 94 छं0 165; 94 छं0 164; रसराज, 274 छं0 319; सतसई, 413 छं0 537 ; रशना, तोष-सुधानिधि पृ0 58 छं0 170; 102 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली, 1 पृ0 132 छं0 199; देव, प्रेमचन्द्रिका, 41, छं0 43; राग-रत्नाकर 61 छं0 59; सुखसागरतरंग 75 छं0 218; आलम-आलमकेलि, पृ0 38, 90; "मेखला, देव: रागरत्नाकर, मैंजी मंजु मेखला, पृ0 5 छं0 16; अंसारी, भाग 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल, इम्पायर, पृ0 114; मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ041; आइन-ए अकबरी, भाग-3, जे0 एस0 पृ0 343-345

आभूषण के क्रम में अन्तिम चरण चरणाभूषणों का होता है। चरणाभूषणों में नूपुर, पायल, पैंजनी, अनवट, बिछिया तथा बिछुआ आदि स्त्रियाँ धारण करती थीं। इस प्रकार के अधिकांश आभूषणों से ध्वनि निकलती थी जो स्त्रियों को बहुत प्रिय होती थी :

बजनी पाइल [1]

1- आलम: आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; 31 छं0 71; 117 छं0 277; मतिराम: रसराज 54 छं0 71; 113 छं0 271; देव: शब्दरसायन, पृ0 67 छं0 - ; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, पृ0 45 छं0 304; "पायल" भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 9 छं0 24; 125 छं0 167; भिखारीदास-ग्रंथावली: 2, पृ0 139 छं0 43; "पैंजनी," तोष: सुधानिधि पृ0 13 छं0 42; पृ0 27 छं0 83; 63 छं0 185; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, पृ0 248, छं0 21; 'अनवट' मतिराम: रसराज, पृ0 217 छं0 80; रत्नावली 64 छं0 104; तोष: सुधानिधि पृ0 102 छं0 300; सोमनाथ ग्रंथावली, कंचन मनि मंडित अनवट, शशिनाथविनोद 503 छं0 22; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, 105 छं0 69; 'बिछिया,' देव-भावविलास 68 छं0 109; अष्टयाम, 18 छं0 10; सुखसागर तरंग, 79 छं0 194; मतिराम: रसराज, 239 छं0 170; 269, छं0 296; 54 छं0 71; "बिछुवा" देव भावविलास पृ0 103; मतिराम: रसराज कंचन के बिछुआ, पृ0 92 छं0 195; अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल (कुल्ले) पृ0 114, हेमिल्टन: पायल 1, 163; मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 340; ओविंगटन पृ0 320; अनवट औरंगजेबनामा, अनुवादक- मुंसिफ, तृतीय भाग पृ0 39; आईन: भाग 3, जे एण्ड एस, 343-345

प्रसाधन - अलंकरण के साथ -साथ नारी विभिन्न प्रकार की सौन्दर्य वर्धक वस्तुएं प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थीं । शरीर पर विभिन्न प्रकार के सुगंधित लेप (अंगराग) या उबटन लगाती थीं यथा-चंदन, चोवा, कस्तूरी कुंकुम, केसर आदि :

घोरि घनी घनसार सो केसर चंदन गारि के अंग सम्हारै ।[1]

1- देव: भावविलास पृ0 39 छं0 128; देव: रागरत्नाकर 13छं0 52; 13छं0 53; देव- सुजानविनोद 58 छं0 44; मतिराम: रसराज, 67 छं0 114; भिखारीदास- ग्रंथावली, 1, पृ0 51 छं0 357; पृ0 53 छं0 370; पृ0 147 छं0 263; पृ0 159 छं0 318; भिखारीदास: "चंदन लेप" 51 / 357; "चोवा", घन आनन्द कवित्त, पृ045 छं0 72; देव: रागरत्नाकर पृ0 9 छं0 34; सुजानविनोद पृ0 43 छं0 49; 58छं0 44; अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; 17 छं0 8; सुखसागरतरंग पृ0 22 छं0 66; "कस्तूरी" आलम: आलमकेलि, मृगमद पोति पृ0 39 छं0 91; 82 छं0 242; मतिराम: रसराज, पृ0 61 छं0 97; सतसई, छं0 278; देव- सुजानविनोद, कुरंगसार, 58 छं0 44; मृगमद पृ0 60, छं0 54; पृ0 83 छं0 39; देव-सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 240; "कुंकुम - केसर" भिखारीदास ग्रंथावली: 1, "कुंकुम" पृ0 39 छं0 260; 122 छं0 154; कुंकुम लेप 39छं 262; केसरि कुंकुम, 156 छं0 26; तोष: सुधानिधि केसरि, 2छं0 6; केसरि- कुंकुम: पृ0 102 छं0 300; घन आनंद ग्रंथावली; केसिर 125 छं0 407; देव: अष्टयाम केसिर उबटि 16 छं0 6; सुखसागर तरंग, : उबटने 19 - छं0 58; देवसुधा 132 छं0 131; 271 छं0 95; पृ0 222 छं0 168; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पोपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 180, 181; आईन-ए-अकबरी: भाग3, पृ0 312; रेखा मिश्रा: वोमेन इन मुगल इंडिया, पृ0 123; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशललाइफ इन मुगल इंडिया; पृ0 15; जे0 ए0 एस0 बी0, 1, 1935, पृ0 280; जनरल ऑफ वेंकटेस्वरा, ओरियंटल इंस्टटीट्यूट, भाग 8, 1964, पृ0 25-26 ।

नेत्रों को सुन्दरता बढ़ाने के लिए स्त्रियाँ अंजन या काजल नामक प्रसाधन का प्रयोग करती थीं ।

निज नैननि अंजन देति ।[1]

पान खाने के अन्य कारणों के अतिरिक्त संभवत: होठों को लाल रंग देने के उद्देश्य से संभवत: स्त्रियाँ पान[2] भी खाती थीं ।

1- "अंजन"- सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि पृ0 87 छं0 16, 97, छं0 52, 121 छं0 47, 176 छं0 32, श्रृंगारविलास, 295 छं0 4, ब्रजेंदविनोद, 502 छं0 47, 788 छं0 75, देव सुखसागर तरंग, पृ0 68 छं0 126, भाव विलास, पृ0 72 छं0 2, अष्टयाम, 10 छं0 18, मतिराम, रत्नावली पृ064 छं0 104, 123 छं0 142, 92 छं0 160, "काजल" पृ0 113 छं0 53, रसराज, 285 छं0 376, काजर सतसई छं0 769, तोष सुधानिधि काजल, पृ0 102 छं0 300, 60 छं0 175, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340, के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान (8) ओझा, ग्लिम्पसेज हिस्ट्री आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15,

2- "पान" मतिराम, रसराज 114 छं0 272, 285 छं0 376, 67 छं0 114, भिखारीदास ग्रंथावली, 1, 51 छं0 335, 122 छं0 154, 146 छं0 258, भाग 2, 15, छं0 60, सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 132 छं0 10, 116 छं0 21, 111 छं0 24, 107 छं0 11, 121 छं0 47, 34 छं0 16, देव, अष्टयाम 7 छं0 7, भावविलास, 126 छं0 2, जनरल ऑफ वेंकटेश्वर ओरियंटल इंस्टीट्यूट भाग 8, पृ0 28, मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 65, ट्रैवेर्नियर, ट्रैवेल्स, भाग 1, पृ0 294,

माथे पर लगाने के लिए विभिन्न प्रकार से बिन्दियाँ तथा तिलक का प्रयोग प्रसाधन के रूप में स्त्रियों द्वारा किया जाता था।

तिलक भाल कुंकुम ।[1]

तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ हाथों तथा पैरों में मेंहदी को[2] प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थीं तथा मेंहदी के अलावा पैरों को-

---

1- भिखारीदास ग्रंथावली: बंदन (बिंदी) । छं0 2; पृ07 छं0 32; भिखारी-ग्रंथावली; 2, 40 छं0 12; 177 छं0 17; तोष-सुधानिधि, बंदन, 61 छं0 438; 89 छं0 259; 123 छं0 362; देव-सुखसागर तरंग, बंदन 83 छं0 240; रोरी की बिंदी, (बंदन का तात्पर्य सिंदूर, ईंगुर गोरोचना की बिंदी से है) तोष सुधानिधि: 103 छं0 303; भिखारी ग्रंथावली; 2, 40 छं0 13; देव; राग रत्नाकर, चंदन तिलक, 146-45; केसरि की तिलक 18 छं0 16; सुखसागर तरंग, मृगम्मदकेसरि बंदन लीक, 84 छं0 242; तोषसुधानिधि, बंदन त्रिपुंड, 89, छं0 259; मैन्डल्सो पृ0 51; के0एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान 181

2- मेंहदी - देव ग्रंथावली- सुखसागरतरंग पृ0 104 छं0 301; 79, छं0 228; 79/22? पृ0 104 छं0 301; सुजानविनोद पृ0 43 छ0 49; -
घनआनंद, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह पृ0 217 छं0 49; 28, 87; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास, पृ0 642, छं0 95; ब्रजेंदविनोद, पृ0 502; पृ0 42; माधवविनोद, पृ0 329 छं0 77; मतिराम; रसराज 114 छं0 272; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340; जनरल ऑफ वेंकटेस्वरा ओरियंटल इन्स्टीट्यूट भाग 8, 1946 पृ0 28; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65,

महावर[1] (जावक) लगाकर भी सजाती थीं ।

1- "महावर" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 208 छं0 203; माधवविनोद, 379 छं0 107; शशिनाथ विनोद (प्रथमोल्लास) पृ0 505 छं0 34; मतिराम रत्नावली, 87 छं0 151; 63 छं0 103; रसराज, 267 छं0 290; घनानंद ग्रंथावली : (सुजानहित) पृ0 14 छं0 14; घनानंद ग्रंथावली पृ0 209; भिखारीदास ग्रंथावली: रस सारांश, खण्ड 1, 29 छं0 203; पृ0 53; पृ0 123 छं0 157; देव ग्रंथावली; शब्दरसायन, पृ0 22; सुजानविनोद, 20 छं06; पृ0 43 छं0 49; पृ0 59 छं0 51; सुखसागर तरंग, 140 छं0 301;
"जावक"- मतिराम - रसराज पृ0 40 छं0 27; पृ0 67 छं0 114; पृ0 90 छं0 189 ; 267 छं0 290; रत्नावली, 92 छं0 160; 87छं0 151; ललितललाम, 331 छं0 188; छं0 56; कुमार मणि: रसिक-रसाल, पृ0 93 छं0 106 ; तोष सुधानिधि, पृ0102 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, 1, 19, छं0 122 ; 23 छं0 149; श्रृंगार निर्णय, पृ0 150; काव्यनिर्णय , 130छं0142; देव ग्रंथावली; सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 194 ; भाव विलास, पृ0 123 छं04; चतुर्थ भाव विलास, 110 छं0 5; अष्टयाम: 18 छं0 10; आलम-आलमकेलि, पृ0 37 छं0 86 ; पृ0 99, छं0 287; मनूची: भाग 2, स्टोरिया द मोगोर , पृ0 340 (महावर या (जावक) को आलता कहा गया)

स्त्रियाँ अपने बालों में सुगंधित चीजें तेल आदि लगाती थीं तथा उन्हें विभिन्न प्रकार से यथा - वेणी , जूड़ा खुले बाल आदि बनाकर संवारती थीं :

गुहि बार सुगंधि न्है चसि कै, ...।[1]

स्त्रियों के केश काले चीकने लम्बे होते थे ।[2]

1- देव -सुजान विनोद पृ0 35 छं0 22; तिलोछति, सुकेम{तेललगे केश} पृ043 छं0 49; अष्टयाम, चोवा सो चुपरि केस 16छं0 6; सुखसागर तरंग, गुलाब फुलेल, चोवा{बालों के लिए} पृ0 86छं0 248;

"वेणी" - भिखारीदास ग्रंथावली: 1, ढीली बेनी, पृ0 131 छं0194; बेनी 147छं0 262; बेनी पृ0 16 छं0 92; तोष-सुधानिधि :बेनी 31 छं093; 98छं0 386 ; 102 छं0 300; आलम-आलमकेलि, पृ0 7 छं0 16; पृ010 छं0 22; देव; सुजानविनोद चोटी पृ0 78 छं0 24; सुखसागरतरंग, बेनी 79 छं0 230; 83, छं0 441; कबरी{अर्थबेनी} 84 छं0 43; बेनी 99छं0 287; 'जूड़ा' भिखारी दास ग्रंथावली: 1, जूरा, पृ0 29 छं0 196 ; तोष; सुधानिधि, जटाजूट जूरो, पृ0 89 छं0 259; खुले या छूटे हुए बाल' आलम-आलमकेलि, कुंतल {बाल} चारू छुटे 123 छं0 300; कुंतल छोरे पृ0 124 छं0 305; तोष सुधानिधि, छूटे केस 103, छं0 303; देव;भाव विलास:छूटति बारनि पृ0 43छं0 69; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 40; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341; के0एम0अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181; मनूची: स्टोरिया व मोगोर, भाग3, पृ0 40;

2- आलम-आलमकेलि, कारे-कारे केस पृ0 24 छं0 55; देव; रागरत्नाकर, चीकने केस पृ0 3 छं0 10; देव; शब्दरसायन, बड़े बड़े बार पृ0 96 ; तोष सुधानिधि, 93छं0 273; मैन्डल्सो पृ0 50; मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ040

नारियों को सबसे प्रिय वस्तु इत्र थी।[1] विभिन्न प्रकार के सुगंधित द्रव्यों के प्रयोग करने के कारण यह कहा जा सकता है कि खुशबू या महक से स्त्रियों को विशेष लगाव था।

स्त्रियों के मनोरंजन के साधन -

चूँकि अवलोकित काल में पर्दा प्रथा बहुत कठोरता से निभाई जाती थी परिणामत: स्त्रियाँ घर के अंदर खेले जाने वाले खेल ही ज्यादा खेलती थीं यथा: चौपड़, संगीत, नृत्य, हिंडोला आदि।[2] इन सबके अलावा

1- "इत्र" - आछौ अतर लगायौ तैसो।

-सुजान विनोद, 34, छं0 18; 52छं0 27; अष्टयाम, 16 छं0 6; पृ0 17 छं0 8; पृ0 18 छं0 10; सुखसागरतरंग, 22 छं0 67; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पृ0 670 छं0 30; माधवविनोद, 328 छं0 68; रसपीयूषनिधि, पृ0 104 छं0 75; मासीर-ए-आलमगीरी, अनु0 सरकार पृ0 100; सियार उल-औलिया पृ0 100; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग1, पृ0 163-164; आईन; ब्लाखमैन, 78-93; पी. एन. ओझा; ग्लिमपसेस आफ-, पृ0 16

2- संग प्यारे के चौपड़ खेलौ, हसौ, सकुचो न कहूँ सखियाँ इन सों-

-कुमारमणि; रसिक -रसाल पृ0 77छं0 48; पृ0 23 छं0 30; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, 535 छं0 7; रामचरित्र रत्नाकर, द्वि0ख0, 380, छं0 5; सुजानविलास, 716 छं0 31; श्रीमती मीरहसन अली; ऑब्जर[illegible] वेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 250; सरकार; स्टडीज इनमुगल इंडिया, पृ0 82; अंसारी पृ0 177; संगीत, नृत्य-

सांगीतक नाचत त्रिया गावत गीत रसाल -

बोधा विरह वागीश 96छं 21;

102, 96छं0 116; 96 छं0 117; मतिराम; रसराज, 267 छं0 285; रत्नावली, पृ0 55छं0 87; रसराज, 267 छं0 285; बोधा; विरह वागीश, पृ085 छं0 2; 104 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली; माधव विनोद, पृ0 351 छं0 1; आलमगीरनामा; मासीर-ए-आलमगीरी (उर्दू) अनु0 मु. फिदा अली पृ0 806; आईन-2 पृ0 211 भाग 3, पृ0 378 मनूची स्टोरिया द मोगोर भाग 2, पृ0 9; थैवनॉट 3 चैप्टर, XXXII, पृ055;

"हिंडोला सु गावै हिंडोरा सबै देत टेरे।

-बोधा. वि. वि. पृ0 202 छं0 32, 120छ0 11

बोधा० वि० वा० पृ० 202 छं० 32, 120 छं० 21, 207 छं० 60

देव-सुखसागर तरंग पृ० 55 छं० 162, तोष ब्रजभाषा साहित्य का

ऋतु सौन्दर्य पृ० 119, पृ० 120 ।

उच्चवर्गीय स्त्रियाँ, उत्सव आदि में भाग लेती थीं। एक मेला मीना बाजार के नाम से प्रसिद्ध था जिसमें सिर्फ कुलीन स्त्रियाँ भाग ले सकती थी।[1]

<u>शिक्षा</u> : शिक्षा का पूर्व प्रारूप लगभग- लगभग अवलोकित काल में प्रचलित रहा मुगल काल में यद्यपि स्त्री शिक्षा पर ध्यान दिया जाता था किन्तु शिक्षा केवल राजकुमारियों तथा उच्च स्तर की महिलाओं तक ही सीमित रहा। समाज में शिक्षित महिलाओं को उच्च स्थान प्रदान किया जाता रहा तथा कुछ शासक के सलाहकार तथा मंत्रिपरिषद् जैसे उच्चस्थ स्थानों पर भी अपनी योग्यता के आधार पर विद्यमान रहीं। ऐसी स्त्रियों मे रानी दुर्गावती,[2] नूरजहाँ[3]

1- बैठती दुकान लैके रानी रजवारन की

– भूषण ग्रंथावली पृ0 89;

मीना बाजार लगता था जिसमें उच्चवर्गीय स्त्रियां सामंतों आदि की स्त्रियाँ दुकान लगाती थी और सामंत, राजा लोग इनसे खरीददारी करने जाते थे। मेले में सिर्फ यही लोग जा सकते थे निम्न वर्ग के लोग इस बाजार में शामिल नही हो सकते थे।

2- इलियट एण्ड डाउसन, भाग 5, पृ0 169, आइन-ए- अकबरी, भाग2, पृ0 324-25

3- बेनी प्रसाद, हिस्ट्री ऑफ जहाँगीर पृ0पृ0 182-185

जहाँन आरा[1] अमीर खाँकीपत्नी साहिबजी[2] तथा तारादाई[3] आदि का भारतीय इतिहास में विशेष योगदान रहा है। ये समस्त स्त्रियाँ शिक्षित थीं ।

साहित्य के क्षेत्र में भी प्रारम्भ सेही स्त्रियों ने अपना अलग स्थान बनाया ऐसी शिक्षित स्त्रियों मे गुलबदन बेगम[4] सलीमा सुल्ताना[5] रूपमती[6] जेबुन्निसा[7] तथा प्रमुख थीं ।

1- ओरियंटल कालेज मैगजीन, लाहौर, भाग {13} पृ0 4, अगस्त 1937

2- जे0 एन0 सरकार: स्टडीज इन मुगल इंडिया, पृ0 111-18

3- खाफी खाँ, मुन्तखब उल- लुबाब, इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 469- - 516; जे0 एन0 सरकार: हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, भाग 5, पृ0 119-201

4- गुलबदन बेगम: हुमायूँनामा में विस्तृत विवरण ।

5- अब्दुल कादिर बदायूँनी: मुन्तखब-उत- तवारीख, भाग2, अनुवादक, डब्ल्यू एच0 लोई, पृ0 389 ।

6- रूपमती अकबर के समकालीन मालवा के शासक बाज बहादुर की पत्नी थी ।

7- जेबुन्निसा औरंगजेब की पुत्री थी {जे0 एन0 सरकार, स्टडीज इन मुगल इण्डिया, पृ0 70-90

स्त्रियों केलिए कोई पृथक से विद्यालय नहीं था जिसके माध्यम से स्त्रियाँ शिक्षा ग्रहण कर सकें[1] अतः सामान्यतया स्त्रियाँ प्रारम्भ में अपने माता-पिता से शिक्षा ग्रहण करती थीं । यद्यपि बाल्यावस्था में लड़कियाँ लड़कों के साथ कुरान ﴾यदि वे मुसलमान हैं तो﴿ के अध्ययन के लिए विद्यालयों में जाती थीं तथा कुरान का एक दो पाठ कंठस्थ करती थीं ।[2]

किन्तु धीरे-धीरे पर्दा प्रथा बढ़ता गया परिणामतः आलोच्यकाल में लोग विद्यालयों में अपनी लड़कियाँ भेजना पसन्द नहीं करते थे । अतः निश्चय ही शिक्षा का महत्त्व कम होना था । फिर भी संभवतः उच्चवर्गीय स्त्रियाँ घर पर थोड़ी बहुत शिक्षा प्राप्त कर लेती थीं और कभी-कभी पत्राचार भी अपने नाते-रिश्तेदारों से कर लेती थीं । कवि ने पत्र पढ़ते हुए एक बालिका का चित्रण कियाहै :

चिट्ठी माधव विप्र की छिप्र बाँचिकै बाल ।
प्रगट सुनायो सखिन को द्विज के हिय कोहाल ।।[3]

1- जे0 सी0 पावेल प्राइस , ए हिस्ट्री ऑफ इण्डिया, प्लेट 14, पृ0 28।

2- कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक क्रुक्स, पृ0 5।

3- बोधा: विरह वारीश, पृ0129 छं0 87; पृ0 127 छं0 61; पृ0 141 छं0 31; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 5 छं0 10; मतिराम ग्रंथावली: पृ0 233; विस्तृत विवरण केलिए ए0 एस0 अल्तेकर द पोजीशन ऑफ वोमेन , इन हिन्दू सिविलाइजेशन चैप्टर 3 में ।

इस प्रकार भले ही पर्दा प्रथा के कारण शिक्षा ग्रहण करने वाली स्त्रियों की संख्या घट गयी हो किन्तु शिक्षा की निरन्तरता यथावत् बनी रही ।

स्त्रियों की आर्थिक स्थिति :

अवलोकित काल में सामान्य रूप से स्त्रियों की आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं मानी जा सकती है क्योंकि विलासिता प्रधान युग होने के कारण लोग स्त्री पर कम ध्यान देते थे तथा वैभव विलास में अधिक धन व्यय करते थे । इस प्रकार स्त्री को प्राप्त गहने ही उसकी अपनी व्यक्तिगत संपत्ति होती थी :

> कंचन के परकंजनि पै सुनिसंक है आसव संगपियो मैं ।
> दौलति जाकी जवाहिर के गहने सजि अंग प्रकास कियो मैं ।।[1]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : श्रृंगार विलास, पृ0 299, छं0 20; पृ0 300 छं0 26; ए0 एस0 अल्तेकर; द पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ0 259, ﴾ इस प्रकार के धन को स्त्री धन कहा गया﴿ ।

चतुर्थ अध्याय

खण्ड (क) वस्त्र

खण्ड (ख) आभूषण

(खण्ड क) वस्त्र

जिस प्रकार सामूहिक जीवन के चित्रण में मानवीय संबंधों के वैयक्तिक और सामाजिक रूपों के सामंजस्य और संघर्ष का विवेचन किया जाता है, उसी प्रकार किसी युग की संस्कृति के निरूपण के लिए तत्कालीन उपयोगितावादी, सौन्दर्यवादी और कलात्मक व्यवहारों का अध्ययन होता है । ये काव्य कला परम्परा, प्रभाव और युग की रुचि को प्रतिबिम्बित करते हैं । ऐतिहासिक परिस्थितियाँ परम्परा के स्वरूप को बहुत कुछ बदलती हैं ।[1]

कालक्रम से ही भारतवासियों को अपने वेश-भूषा की ओर विशेष आकर्षण रहा है।[2] चूँकि भारत सदियों से विभिन्न वर्गों, धर्मों एवं संस्कृतियों का देश रहा है । इसलिए उसके पहनावे में भी अन्तर पाया जाता है क्योंकि हर एक वर्ग या समुदाय के लोगों का वस्त्र उनकी आर्थिक स्थिति के अनुसार होता है।[3]

भारत में वस्त्रों की विभिन्नता की दृष्टि से (सत्रहवीं से उन्नीसवीं शती तक) विशेष महत्व रखता है क्योंकि इस काल तक आते-आते भारतीयों ने सारे वाह्य प्रभावों को आत्मसात करके या तो अपना बना लिया था या फिर विदेशी समझकर अग्राह्य मान लिया था ।[4]

1- डॉ० वेंकट रमण राव, पृ० 242

2- डॉ० इन्द्र बहादुर सिंह, रीतिकालीन साहित्य: परिवेश और मूल्य पृ052;
श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ० 73

3- वही,

4- लल्लनराय: रीतिकालीन हिन्दी-साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ० 77

वस्त्र उपयोगिता और प्रदर्शन दोनों ही उद्देश्यों को लेकर प्रचलित होते हैं ।[1] चूँकि मध्ययुगीन समाज विलासिता तथा सम्पन्नता का युग था फलत: अवलोकित काल में अधिकांशत: वस्त्रों का ग्रहण उपयोगिता की अपेक्षा वैभव-प्रदर्शन तथा ऐन्द्रिक उद्दीपन की दृष्टि से अधिक किया गया है ।[2]

जैसे-जैसे देश में सामाजिक परिवर्तन होता जा रहा था वैसे-वैसे लोगों के विचारों, रहन-सहन तथा परिधानों में अन्तर आता जा रहा था ।[3] अब लोगों का ध्यान सादगी से हटकर तड़क-भड़क सुनहले तारों से बने रेशम के कपड़ों की ओर आकर्षित हुआ । आर्थिक संपन्नता के अनुरूप लोगों ने इस प्रकार के आकर्षक वस्त्रों का प्रयोग शुरू किया ।[4]

आलोच्यकाल में सामान्य तौर पर निम्न प्रकार के वस्त्र प्रचलित थे :

<u>साड़ी</u> - शरीर के मध्यभाग में लपेटकर पहना जाने वाला साड़ी नामक परिधान स्त्रियों को विशेष प्रिय था ।[5]

1- वेंकट रमण राव, पृ0 243

2- डॉ0 इन्द्र बहादुर सिंह: रीतिकालीन साहित्य: परिवेश और मूल्य, पृ0 53

3- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स, पृ0 73

4- वही,

5- ट्रेवेर्नियर, भाग 2; पृ0 125; एस0पी0 सहगल , लाइफ़ आफदि मुगल प्रिन्सेज़, पृ0 16; मनूची , स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 341; बर्नियर , पृ0 272

साड़ी को कवियों ने पट [1], दुकूल [2],

1- "पट" कंचन मंडित रूप भरो पहिरे पट लाल प्रकास बिलासनि ।

- देव ग्रंथावली: रसविलास ~~विलास~~, पृ0 205 छं0 41; पृ06छं0 2; भाव विलास: पृ0 46 छं0 21; देवसुधा, पृ0 14 छं0 28; देव, राग रत्नाकर, 8 छं0 29; पृ0 8 छं0 31; पृ0 20 छं0 92; पृ0 20 छं0 93; अष्टयाम, पृ0 8 छं09; मतिराम ग्रंथावली: मतिराम सतसई, पृ0 511, 592; ललितललाम, 2/9; तोष-सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; आलम: आलमकेलि, पृ0 38, छं0 90; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, पृ035 छं0 240; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ0 125 छं0 14; पृ0131 छं0 14; पृ0 131 छं0 48; रससारांश, पृ0 35 छं0 240,

2- "दुकूल" अरू फिरत नारि अंगनि । रंगित दुकूल, उर भरै फूल

- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजान विलास, पृ0 746 छं0 20; श्रृंगार विलास, पृ0 295 छं0 5; पृ0 304 छं0 42; पृ0 309 छं0 61; पृ0 910 छं0 66; पृ0 311 छं0 69, रसपीयूषनिधि, पृ0 63 छं0 17, पृ0 18; पृ0 158 छं0 10; पृ0 111 छं0 23; पृ0 127 छं0 18; पृ0 63 छं0 18; पृ0 63 छं017; पृ0 99 छं0 56; पृ0 96 छं0 47; पृ0 112 छं0 2; पृ0 104 छं0 75; पृ0 129 छं0 29; पृ0 128 छं0 25; पृ0 103 छं0 72; पृ0 78छं076; मतिराम, रसराज, पृ0 247 छं0 203; 64/103; मतिराम रत्नावली, पृ0 39 छं0 55; देवग्रंथावली: भाव विलास, पृ0 69 छं0110; राग - रत्नाकर, पृ04 छं012; पृ0 16 छं0 65; पृ0 16 छं0 66; तोष-सुधानिधि: पृ0 93 छं0 273,

वसन[1], अंबर[2], पंचतोरिया[3] चोर[4] लहरिया[5] आदि अनेक नामों से अभिहित किया है ।

"बसन"

1- घर-घर डोलति सुधर नर मोहिबे को अधरो फिरति सनमुख सुख दैनिया ।
अरून बसन वय तरून चुवत रस कुलटा कुटिल जुवतिन जैनिया ।।

– देव ग्रंथावली: पृ0 186

राग -रत्नाकर पृ05 छं0 19, पृ0 6छं0 21, पृ0 6 छं022, पृ0 14 छं0 46 पृ0 12, छं0 50, पृ0 20 छं0 95 पृ0 16 छं0 68 पृ0 19 छं0 77 पृ0 20, छं0 91, सुजान विनोद पृ0 64 छं0 10 मतिराम, मतिराम सतसई पृ0 258 , भिखारीदास ग्रंथावली: पृ090 छं0 9 ।

2- "अंबर" गनिका हरषित चित्त सजैं अंबर बहुरंगनि ।
जगमग जगमग होत कनक मनि भूषण अंगनि ।

– सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 629 छं0 68

आलम: आलमकेलि, पृ0 39 छं0 91; देव: राग-रत्नाकर पृ0 12 छं0 57

"पंचतोरिया"

3- सेत जरतारी का उज्यारीकंचुकी कोकसि,
अनियारी दीठि प्यारी उठि पैन्हो पंचतोरिया।

–देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग छं0 120, 243छं0 122, 243 , 726 किशोरी लाल , रीति कवियों की मौलिक देन पृ0 331 67/ 120,) देव: सुजानविनोद, पृ0 68 छं0 25, सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास , पृ 603 छं0 80,

4- "चोर" सोने सो सरीर तामे आसमानी रंग चोर
और ओप कीनो रवि रतनारीना है

– सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 223 छं0 334 पृ0 96 छं0 46 श्रृंगारविलास, पृ0 603 छं0 80, तोष-सुधानिधि पृ0 16 छं0 53, पृ0 32छं0 95 , पृ0 141 छं0 418; देव ग्रंथावली: सुजानविनोद,

क्रमशः

पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; अष्टयाम ,पृ0 16छं0 5; सुखसागर-
तरंग, पृ0 22 छ067; भिखारीदास ग्रंथावली:खण्ड 1, पृ0 21छं0 135

5- "लहरिया-

सहर-सहर सौंधो सीतल समीर डोलै थहर थहर घनघोरि
कैघहरिया

× × ×

फहर फहर होत प्रीतम को पट लहर लहर होत प्यारीकोलहरिया

- देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 220 छं0 12,

सुजानविनोद, पृ0 33 छं0 8

साड़ी भारत में प्रचलित वस्त्रों में सर्वाधिक प्राचीन वस्त्र है। [1] तत्कालीन समय में विभिन्न रंगो की साड़ियां प्रचलित थीं। [2]

1- रामायण 5/19/3, कुमार स्वामी, मुगल पेंटिग जिल्द6 चि0 क0 3-4।

2- सारी सुही "मतिराम "लसै,
मुख संग किनारी की यों छवि छाजै
पूरन चन्द पियूष मयूष,
मनो पट वेष की रेख बिराजै।

– मतिराम : मतिराम रत्नावली, पृ0 96 छं0 108;

यहाँ पर सूही रंग की साड़ी से तात्पर्य कासनी रंग की साड़ी सेहै। सारी छीन फेन की सी, पृ050 छं0 76; साड़ी केसर के रंग की, पृ0 54 छं084; रसराज, सेत सारी, पृ0 55 छं0 77; 240, 176, स्याम रंग सारी पृ0 61 छं0 97, छीरफेन सी सारी पृ0 63 छं0 101; सुही (लाल) सारी, पृ0 113 छं0 271; ललितललाम, केसरि रंगसारी, पृ0 346 छं0 280; मतिराम सतसई, सित रंग पट, छं0 511, 512; सेत बसन, पृ0 298; नील दुकूल, पृ0 289; आलम: आलमकेलि: कुसुंभी सारी, पृ0 35छं0 81; पृ0 26 छं0 61; सारी सेत, पृ0 31 छं0 71; नीली रंग की साड़ी पृ0 39 छं0 91; देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, केसरि रंग साड़ी, पृ0 61 छं0 81; पृ027; देव प्रेमचंद्रिका, केसर रंग छिरको, सेत सारी, पृ0 35 छं0 23; राग-रत्नाकर, पीत रंग दुकूल पृ0 4 छं0 12; 16/65; पृ0 8 छं029 16/66; पृ08 छं0 31; स्याम चीर, पृ0 9 छं0 33; हरे बसन, पृ0 11 छं0 46; 20/95; सेत बसन, 16 छं0 68; अंबर लाल, पृ0 12, छं0 57; पृ0 20 छं0 92; सुजान विनोद- केसरि की रंग सारी, पृ0 63 छं0 6; बसन बसंती, पृ0 64 छं0 10; अष्टयाम: पट सेत, पृ0 8 छं0 9; पीरो चीर पृ0 16 छं0 5; पृ0 16छं06;

क्रमशः

तोष सुधानिधि, सारी सुपेत, पृ0 60 छं0 174; सारी कारी पृ060 छं0 175; सुरंग सारी, पृ0 89 छं0 269; भिखारीदास ग्रंथावली : खण्ड 1, लाल सारी, पृ0 15 छं0 83; छं0 पटस्याम, पृ0 20 छं0 134; 35/240; नीलचोर, पृ0 21 छं0 135; सेतसारी, पृ0 150 छं0 70; सारी सुही, पृ0 145 छं0 253; भिखारीदास ग्रंथावली· केसरिया पट, पृ0 132 छं0 48; सारी सुरंग, श्रृंगार निर्णय, लाल सारी 54/30; रस सारांश, 15/83; पृ0 143 छं0 17; सोमनाथ ग्रंथावली : कुसुंभी सारी पृ0 61 छं0 11; श्रृंगार विलास, कुसुंभी सारी, पृ0 276 छं0 6; थैवनॉट चैप्टर, XX, पृ0 37; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 62; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0341

किनारीदार साड़ी भी तत्कालीन समाज में फैशन में थी ।[1] समृद्ध परिवारों की स्त्रियाँ बहुमूल्य सोने चांदी के तारों से बनी कढ़ाई वाली साड़ी पहनती थी जिसके कोरों पर विभिन्न प्रकार के मोती आदि लगे रहते थे :

1- कुंदन के आँग-माँग मोतिन सँवारी सारी
सोहत किनारीवारी केसरि के रंग की ।
- मतिराम , ललितललाम, पृ0 346 छं0 280;

मतिराम रत्नावली: पृ0 96 छं0 168 ; पृ0 54 छं0 84; छं0 81; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 175 छं0 15; तोष-सुधानिधि, पृ0 21 छं 0 67 ; देव ग्रंथावली : सुजानविनोद, पृ0 47 छं0 5; रसविलास, पृ0 197 छं0 33; पृ0 197 छं0 34; सुखसागर तरंग, पृ0 71 छं0 146; पृ0 89 छं0 249; शब्द रसायन, पृ0 7 छं0 70; पृ0 96 ; भाव-विलास पृ0 123; भिखारीदास ग्रंथावली: शृंगारनिर्णय, पृ0 149, छं0 273 ; देव- सुखसागरतरंग ,, पृ0 99 छं0 286; प्रेम - चन्द्रिका , पृ0 35 छं0 23; आलम-आलमकेलि, 30पृ0 70; इस्लामिक कल्चर क्वाटर्ली, जनवरी 1980, पृ0 113; जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया 113,

बादले को सारो दरदावन किनारो जग-

मग जरतारो झीनो झालरि के साज पर ।

मोती गुहे कोरन चमक चहुँ ओरन त्यों

तोरन तरैयन को तानो द्विजराज पर ।।

इस प्रकार के मँहगे दामों की सजी हुई {कढ़ाई इत्यादि वाले} साड़ी का प्रयोग उच्चवर्गीय और सम्पन्न परिवार की स्त्रियाँ ही करती रही होंगी इनके विपरीत निम्न वर्ग की स्त्रियाँ तो बस नाम मात्र के लिए साड़ी पहनती थी या साड़ी के स्थान पर एक मोटी चादर ओढ़ लेती थीं ।[2]

1- देव:रस विलास, पृ0 97 छं0 34; पृ0 197 छं0 33;शब्द रसायन- पृ0 96 पृ0 71'; सुखविलास पृ0 127,34{बादला रेशम तथा चाँदी के तारों से बनाया जाता था । भावविलास 123 {सोने का चिपटा तार होता था, लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखत वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 108} सुखसागर तरंग, पृ0 89 छं0 249 ,' पृ0 71 छं0 146';भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगार निर्णय, पृ0 149 छं0 273';मनूची: स्टोरिया द मोगोर, पृ0- 341,' बर्नियर, पृ0 272';इस्लामिक कल्चर , क्वाटरली, जनवरी , 1980, पृ0 113

2- देव: देवसुधा पृ0 90 छं0 34; देव ग्रंथावली:सुखसागर तरंग, पृ0105 छं0 303';इस छंदमें देवने सालू की साड़ी का उल्लेख किया है और सालू का तात्पर्य एक विशेष प्रकार की मोटी चादरसेहै, पदीढ़'

निम्नवर्गीय स्त्रियाँ एक प्रकार की महीन झीनी साड़ी भी पहनती थी जिसका कपड़ा इतना हल्का होता था कि वह उनके शरीर के भार को संभालने का सामर्थ्य नहीं रख पाता था तात्पर्य यह है कि उठने-बैठने मात्र से ही साड़ी के तंतु खिंच जाते थे ।[1]

साड़ी विभिन्न प्रकार के वस्त्रों से निर्मित होती थी, कवियों ने कुछ वस्त्रों का उल्लेख किया है यथा: जरतारी की साड़ी[2], जरतारी वह कपड़ा है, जिस पर सुनहले तार टँके हों या जरी से बेल-बूटे बनाए गये हों, विशेष तौर पर सलमें सितारे से युक्त वस्त्र को जरतारी कहा गया। सालू की साड़ी[3] तथा असावरी की साड़ी आदि[4]।

साड़ी कमर में लपेटकर इस प्रकार पहनी जाती थी कि उसका एक सिरा सिर पर होता था जिससे स्त्रियों को आवश्यकता पड़ने पर घूँघट निकालने में आसान

1- भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगार निर्णय, पृ0 14 छं0 253, भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ0 106 छं0 8 काव्यनिर्णय पृ0 87 छं0 9 भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 100 छं0 50, आलम-आलमकेलि, पृ0 38 छं0 90 रस विलास, पृ0 197 छं0 34 । ट्रेवेनियर भाग 2, पृ0 125

2- जरतारी सारी लसै ....
सोमनाथ ग्रंथावली· माधव विनोद पृ0 328 छं0 68, 389 छं0 47, 389, छं0 48, देव ग्रंथावली: राग रत्नाकर पृ0 11 छं0 47, मतिराम ग्रंथावली, मतिराम सतसई, पृ0 408 छं0 480, रसराज 246 छं0 201 ललितललाम पृ0 356 छं0 344, लल्लन राय रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन पृ0 107

3- एड़िन ऊपर घूमत घांघरो तैसियै सोहति सालू की सारी,
–देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग पृ0 105 छं0 300

4- सारी असावरी की झलकै छलकै छवि घूम घुमारे ।
– देव ग्रंथावली: रस विलास, पृ0 202 छं0 223
भिखारीदास ग्रंथावली पृ0 106 छं0 8 ।

होती थी :

जरतारी सारी ढो नैन लसति मतिराम ।[1]

मनो कनक पंजर परे खंजरीट अभिराम ।

कभी-कभी सौन्दर्य को दृष्टि से साड़ी को दाईं ओर से घुमाकर कंधे पर डाल लिया जाता था ।[2]

<u>कंचुकी</u> -

प्राचीन भारतीय वस्त्रों में परिधेय वस्त्र तीन प्रकार के माने गये हैं निबन्धीय (बांधकर पहना जाने वाला) यथा साड़ी शलवार आदि, प्रेक्षप्य (कंचुकी चोली) और उत्तरीय जिनमें दुपट्टा, चादर ओढ़नी आदि आते हैं ।[3]

कंचुकी की गणना प्रेक्षप्य वस्त्र के अन्तर्गत की गयी है । कंचुकी नामक वस्त्र का प्रारम्भ कब से हुआ इस संबंध में मतभेद है । कुछ लोगों का कहना है कि कंचुकी का सामान्य चलन गुप्त काल से प्रारम्भ हुआ [4] तो कुछ इसका आम चलन राजपूतों के काल से मानते हैं । ग्यारहवीं बारहवीं शती के पालवंशीय चित्रों, तथा उस काल के अपभ्रंश शैली के चित्रों में भी कंचुक जैसे वस्त्र ही अधिक अंकित हुए हैं ।[5]

1- मतिराम सतसई, पृ० 408, छं० 480, आलमः आलमकेलि, पृ० 38 छं० 90, भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ० 100 छं० 50, 145 छं० 253, भिखारी ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ० 106 छं० 8

2- ग्रोस, भाग, 1, पृ० 143

3- किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 327

4- कालिदास शाकुन्तलम् पृ० 1 छं० 19, दि पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 353, ए. एस. अल्तेकर ।

5- ए. एस. अल्तेकर, दि पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 353,

वक्षोदेश को ढकने केलिए कटि से ऊपर ~~के वस्त्रों~~ के वस्त्रों में कंचुकी का नाम विशेष रूप से कवियों ने लिया है :

लसैबाल वक्षोज यों हरित कंचुकी संग ।[1]

1- "कंचुकी" - भिखारीदास ग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 86 छं0 6; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 145 छं0 252; पृ0 64 छं0 451 ; पृ0 124 छं0 163; पृ0 144 छं0 252; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ0 178 छं0 22; पृ0 215 छं0 91; पृ0 248 छं0 21; आलम-आलमकेलि पृ0 124 छं0 205; पृ0 123 छं0298; पृ0 124 छं0 305; देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर, पृ0 11 छं0 47; पृ0 6 छं0 21; पृ03 छं0 10; पृ0 8 छं0 29; पृ0 9 छं0 33; पृ0 9 छं0 34; पृ0 12 छं0 47; पृ0 15छं060; पृ0 18 छं0 75; छं0 20, छं0 91; रसविलास, पृ0 236 छं0 22; पृ0 236छं0 ~~67;~~ 23; सुखसागर तरंग पृ0 84 छं0 224; पृ0 79, छं0194; पृ0 86, छं0 231; पृ0 77 छं0 223; पृ0 78 छं0 227; पृ0 79 छं0 230; पृ086 छं0 249; पृ0 96 छं0 278; पृ0 97 छं0 283; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; सुजानविनोद, पृ0 55छं0 37; पृ0 68 छं0 25; सोमनाथ ग्रंथावली: ~~181/122~~ रसपीयूषनिधि, पृ0 134 छं0 20; पृ0 215 छं0 270; पृ0 103 छं0 72; पृ0 96 छं0 48; पृ0 97 छं0 52; श्रृंगार विलास, पृ0 304 छं0 43; पृ0603 छं0 80; पृ0 611 छं0 118; पृ0 642 छं0 96; माधव विनोद पृ0 355, छं0 43; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 33; मतिराम ग्रंथावली: पृ0229 छं0 128; पृ0 41, छं0 30; पृ0 70, छं0 122; पृ0 109 छं0 258; मतिराम सतसई, पृ0 73 145; छं0 84; तोष सुधानिधि, पृ0 51, छं093; पृ0 39 छं0 116; पृ0 94 छं0 274; पृ0 98 छं0 286; पृ0 103 छं0303; थैवनॉट, इंडियन ट्रेवेल्स, पृ0 53; आईन: भाग 3, पृ0 311; 332;

कंचुकी के अलावा अंगिया[1], चोली[2], कसनि-तनी[3] आदि वस्त्रों का उल्लेख मिलता है ।

1- "अंगिया"- अति अवदात महा मिही कसी उरोज उतंग ।
केसरि रंग रंगी लसै अँगिया अंगनि संग ।

मतिराम ग्रंथावली: मतिरामसतसई पृ0416 छं0 584; मतिराम रत्नावली, पृ0 67 छं0111; रसराज पृ0 125 छं0 224; पृ0 228 छं0 123; पृ0 229, छं0 127 ; 129/128; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 77 छं0 50, सोमनाथ ग्रंथावली; माधव विनोद (चतुर्थ अंक) पृ0 389 छं0 47; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 6 छं0 57, पृ0 143 छं0 245; पृ0 149 छं0 273; श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; पृ0 214 छं0 243; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 211 छं0 19; सुखसागर तरंग, पृ0 99 छं0 286; पृ0 104 छं0 301; सुजानविनोद, पृ0 35 छं0 23; पृ0 64 छं0 10; पृ0 72 छं0 40; राग रत्नाकर, पृ011 छं0 46; पृ0 12 छं0 49; पृ0 16 छं0 74 ; पृ0 20 छं0 95; प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; तोष-सुधानिधि, पृ0 103 छं0 302 ; आलम- आलमकेलि, पृ0 9 छं0 20; पृ0 26 छं0 51; पृ0 31 छं0 71; पृ0 35 छं0 81; पृ0 37 छं0 86; पृ0 125 छं0 306 ; स्टैवोरीनियस, भाग 1, पृ0 415; ग्रोस, भाग 1, पृ0पृ0 142 -43; आईन, भाग 3, पृ0 311, 12; बर्नियर, पृ0 272 मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 341

2- "चोली" रंगित चोली ते डोरी खरी चुनि चाय सो गाँठि उधरि अथेटो।
देव ग्रंथावली: पृ0 92 छं0 268;
सुजानविनोद पृ065/छं22; भिखारीदास ग्रंथावली; खण्ड 1, पृ0 145 छं0 255 ; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37; (इसमें चोली कमर तक का चुस्त वस्त्र बताया है)

क्रमशः

3- .... तनी खुलि जाति घनी सुवनी फिरि बांधति है कसि कै।

-देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 21। छं0 19;

सुखसागर तरंग, पृ0 84 छं0 224; पृ0 77 छं0 223 ; पृ0 78 छं0 224; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, कसनि, पृ0 16 छं0 92; पृ0 120, छं0144; तनीन, पृ0 140, छं0 235 ; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 976 , 52; मतिराम ग्रंथावली, रसराज, पृ0229, छं0 127; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 77छं0 50; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 56 छं0 26; तनी या कसनि संभवत: अंगिया या कंचुकी में लगे बंधन को कहते हैं जिससे उपर्युक्त वस्त्रों को आवश्यकतानुसार ढीला या कसा करते होंगे । हैवलॉक एलिस, स्टडीज इन द साइकलोजी ऑफ सेक्स, भाग3, पृ0 172

कंचुकी याचोली को शरीर विज्ञान की दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण बताया गया है।[1]

साड़ी की भाँति उपर्युक्त वस्त्र भी विभिन्न प्रकार के रंगों तथा विभिन्न प्रकार के वस्त्रों से निर्मित होते थे।[2]

1- हैवलॉक एलिस, स्टडीज इन द साइकॉलोजी ऑफ सेक्स, भाग 3, पृ0 172

2- सोमनाथ ग्रंथावली: सु. वि. अरून कंचुकी, पृ0 642 छं0 96; शृंगारविलास, जरकसी कंचुकी, पृ0 603 छं0 80; जरतारी कंचुकी पृ0 611 छं0 118; रसपीयूषनिधि, कंचुकी लाल पृ0 215 छं0 270; जरतारी कंचुकी, पृ0 134 छं0 20; देव ग्रंथावली; सुजान विनोद, पीरी जरतारी की कंचुकी, पृ068 छं0 25; सुखसागर तरंग; लाल कंचुकी, पृ0 77 छं0 223; पृ0 84 छं0 224; स राग रत्नाकर, सित कंचुकी, पृ0 3 छं0 10; नील कंचुकी, पृ06 छं0 21; सित कंचुकी, पृ0 9 छं0 33; कंचुकी लाल, पृ011 छं0 47; कंचुकी पीत, पृ0 15 छं0 60; पृ0 18 छं0 75; पृ0 20 छं0 91; कपूर सी कंचुकी, पृ0 9 छं0 34; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, कंचुकी नीली पृ0 248 छं0 21; कंचुकी बाफ्ते, पृ0 215 छं0 91; तोष-सुधानिधि, कंचुकी लाल, पृ098 छं0 286; जरतारी की कंचुकी, पृ0 103 छं0 303; आलम-आलमकेलि, कंचुकी नील, पृ0 124 छं0 305; "तनी" देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, जरतारी की तनीनि, पृ0 77 छं0 223; अँगिया, आलम आलमकेलि, सेत आँगी, पृ0 35 छं0 81; झीनी आंगी पृ0 37 छं0 86; अंगिया सित झीनी, पृ0 125 छं0 306; कुसम रंग की अंगिया 103/307; देव: सुखसागरतरंग, अंगिया नीली, पृ0 104, छं0 301; हीरकी आँगी पृ0 99 छं0 286; राग-रत्नाकर, आँगी लाल, पृ0 11 छं0 46; आँगी सुरंगित, पृ0 16 छं0 74; पृ0 20 छं0 95।

कंचुकी, अंगिया जैसे वस्त्र साड़ी के साथ पहने जाते थे ।

सेत जरतारी की उज्यारी कंचुकी की कसि अनियारी डीठि प्यारी पैन्हो पंचतोरिया ।[1]

चुनरी - संभवतः चुन्नट डालकर पहने जाने के कारण होइसे ~~पंचतोरिया~~[1] चूनरी' कहा गया :

पहिरी उनरी चुनरी चुनि मेरी ।[2]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग पृ0 67 छं0 120, रागरत्नाकर, पृ0 11 छं0 47, "आँगी सुरंगित सारी पै पृ0 12 छं0 49, सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद पृ0 349, छं0 47, बोधा: विरह वागीश, " "

2- देव ग्रंथावली: देवसुधा पृ0 51 छं0 24 , चुनि चुनरी लाल, सुजान-विनोद पृ0 35 छं0 22, चूनरी चुनि, पृ0 52 छं0 26 तोष सुधानिधि, पृ0 119, छं0 350, चुनि चुनरी पहिरे चारू खासे को ।

कवियों ने चूनरी[1] नामक वस्त्र जिसे स्त्रियाँ धारण करती थीं का उल्लेख किया है।

चूनरी विवाह के अवसर पर विशेष रूप से धारण किया जाता रहा है अत: इसे मांगलिक वस्त्र माना गया। कवि ने गौने की चूनरी का विशेष महत्व स्वीकार किया है:" गौने की चूनरी वैसिये है दुलही अवही ते ढिठाई बधारी"[2] एक अंग्रेज यात्री जिसने दिल्ली तथा अन्य कई स्थानों की स्त्रियों के परिधानों का अवलोकन किया है, विवाह के अवसर पर कीमती चूनरी पहनने का वर्णन किया है। उसने बताया कि विवाह के अवसर पर दुल्हन न केवल भारी गहने पहनती थीं बल्कि सोने-चांदी से युक्त तारों की कढ़ाई वाले भारी कपड़े भी पहनती थीं। उसने इस प्रकार की कढ़ाई वाले एक भारी चुनरी का उल्लेख करते हुए कहा कि मैंने भारी कढाई वाली एक ऐसी चुनरी को देखा जिसे चार आदमी मिलकर तह

1- "चूनरी"- आलम आलमकेलि, पृ0 117 छं0 277; मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 284-285, छं0 372, पृ0 230, छं0 234, पृ0 256, छं0 241; ललितललाम, पृ0 336 छं0 223; रत्नावली: पृ0 82 छं0 140; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 270; पृ0 96 छं0 278, पृ0 74 छं0 164; पृ0 94 छं0 279; पृ0 72 छं0 153; पृ0 68 छं0 129; देवसुधा विनोद, पृ0 35 छं0 22; पृ0 51 छं0 24; सु. वि. 35/22; 52/26; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि (त्रयोदशतरंग) पृ0 113 छं0 5; पृ0 60 छं0 7; पंचदश तरंग, पृ0 134 छं0 20; पृ0 175 छं0 30, एकत्रिंशतितमतरंग, पृ0 166 छं0 32; तोष सुधानिधि, पृ0 11 छं0 26; पृ0 119 छं0 350; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 46,

2- मतिराम रसराज, पृ0 42 छं0 36; 256; छं0 241; (किशोरीलाल, रीतिकालीन कवियों की मौलिक देन, पृ0 333, पृ0 230 छं0 234;) रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; वही पृ0 38-46

करते थे यह इतनी भारी चुनरी थी ।[1]

वस्त्रों के संदर्भ में भारतीय स्त्रियों की सदैव से विशेषता रही है कि वे समय तथा मौसम के अनुसार वस्त्रों के रंगों का चुनाव करती हैं । फलत: स्त्रियों की इस विशेषता को दृष्टिकोण में रखकर ही संभवत: कवि ने समयानुसार चूनर के रंगों का वर्णन किया है । लाल रंग की चूनर का वर्णन प्राय: कवियों ने वर्षा ऋतु के संदर्भ में किया गया है ।

> लाला । मेरी सुरंग चुनरी भीजै । लेहु बचाय आप प्रिय मोको, बूंद परे रंगछीजै ।[2]

लाल रंग के अलावा चूनरी के अन्य विभिन्न चटकीले वर्णों की चूनरी का उल्लेख हुआ है ।

> सोहति चूनरी स्याम किसोरी की .... ।[3]

1- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया पृ0 46 से उद्धृत ।

2- तोष: ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौन्दर्य, सं0 प्रभुदयाल मीतल पृ0 89, छं0 सं0 25; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 21। छं0 19; देव ग्रंथावली; पृ0 144 छं0 268; पृ0 149; राग-रत्नाकर, पृ0 7 छं0 27; सुजान विनोद, पृ0 35 छं0 22, पृ0 78 छं0 24; सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 270; देवसुधा, पृ0 33 छं0 22; सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 113 छं0 5; पृ0 134 छं0 20; कुमारमणि रसिक रसाल, पृ0 77छं0 49; श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ0 47

3- - देव ग्रंथावली पृ0 144, छं0 268;
पंचरंग चूनरी सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 175 छं0 30;
पृ0 60 छं0 7; नीली चुनरी, तोष सुधानिधि पृ0 11 छं0 26; चटकीली चूनरी; कुमारमणि, रसिक रसाल पृ0 77 छं0 49; देव ग्रंथावली, सुखसागर-तरंग पृ0 94, छं0 279; पृ0 96 छं0 291; छीबर, देव सुधा पृ0 143 छं0 221

ओढ़नी - ओढ़नी को उपरैनी[1] अंचल[2] निचोल[3] घूंघट[4] आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया है।

चूनरी साड़ी और उत्तरीय दोनों का काम करती थी। [5] राजस्थान में जहाँ घांघरे का प्रचलन है, नीवी बंध के साथ आगे खोंसकर पहना जाने वाला लाल छपाई का वस्त्र का वस्त्र चूनरी कहलाता है। लेकिन वहाँ की मारवाड़ी स्त्रियों द्वारा पहनी जाने वाली एक विशेष प्रकार की छपाई वाली साड़ी को भी चूनरी कहते हैं, जिसके ऊपर प्रायः चादर भी ली जाती है जबकि बिहार में रंगीन किनारे की ओढ़नी या चादर चूनरी कहलाती है। [6]

1- 'उपरैनी', भिखारीदास ग्रंथावली, पृ093 छं0 25; पृ0 126 छं0 168; तोष: ब्रजभाषा का ऋतु सौन्दर्य, सं. प्रभुदयाल मीतल, छं0 117; लल्लनराय पृ0 8

2- "अंचल" तोष: सुधानिधि पृ0 31 छं0 93; पृ0 59, छं0171; पृ0 123 छं0 362; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ047 छं0 324; मतिराम-ललितललाम पृ0 91; देव ग्रंथावली, भावविलास पृ0 24; सुजानविनोद पृ0 20 छं0 6; पृ0 79 छं0 26

3- "निचोल": मतिराम / ललितललाम पृ0 10 छं0 68; पृ0 10 छं084; पृ0 91; देव ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 55छं0 37

4- "घूंघट" तोष सुधानिधि, पृ0 8 छं0 26; मतिराम ललितललाम, पृ010, छं0 84

5- कुमारस्वामी: राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5पृ0 30,

6- ग्रियर्सन, बिहार पीजैण्ट लाइफ़, पृ0 149,

तत्कालीन समय में औरतें कमर तक के जो वस्त्र यथा-चोली अंगिया ﴾ब्लाउज ﴿ कंचुकी आदि पहनती थीं उसके साथ दुपट्टा या चूनरी का प्रयोग करती थीं :

कंचुकी सौंधि सनी सुबनी पहिरी चुनरी चटकीली सुरंग सों ।[1]

इस प्रकार के वस्त्रों के साथ चूनरी धारण करने की प्रथा उन्होंने राजस्थानी औरतों से लिया। लखनऊ दरबार से संबंधित चित्रों में औरतों को सरारा(कुर्ती) तथा दुपट्टा पहने दिखाया गयाहै ।[2]

इस प्रकार का फैशन किसी न किसी रूपमें चलता रहा ।[3]

ओढ़नी , घूँघट निचोल आदिका प्रयोग साड़ी के साथ नहीं होता है क्योंकि साड़ी के ऊपर वाला हिस्सा स्वयं ओढ़नी और घूँघट का काम करता

1- - कुमारमणि: रसिक रसाल , पृ066 छं0 49;
देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 104 छं0 301; रसविलास पृ0 221 छं0 19; सोमनाथ ग्रंथावली , रसपीयूषनिधि, ﴾पंचदशतरंग﴿ पृ0134 छं0 20; श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 38 ।

2- वही, पृ0 27 (जमीला)

3- वही, पृ0 44

है। कवियों ने विभिन्न रंगो तथा विभिन्न वस्त्रों से बनी ओढ़नी का उल्लेख किया है।[1]

ओढ़नी प्रायः अँगिया और लँहगा आदि के साथ ओढ़ी जाती थी :

लाल लहँगा पै नीली ओढनी बहार की ।[2]

<u>घाघरा या लँहगा</u> - लँहगा एक कटि वस्त्र है, जिसके दोनों सिरे मिलाकर ऐसे सिले रहते हैं कि उनके भीतर से होकर सूत्र उस वस्त्र को बांध सके।[3] किन्तु घाघरे या लँहगे का प्रचलन कब से हुआ, इस संबंध में

1- "ओढ़नी" - देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, नीली ओढ़नी पृ0 101 छं0 294; लाल ओढनी, पृ0 104 छं0 301; देव सुधा, 164/263; सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद पृ0 414; शशिनाथ विनोद (प्रथमोल्लास) सुरंग ओढ़नी, पृ0 502 छं0 8; रसपीयूषनिधि, ओढ़नी सूही, पृ0 152 छं0 5; भिखारीदास ग्रंथावली: नीली ओढ़नी, पृ0 92 छं0 24; चांचरि ओढनी पृ0 54 छं0 380; कपूर धूर को ओढ़नी, पृ0 99 छं0 46; असावरि ओढ़नी- पृ0 54 छं0 380; "मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, 341; बर्नियर, पृ0 272

2- - देव ग्रंथावली :सुखसागर तरंग, पृ0 101 छं0 294; पृ0 104 छं0 301; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास पृ0 502 छं0 8;

आईन-ए-अकबरी, भाग3, अनुवादक जैरेट, पृ0 312, ओढनी के लिए मुअज्जर शब्द इस्तेमाल किया है।

3- डा0 मोहन अवस्थी: हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 53

मतभेद है । कुछ लोगों के अनुसार घाघरे या लँहगे का प्रवेश भारत में कुषाण एवं गुप्तकाल में ही हो गया था ।[1] इसका प्रचार और प्रसार पाँचवी छठी शती में भारत आने वाली मध्येशिया की विभिन्न जातियों से हुआ । लगभग उसी समय ससानी ईरान के साथ भारत के सांस्कृतिक संबंधों से भी लँहगे के प्रसार में सहायता मिली जबकि -- -

कुछ अन्य विद्वानों का विचार है कि मुस्लिम शासन की कुछ शताब्दियों के बाद यह सर्वसाधारण में पूर्ण रूप से प्रचलित हो चुका था ।[2]

कोशाकारों ने घाघरा को संस्कृत 'घर्घर' का विकृत रूप माना है ।[3] जो समीचीन नहीं प्रतीत होता है क्योंकि हिन्दू काल में घाघरा का प्रचलन बिल्कुल नहीं था तथा तत्कालीन चित्रों, स्थापत्य कलाओं और साहित्यिक कृतियों में इसका उल्लेख नहीं मिलता ।[4]

1- डॉ० मोतीचन्द्र: प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 219

2- ए० एस० अल्तेकर: द पोजीशन आफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 365

3- आचार्य रामचन्द्र वर्मा, संक्षिप्त हिन्दी शब्द सागर, डॉ० किशोरी लाल, रीतिकालीन कवियों की मौलिक देन, पृ० 337

4- ए० एस० अल्तेकर, द पोजीशन ऑफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, पृ० 235 जमीला बृजभूषण, पृ० 92

उपर्युक्त कथनों से पूर्णतया स्पष्ट है कि घाघरा या लहँगा भारतीय वेश भूषा के अन्तर्गत नहीं आता किन्तु सम्प्रति इसे हिन्दू घरों में सांस्कृतिक महत्व प्राप्त है और विवाह आदि मांगलिक अवसरों पर पुत्रबधू को अन्यान्य वस्त्रों के साथ चूनरी और लहँगा दिये जाने का प्रचलन है विशेषकर राजपूताना, उत्तरी भारत और किसी सीमा तक मध्य प्रदेश में लंहगे का प्रचलन है ।[1]

कवियों ने निबन्धनीय परिधान के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के रंगो के लहँगो और घाघरे का उल्लेख किया है:

पुनि ललित पाट अंबर कौ लहँगा कटि तट मे लटकायौ ।

अरू पद पंकजनि लगायौ जावक मनो रजो गुन छायौ ।[2]

1- डॉ० किशोरी लाल रीतिकालीन कवियो की मौलिक देन, पृ०336

2- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद प्रथमो. पृ० 505छं० 34;

2- तोष सुधानिधि, लंहगो हरित, पृ० 103 छं० 303; पृ० 98 छं० 286; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, लाल लंहगा, पृ० 101 छं० ~~254~~; 294; आलम-आलमकेलि, पृ० 21 छं० 8; 'घाघरा' भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगार-निर्णय, पृ० 145 छं० 253; पृ० 144 छं० 252; 119/138; काव्यनिर्णय, पृ० 106 छं० 8; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ० 104 छं० 371; पृ० 83 छं० 216; पृ० 105 छं० 303; पृ० 74 छं० 215; शब्दरसायन पृ० 22, देवसुधा, 123/259; 90/167 पृ० 22; पृ०24; रसविलास, पृ० 202 छं० 23; मतिराम ग्रंथावली: सतसई, पृ० 695; तोष:सुधानिधि, पृ० 21 छं० 67; पृ061, छं0 438; पृ० 103 छं0302; पृ० 141 छं० 418; ~~देवसुधा पृ० 123 छं० 259, पृ० 90, छं०167~~, ए० ई० आई० अट्ठारहवी शती के अन्त का चित्र ~~चित्र~~ न० 670, स्त्री को घाघरा पहने दिखाया गया है; श्रीमती जमीला-बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ027, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 40; अंसारी, द हरम आफ द ग्रेट मुगल्स, पृ० 34; पृ० 112-113

घाघरा और लँहगे में यह अन्तर दिखाई पड़ता है कि घाघरा अधिक घेर का होता था और लँहगा कम घेर का। यद्यपि लहँगे के लिए कवि ने लहँगा "मुसरू धनवाँ" का उल्लेख किया है किन्तु यह स्पष्ट नहीं किया कि मुश्रू नामक वस्त्र से बने लहँगे में पूरे थान कपड़ा लग गया।[1] संभवत: चलते समय आगे की ओर झोंक लेते रहने के कारण ही कदाचित उसे लहँगा कहने लगे। और उसकी आगे की ओर लहक पर ही कवि का मन लुढ़क जाता है :

लाँक की लचक लसै लहँगा की ढिग ढुरै।[2]

लहँगे के विपरीत घाघरा बहुत अधिक घेर का होता है। इसका आयतन अथवा घेर स्कर्ट की भाँति दो भागों में विभाजित किया जाता है।[3] अधिकांशत: घाघरा मुस्लिम औरतों द्वारा पहना जाता था जिसकी प्रेरणा वास्तव में उन्हें राजस्थानी औरतों से मिली। यद्यपि इस परिधान को बनाना काफी जटिल या कठिन था[4] फिर भी स्त्रियाँ घाघरे नामक परिधान का काफी इस्तेमाल करती थीं।

1- तोष सुधानिधि पृ0 98 छं0 83

2- आलम- आलमकेलि, पृ0 21 छं0 8

3- श्रीमती जमीला ब्रजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 37

4- वही,

घाघरे के लिए अधिकाशत: कवियों ने "घूम घुमारे घाघरे, "घाघरे घनेरे" घाघरे की "घूम घेरदार घाघरो"का उल्लेख किया है जो स्वत: यह प्रमाणित करते हैं कि लहँगे की अपेक्षा घाघरे में अधिक घेर होता था ।[1]

लहँगा प्राय: तिकोनी पट्टियों कोसिलकर बनाया जाता है और घाँघरा कटि के पास घनी चुनन देकर सिला जाता है । इसलिए घाघरे के लिए प्राय: महीन कपड़े की जरूरत पड़ती है जबकि लहँगा मोटे, जरीदार सभी वस्त्रों के बन सकते हैं । मुगल चित्रों में पेशवाज के रूप में अंकित लहँगे बारीक वस्त्र के ही है पर पहाड़ी चित्रों में ये काफी मोटे जरीके काम से युक्त छपाई के कपड़ों द्वारा बनाये गयेहैं।[2] इस प्रकार के अन्तर का मुख्य कारण

1- भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, घाँघरे की घेर, पृ0 145 छं0 25; घाघरो घनेरो पृ0 119, छं0 138; तोष:सुधानिधि घेरदार, घांघरो पृ0 21छं0 67; मतिराम: सतसई, घने घेर की घाँघरो, पृ0 695; देव ग्रथावली सुखसागर तरंग. घाँघरे घनेरो, पृ0 74 छं0 215; एडिन ऊपर घूमत घाँघरो पृ0 105 छं0 303; शब्दरसायन घूम घुमारे घाघरे पृ0 24; देवशं घाँघरे की घूम अति घूमति घनेरिनि की, पृ0 104 छं0 301; घाघरे घनेरे पृ0 83 छं0 216; रसविलास, घाघरे घूम घुमारे पृ0 202 छं0 23; श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्साइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 92

2- भारत कला भवन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त, शाह आलम-कालीन चित्र, 1725 ई0 सौन्दर्य की लौ; विलासपुर 1780 ई0 शुक्लाभि सारिका, चित्र फलक 11-12, चित्र संख्या 1, 2

जलवायु प्रतीत होता है । कहीं-कहीं लहँगा और घाघरा दोनों ही महीन वस्त्र द्वारा निर्मित दिखाये गये हैं ।[1] घाघरे या लँहगे के प्रचलन से साड़ी की महत्ता कम नहीं हो पायी बल्कि विभिन्न वस्त्रों से निर्मित साड़ी इन वस्त्रों (घाघरा लहँगा) के साथ पहनी जाती रही ।[2] साड़ी पहनने का ढंग इस प्रकार था कि लहँगा या घाघरा साड़ी पहनने के बाद भी नीचे की ओर से दिखायी दे :

1- तोष: सुधानिधि लहरैं लहँगा मुसरू थनवाँ के पृ0 98, छं0 286; घेरदार, घाँघरो लसित मसरू को, पृ0 103 छं0 302; पृ0 81, छं0 67; घाघरो सिरिफ मसरू को, पृ0 141, छं0 418; भिखारीदास ग्रंथावली, काव्य निर्णय, (पंचम भाग) घाँघरो-झीन) पृ0 106 छं0 8; श्रृंगार निर्णय, पृ0 145 छं0 253; आइन-ए-अकबरी 32, अनुवादक ब्लाखमैन, पृ0 100 अबुलफजल ने मुस्रू महीन वस्त्र को कहा है।

2- देव ग्रंथावली : रस विलास पृ0 202 छं0 223; सुखसागर-तरंग, भिखारीदास ग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पंचम भाग, पृ0 106 छं0 8; श्रृंगार निर्णय पृ0 145 छं0 253; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 34

सारी असावरी की झलकै छलकै छवि घूम घुमारे ।[1]

पायजामा –

इजार, सूथन आदि विभिन्न प्रकार के पायजामे हैं और इन पायजामों का प्रचार कुषाण काल से माना गया परन्तु मुगल काल से ही इसे मुसलमानों की देन समझा जाता है ।[2]

कुछ प्रारम्भिक मुगल चित्रों में चगताई महिलाओं के अंकन में इस अधोवस्त्र का उल्लेख हुआ है यथा' जहाँगीर के जन्मोत्सव (1580ई0) संबंधी दो चित्र में जिनमें फतेहपुर सीकरी का दृश्य अंकित है, उस काल की वेशभूषा का यथार्थ अंकन हुआ है।[3] उत्सव में गाने-बजाने वाली हिन्दू स्त्रियाँ आधुनिक ढंग से साड़ी पहने हुयी हैं । साड़ी के ऊपर पटके भी दिख रहे हैं । साड़ी के नीचे तंग मुहरी का पायजामा है । सभी हिन्दू स्त्रियों के सिर पर साड़ी का पल्लू है । राजमाता और कुछ मुस्लिम स्त्रियाँ विशुद्ध चगताई वेश में हैं । बच्चे की माँ का वेश मुसलमान स्त्रियों से बिल्कुल भिन्न, हिन्दू स्त्रियों से मिलता है। धाय का वेश भी हिन्दू है । कहने का तात्पर्य यह है कि

1– देव ग्रंथावली: रसविलास पृ0 202 छं0 223; भिखारीदास ग्रंथावली, शृंगार, निर्णय पृ0 145 छं0 253; काव्यनिर्णय पृ0 106 छं08; तोष: सुधानिधि, कहै कवि तोष चोखो लहँगा हरित वह-
छवि फबि आई दरदावन किनारी की ।
–पृ0 103 छं0303

2– राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5, पृ0 28

3– कुमार स्वामी, मुगल पेंटिंग जिल्द 6, चित्रफलक 3–4

संस्कृति का मिला जुआ रूप यहाँ उपस्थित है हिन्दू और मुसलमान दोनों एक दूसरे के वस्त्र को अपनाये हुए हैं इसलिए संभव है कि मुसलमानों मे ही हिन्दुओं मे पायजामा का प्रचलन हुआ हो ।

पायजामा स्त्री तथा पुरूष दोनों ही प्रयोग करते थे ।[1]

कवियों ने इजार, सूथन का उल्लेख किया है :

लसत गूजरी ऊजरी बिलसत लाल इजार ।

हिये हजारनि के हरै बैठो बाल बाजार ।।[2]

इजार को तंग मुहरी का या कसा हुआ पायजामा बताया गया है जिसे ~~स्त्रियाँ~~ नीचे के वस्त्र के रूप के रूप में इस्तेमाल किया ~~करती~~ थी ।[3]

1- डेलावेली पृ0 411 ,

2- मतिराम ग्रंथावली: रसराज ,पृ0 221 छं0 96; मतिराम मकरन्द, छं0 94; मतिराम सतसई, पृ0 389 छं0 253; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 8 छं0 5; पृ0 9 छं0 6; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 56 छं0 26; जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, भूषण पृ0 24; अंसारी, भाग 34, द हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 112-113; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 341; बर्नियर, पृ0 272; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 39; आईन०, अनुवादक ब्लाकमैन, पृ0 96 ,

3- जे0यू0पी0 (हिन्दी) जुलाई 1942 पृ0 68-69; ओझा, पृ0 13, ~~प्रो0 एन0~~ मुहम्मदयासीन, वही ।

कवि ने गणिका के संदर्भ में पायजामें का अंकन किया है अन्य नायिकाओं के संदर्भ में इस वस्त्र का कम उल्लेख मिलता है ।[1]

पायजामा के अलावा कुर्ता[2] भी पहना जाता था ।

<u>नीवी फुफुदी</u>- घाघरा, लहंगा, इजार आदि को बांधने के लिए जिस डोरी का प्रयोग होता है उसे नीवी या नाड़ा कहा गया है।[3] प्राचीन भारतीय पुस्तक में नीवी शब्द कटि वस्त्र के लिए आया है ।[4] अनेक स्थलों पर नीवी के खुलने और कसने का प्रसंग आया है :

नीवी कसै उकसै नहिं देय, हंसै सतराइ त्रसै तन तोरे ,[5]

1- मतिराम: सतसई, पृ0 329 छं0 253; मतिराम मकरंद, पृ0 94; रसराज, पृ0 221 छं0 96; डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी, रीतिकविता, और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 56,

2- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ056 छं0 26; शिवाबावनी पृ0 8 छं0 5; थैवनॉट, चैप्टर X X पृ0 37; मनूची, भाग 2, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 347; बर्नियर पृ0 272

3- लल्लनराय: रीतिकालीन हिन्दी साहित्य मे उल्लिखत वस्त्राभरणो का अध्ययन पृ0 93 ।

4- महाभारत सभापर्व (गीता प्रेस) अध्याय 67, श्लोक 18, लल्लनराय वही)

5- देवग्रंथावली, : रसबिलास, पृ0 236 छं0 22; पृ0 236 छं0 23; पृ0 102, छं0 48; सुजानविनोद पृ0 52 छं0 26; भिखारीदास, ग्रंथावली, खण्ड1 पृ0 112 छं0 102; पृ0 116 छं0 127; पृ0 120 छं0 144; पृ0 131 छं0 193; पृ0 140, छं0 225; सोमनाथ ग्रंथावली, श्रृंगार विलास, पृ0 281 छं0 33 ।

नीवी को फुफुदो[1] भी कहा गया ।

परदा प्रथा चूँकि उस समय दृढ़ता से होती थी अतः जब मुस्लिम औरतें घर से बाहर ~~से-बाहर~~ जाती थीं तो बुर्का[2] धारण कर लेती थीं । जिसका उल्लेख कवि के अप्रत्यक्ष रूप से किया है :

अंदर से निकसी न मंदर को देख्यो द्वार
बिन रथ पथ पै उधारे पाँव जाती है ।
भूषन भनत सिवराज तेरी धाक सुनि,
हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं ।[3]

1- बाई भुजा फरकै अचकां सरकैं फुफुदो को फदो अतितंग है।
- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 103 छं0 73,
ब्रजेंद विनोद, 773/774/44, देव ग्रंथावली: सुजान विलास फुफदीन को फूँदै, पृ0 72 छं0 40, भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 7 छं0 29

2- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 9 छं0 13,
आइन-ए-अकबरी 31, ब्लाखमैनपृ0 96 (बुरके को अकबर द्वारा चित्र गोपिका नाम दिया गया था ।

3- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी पृ0 9 छं0 13,

दुसह ताप के कारण लोग कपड़ों का परिहार करते थे इसी कारण है कि मोजे[1] का प्रयोग स्त्रियाँ नहीं करती थीं । किन्तु पैरों में जूता धारण करती थी :

हाथ हरी हरी छाजै छरी, अरू

जूतो चढ़ो पग फूँद फुँदारो । [2]

उच्चवर्गीय स्त्रियां कढ़ाई वाले अथवा सजी हुयी जूतियाँ जिसमें फूँदने आदि लगे रहते थे धारण करती थीं :

जड़ाऊ जगमगात जवाहिर के,

जूतो जोती जावक जौती पग पाइ कें ।[3]

1- मिसेज मीर हसन अली-" आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स पृ0 80

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 105 छं0 303; पृ0 96 छं0 278; चतुर्थ भाव विलास, पृ0 123 छं0 5; रसविलास पृ0 4 छं0 15; पृ0 176 छं0 46; भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण पृ0 56 छं0 26; शिवाबावनी, पृ0 8 छं0 5; भूषण-ग्रंथावली 5/63; जगदीश गुप्त रीतिकाव्य संग्रह भूषण पृ0 24; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजान विलास, पृ0 742 छं0 34; ओविंगटन, पृ0 38; थैवनॉट, पृ0 52; बर्नियर, पृ0 240; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 42; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 39; मैन्डल्सो पृ0 51; शाह आलम कालीन चित्र सौन्दर्य की लौ, 1725 ई0 (ललनराय ... के प्रत्यक्ष से उद्धृत)

3- देव ग्रंथावली: चतुर्थ भाव विलास, पृ0 123 छं0 5; सुखसागर तरंग पृ0 105 छं0 303; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 1, पृ0 193; थैवनॉट पृ0 52; पी0 एन0 ओझा, ग्लिपसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 14 ।

पुरूषों की वेशभूषा : समाज के विविध वर्गों की वेशभूषा तथा आभूषण आदि उसकी श्रेष्ठ सभ्यता का माप दण्ड होते हैं । समाज के विभिन्न समुदायों की वेशभूषाओं, आभूषणों एवं सौन्दर्य प्रसाधनों में समय के साथ-साथ परिवर्तन होता है तथा उससे यह ज्ञात होता है कि समाज किस दिशा में उन्मुख हो रहा है ।

अट्ठारहवीं शताब्दी के समाज में सम्राट का सर्वोच्च स्थान था अतः उसकी वेशभूषा का विशेष महत्व होना स्वाभाविक था। सम्राट अपनी वेशभूषा केलिए विभिन्न प्रकार के बहुमूल्य कपड़ों , रत्नों नवीनतम डिजाइनों एवं अलंकरण पर अत्यअधिक धन व्यय करते थे परिणामतः वस्त्रों को देखकर ही सम्राट के गौरव एवं प्रतिष्ठा का अनुमान सहज ही लगाया जा सकताहै ।[1]

औरंगजेब के काल में सम्राट की वेशभूषा में विशेष परिवर्तन आया । उसने 1669 ई० में फर्मान द्वारा जरबफ्त को कपड़ा पहनना अवैध घोषित कर दिया । यद्यपि इसका प्रयोग बन्द नहीं हुआ । उसने स्वयं सादे वस्त्रों को प्राथमिकता देनी प्रारम्भ की । वह सादी पगड़ी लगाता था जिसमें केवल एक छोटा सरपेंच तथा मध्य में सामने की ओर केवल एक बहुमूल्य पत्थर लगा होता था। अधिक से अधिक कंधे पर साधारण काश्मीरी डाल लेता था तथा उसकी कबा का मूल्य 10 रू० से अधिक नहीं होता था ।[2]

1- के० एम० अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ दि पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, पृ० 175

2- मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 319,

नोट

जरबाफ - जरबाफ वह कपड़ा था जिस पर जरी या कलाबत्तू (तुर्की कलाबतुन) के बेल-बूटे या आकृतियाँ बुनी गयी हो। कलाबत्तू उस रेशमी धागे को कहते हैं, जिस पर सोने का मुलम्मा चढ़ाया गया हो। जरबाफी में सुनहले तार रेशमी कपड़ों के साथ मिलकर बुन दिये जाते हैं।

- आईन0 32, ब्लाख़मैन, पृ0 98

काबा : काबा- सुल्तानों के द्वारा पहने जाने वाला कसा हुआ घाघरा था जो कि ऋतु के अनुसार महीन मलमल अथवा ऊन का बना हुआ होता था। प्रारम्भ से ही सुल्तान काबा का प्रयोग करते थे। सुल्तान मसूद, तारीख-ए- बैहकी पृ0 78; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 13, मैन्डस्लो, पृ0 28, ओविंगटन पृ0 314, अर्ली ट्रैवेल्स इन इंडिया, अनुवादक फास्टर, पृ0 18, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ039-40 काबा अधिकांशत: सफेद रंग का होता था। वही मुहम्मद यासीन।

सामान्यत: उच्च वर्ग के लोग तंग पायजामें जामा, कमरबन्द (पटका) बोरा) पगड़ी) आदि का प्रयोग करते थे ।[1]

जाड़ों में खाल के कालर से युक्त नीम आस्तीन अथवा नीमतना भी पहनते थे । सिर पर जरी के काम से अलंकृत खिड़कीदार बोरा होता था जिसे बाँधने केलिए विशेष ध्यान दिया जाता था । कभी-कभी बोरा बाँधने में चार- पाँच घंटे का समय लगता है ।[2]

चूँकि अट्ठारहवीं शताब्दी में विलासिता अपनी चरम सीमा पर थी अत: स्त्री अपने वस्त्र बनाव श्रृंगारपरस्वयं तो ध्यान देती ही थी पुरूष भी उसके सौन्दर्य को बहुमूल्य वस्त्रों तथा आभूषणों आदि से बढ़ाने में प्रयत्नरत रहता था परिणामत: स्त्री के वस्त्राभूषण की ओर कवियों का ध्यान भी बरबस ही खिंच गया और कवियों ने स्त्रियों के वस्त्राभूषण काभरपूर वर्णन किया । ऐसी स्थिति मे पुरूषों के वस्त्रादि का वर्णन अधिक नहीं किया गया जो संभवत: स्वाभाविक ही था ।

पुरूष मौसम के अनुसार योग्य तथा साधारण वस्त्र धारण करते थे जो कि अधिकांशत: सिल्क(रेशमी) अथवा सूती कपड़े के बने होते थे जिसे लोग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुरूप पहनते थे ।[3]

1- डॉ0 मो0 उमर "मीर का अहद पृ0 197, देहली, 1973

2- जहीरूद्दीन मलिक- रिआइन ऑफ मुहम्मदशाह पृ0 363 -64;(नीमतना वस्त्र का एक प्रकार है)

4- श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 39 ।

पीताम्बर, काछनी या धोती - पीताम्बर जैसा कि इस शब्द से ही स्पष्ट है, ऐसा वस्त्र जिसका वर्ण पीत (पीला) हो ।

पीताम्बर पहनने की परम्परा विष्णु और फिर कृष्ण के लिए निश्चित था । चूँकि अधिकांशत: कवियों ने कृष्ण को ~~कृष्ण को~~ नायक के रूप में माना है अत: पीताम्बर का पुरूष-वेश के लिए उल्लेख स्वभाविक है :

मुरलीधर गिरिधरन प्रभु पीतांबर घनस्याम ।

बकी बिदारन कंस अरि चीरहरन अभिराम ।[1]

पीताम्बर का प्रयोग काछनी तथा धोती दोनों के लिए हुआ है ।[2] कवियों ने काछनी[3] तथा धोती[4] का उल्लेख किया है ।

1- मतिराम: सतसई पृ0 425 छं0 699; भिखारीदास, छंदार्णव, पृ0 22। छं0 45

2- लल्लनराय: रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखत वस्त्राभरणो का अध्ययन, पृ0 98

3- "काछनी", कुंडल, मुकुट, कटि काछनी, तिलक भाल ,
सोमनाथ कहैं मंद गवन मनोहरा ।
- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 49 छं0 49;
श्रृंगार विलास पृ0 290 छं0 21 ; पृ0 601 छं0 69; माधव विनोद, पृ0321 छं0 3; मनूची; स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ0 38; आस्पेक्ट्स आफ बंगाली सोसाइटी, पृ044

4- 'धोती'" लकुट रंगीन पीतपट धोती । पगन पाँउडी कानन मोती ।
- बोधा, विरह, वागीश, पृ0 168 छं0 74
पृ0 69, छं0 18; उपरोक्त ।

तत्कालीन चित्रों में धोती का स्पष्ट अंकन हुआ है । कृष्ण, वासुदेव, नन्द, श्रीनाथ आदि सम्मानित व्यक्तियों के अंकन में यह घुटने के काफी नीचे तक दिखायी गयी है । गोपों या चरवाहों के अंकन में यह घुटनों के ऊपर तक जाँघिए या कच्छे जैसी दिखायी गयी है ।[1] तत्कालीन समय में धोती दो प्रकार से पहनी जाती थी । पहले ढंग में जो प्रायः कृष्ण के अंकन में ही दिखाया गया है धोती की दोनो लाँग (छोर) पीछे खोंस ली जाती थी । फिर धोती घुटनों के काफी नीचे तक रहती थी । दूसरे तरीके मेंएक लाँग बाँधकर पहनने काप्रचलन था । इस प्रकार से पहनी गयी धोती में उसका छोर घनी चुनन के कारण सामने कलात्मक ढंग से लहराता दृष्टिगत होता है ।[2]

धोती और काछनी में एक विशेष बात यह रही कि . काछनी बचपन का ग्रामीण पहनावा है ।[3] धोती प्रौढ़ावस्था का नागरिक एवं सम्मानित पहनावा था नन्द के लिए सदैव धोती का उल्लेख हुआ है । तथा कृष्ण के मथुरा

1- भारत कला भवन, बनारस में प्रदर्शित चित्र राधाकृष्ण 402; कृष्ण को ले जाते हुए वसुदेव 713; श्री नाथ जी, 540 और 1479 दावाग्नि के लपटे को निगलते हुए गोपों को साथ कृष्ण 602, लल्लनराय, पृ0 98

2- जोधपुर शैली का चित्र, फूलझरी, 1650-1750 ई0के मध्य, राधा-कृष्ण गुलेर, लगभग 1760 ई0

- भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से प्राप्त लल्लन, चित्रफलक 11-12

3- सूरसागर पद 307 , 1251, 2007 आदि ।

चले जाने पर गोपिया कहती हैं -"अब मुनियन हैं धोती पहिरे चढ़े खराऊँ न्हात"[1]

स्त्रियों की झाड़ी नामक वस्त्र की भाँति धोती भी अत्यन्त प्राचीन वस्त्र है ।[2]

उत्तरी या पिछौरी - उत्तरीय या चादर तह करके कंधे पर बिना साफ किये कई दिन तक ली जा सकती थी । जब उसका ऊपरी भाग गन्दा हो जाता था तब उसे नीचे करके साफ भाग ऊपर कर लिया जाता था। - और कभी-कभी उत्तरीय बिना तह किये ही कंधों पर डाल लिया जाता था । ऐसा करने पर उसमें एक स्वभाविक चुनन सी बन जाती थी तथा कामदार किनारे बड़े कलात्मक ढंग से अगल-बगल या आगे-पीछे लहराते रहते थे ।[3]

कवि ने पिछौरी को भी पुरूषों के चादर के अर्थ में ही लिया है :

उत हेरी हेरत कितै ओढ़े सुबरन कांति ।

पीत पिछौरी रावरी वहै जरकसी भाँति ।।[4]

1- वही, पद 4445, यह कहि नन्द गए जमुना तट । ले धोती झारी विधि कर्मिष्ट
सूरसागर- पद 1602 ।

2- डॉ0 मोतीचन्द्र: प्राचीन भारतीय वेश भूषा पृ0 38 (पाँच प्रकारसे धोती पहनने का उल्लेख किया है) ।

3- आइन-ए- अकबरी, ब्लाखमैन पृ0 98; भारत कला भवन काशी हिन्दू विश्व-विद्यालय से प्राप्त चित्र, फूलझरी जोधपुर शैली का चित्र, 1650-1750 ई0 के मध्य, कृष्ण ने शाल की तरह उत्तरीय लिया है। राधा-कृष्ण, गुलेर लगभग 1760 ई0 चुनन पड़ी उत्तरीय कृष्ण ने धारण किया है ।

4- भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 46 छं0 304; (इस छंद में पिछौरी नायक की है जिसे पहचान के लिए उसने नायिका को दे रखी है) रससारांश पृ0 46 छं0 316; पृ0 53 छं0 374; पृ0 26 छं0 175; देव ग्रंथावली: पृ0 60 छं0 16; मतिराम: ललितललाम, पृ0 336 छं0 223; कुमारमणि रसिक रसाल, पृ0 95 छं0 115; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग : पृ0 121 छं0 47; मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 38-39

पिछौरी अथवा उत्त[illegible]य को [illegible] [illegible]-पट्टी भी कहा गया जिसे कमर में भीबाँधा जाताथा :

सोंवत तें सखो जान्यो नहों, वह मोवत तें घर आयौं हमारे

पोत पटो कटि सौं लिपटो अरू सांवरो सुन्दर रूप सँवारे ।[1]

कमर में बाँधने वाले इस वस्त्र का रंग अधिकांशत: पोला बताया गया है :

मुरलो अधर मुकुट सिर दोन्हे है । कटि पट-पोत लकुट करलोन्हे है ।[2]

1- देव ग्रंथावलो: द्वितोय भाव विलास: पृ0 46 छं0 21; देव ग्रंथावलो: पृ0 41, छं0 3;27; 74/68; भिखारोदास ग्रंथावलो: छंदार्णव, पृ0 199, छं0 165; काव्यनिर्णय, पृ0 40 छं0 611; सोमनाथ ग्रंथावलो: रसपोयूषनिधि, त्रयोदश तंरग, पृ0 122 छं0 50 ; 121/44; पंचदशतरंग, पृ0 138 छं0 18; पृ0 134 छं0 19; षोडश तरंग, पृ0 139 छं0 10; रासपंचाध्यायो, प्रथमोध्याय पृ0 236 छं0 80; माधवविनोद पृ0 321 छं0 3; ध्रुव विनोद, पृ0 556 छं0 63; श्रृंगारविलास पृ0 601 छं0 69; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 55 छं080; पो0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 12,

2- भिखारोदास ग्रंथावलो: छंदार्णव पृ0199 छं0 165; काव्यनिर्णय, पंचमोल्लास, पृ0 40 छं0 11; देव ग्रंथावलो: पृ0 35 छं0 240; भाव विलास, पृ0 46 छं0 21; कुमारमणि: रसिक -रसाल पृ0 55 छं0 80; सोमनाथ ग्रंथावलो, रासपंचाध्यायो, पृ0 236 छं0 80; श्रृंगारविलास, 601 छं0 69; रसपोयूषनिधि पृ0 139 छं0 10; पृ0 134 छं0 19; पृ0 122छं0 50; पृ0 123 छं0 51; 134 छं0 18; 120 छं0 44

पटुका - पटुका जिसे कमरबंद/कहा-पोत-पटो का भाँति कमरसे बाँधा जाता था :

ऐंठवा फेंटा सजै सिर पै अरू भाल पै चंदन बिंदु बनायो
आगिलै बंदन बानै बन्यों रू बड़ो कटि पै पटुका लपटायो ।[1]

वस्तुत: पटुका मूल रूप में सैनिकों केलिए था, जो जामा या अधोवस्त्र को अस्त्र-व्यस्त होने से बचाने के साथ ही हथियार आदि लटकाने के उद्देश्य से धारण किया जाता था ।[2] बाद में यहवेशभूषा का अंग होकरतथा सामान्य लोगों द्वारा भी बाँधा जाने लगा ।

जामा - भगवान के विग्रह को मान्यता भी शासक के रूप में थी, इसलिए मध्यकाल में आराध्य के किरीटो में तुर्रे का प्रचलन शाही प्रभाव सेही हो गया था । कुछ स्थानों पर राम और कृष्ण को जामा पहनाये हुए दिखलाया गया है ।[3]

1- "पटुका" - सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद , पृ0 334, छं0 2; ब्रजेंदविनोद , पृ0 649, छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव , पृ0 206 छं0 199; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 12; आइन-ए-अकबरी, ब्लाखमैनन 32, पृ099

2- आईन; उपरोक्त ।

3- डॉ0 वेंकट रमण राव, रीतिकालीन साहित्य की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि, पृ0 243-244

जामा मुगल राजपूत काल का सर्वाधिक सम्मानित वेश था । यह पूरी बाँह का, स्त्रियों के पेशवाज जैसा पहनावा था ।[1]

जामें का मूल स्थान मध्येशिया और चीन बताया गया है और जामें का सर्वप्रथम अंकन मथुरा की कुषाण कला में हुआ है ।[2]

जामा एक प्रकार का कोट माना गया जो सूती तथा रेशमी दोनों प्रकार के वस्त्रों से निर्मित होता था ।[3]

कवि ने जामें नामक वस्त्र का उल्लेख निम्न प्रकार से कियाहै :

पहिरत जामाझीन के चहुँधा लगि झुम्यो ।

बंदन बाँधतहू दुहूँ हाथनि में धूम्यो ।[4]

प्रस्तुत उद्धहरण से यह अवश्य पता चलता है कि जामें में बाँधने केलिए बंधन होता था परन्तु यह बंधन किस ओरबांधा जाता था यह स्पष्ट नहीं है । तत्कालीन चित्रों से स्पष्ट है कि हिन्दू जामें के बन्द के बाईं ओर तथा मुसलमान दाहिनी

1- आईन·31, ब्लाखमैनन्, पृ0 96;पेशवाज पूरी बाँह की कंचुकी तथा लँहगे की मिलाकर बनी हुयी स्त्रियों की पूरी पोशाक है)। राजपूत पेंटिंग, जिल्द 5, पृ0 33

2- राजपूत पेंटिंग जिल्द 5, पृ0 26

3- श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 31,

4- भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव, पृ0 206 छं0 199; आईन·भाग, 1, पृ0 88 पृ0 92 ।

ओर बाँधते है ।[1]

दुपट्टा : स्त्रियों की भाँति पुरूष भी दुपट्टा धारण करते थे परन्तु उनके पहनने की शैली में अंतर था । पुरूष विभिन्न शैलियों से दुपट्टा धारण करते थे ।[2] कुछ लोग इसे स्त्रियों की भाँति कंधों पर डाल लेते थे कि उसका एक छोर तो बाएं कंधे से होता हुआ नीचे लटकता है तथा दूसरा छोर दाहिने हाथ से होता हुआ नीचे की ओर लटकता रहता है। अन्य विधि में कमर से लपेटते हुए बाएं कंधे से नीचे की ओर लटकता रहता है । इस प्रकार कमरबंद की भी भाँति दुपट्टा भी वस्त्रों की परम्परा में प्रमुख स्थान रखता था ।

कवि ने कटि में बंधा हुआ दुपट्टा दिखाया है :

पाग सुरंग सुगंध सनी दुपट्टा कटि अंबर ओप जगावतु ।[3]

1- मुगल पेंटिंग , जिल्द 6, कुमारस्वामी, चित्रफलक 34; तथा श्रीमती जमीला बृजभूषण : , पृ0 57 और पृ0 50 का चित्र-2 ,अट्ठारहवीं शती की पहाड़ी चित्रकला ; अट्ठारहवीं शती की राजस्थानी परम्परा ; चित्र 4, पृ0 50

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 57, चित्र सं0 1, 4, 5 (फीमेल कास्ट्यूम्स इन एट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी, पेंटिंग ।

3- सोमनाथ माधव विनोद, पृ0 335छं0 9

झगा : भारतीय पोशाक कोट का पर्यायवाची अंगरखा तथा झगा चीने कोट के अनुरूप भुजाओं की दिशा में हल्की चुन्नट देकर निर्मित थे ।[1] कवियों ने झगा के संदर्भ में जो उल्लेख किया है उन्हें देखने मे पता चलता है कि झगा महीन पारदर्शी तथा सफेद कपड़े का बनता था :

> झीने झगा बिलोकियत नख-छत छवि धर नाह ।
> भले विराजत ये नए चंद्रहार हिय माह ।[2]

कवियों ने पीत झगा का भी उल्लेख किया है :

> पीरो झगा पटुका बिन छोर कर लाल जरी सिरपेंटा ।[3]

1- श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 30 तथा पृ0 38

2- मतिराम: सतसई पृ0 411 छं0 541; छं0 364; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 2, पृ0 177 छं0 15; सोमनाथ, रस. जे0 ए0 एस0 पी0 ~~78/24~~ 78 इ 24; 1935, 1, पृ0 275, ट्रेवेर्नियर पृ0 132

3- देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 176 छं0 46; मतिराम सतसई, पृ0 425 छं0 700; भिखारीदास ग्रंथावली; रससारांश, पृ0 85 छं0 582; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 156 छं0 1

झगा नामक वस्त्र बड़े और बच्चे दोनों पहनते थे :

चिरकुरारी मनोहर पीत झँगा पहिरे मनि-आँगन में विहरैं ।[1]

संभवत: बच्चों के झगा से तात्पर्य झबला (झँगुलिया) से होगा :

पीत झँगुलिया पहिरि के लाल लकुटिया हाथ ।

धूरि भरे खेलत रहे ब्रजवासिन ब्रजनाथ ।[2]

पाग या पगड़ी : तत्कालीन समाज में उच्चवर्गीय पुरूषों द्वारा प्रयोग की जाने वाली पगड़ी अत्यन्त सजी हुयी होती थी उस पर जड़ाऊ सिरपेंच या कलँगी खोसी जाती थी :

1- भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 85 छं0 582; मतिराम सतसई, पृ0 411 छं0 514; पृ0 425 छं0 700; देवग्रंथावली: रसविलास, पृ0 176 छं0 46; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 156 छं01; माधवविनोद पुरूष झगा 327/60;

झगा पागमनि कुंडल हारै ।।

पहिरे नर सब सोहत भारी ।।

- सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 23, पृ0 649 छं0 21; पृ0 650 छं0 21; रसपीयूषनिधि, त्रयोदश तरंग 23 पृ0121;

2- मतिराम सतसई, पृ0 425 छं0 700; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश पृ0 85छं0 582; देवग्रंथावली: देव चरित्र पृ0 7 छं0 21

पचरंग पाग लटपटी तिसपै कलगी [illegible] है ।

कुंडल श्रवन कमल से लोचन चन्द वदन उ[illegible]रो है ।[1]

कवियों ने पाग का वर्णन श्रृंगार के विभिन्न परिवेशों में किया है :

(क) पाग का स्वतन्त्र वर्णन ।

(ख) पाग का खण्डिता नायक के प्रकरण में वर्णन ।

स्वतंत्र पाग के वर्णन में एक ओर कवि की दृष्टि परम्परा की लोक पाटने की अपेक्षा हृदय के उल्लास और उमंग से अधिक अनुप्राणित हैं संभवत: उल्लास में मग्न नायक ने (बाहर जाते समय) जल्दी में सिर पर टेढ़ी पाग धारण कर ली है :

जरकसी पाग टेढ़ी काछनी करूँ भी कहें ।[2]

टेढ़ी पाग अप्रत्यक्ष रूप से यह प्रमाणित करती है कि पाग सम्मानित और सम्पूर्ण परिधान का एकअंग था । जिसे बाहर जाते समय जरूर लगाते थे । अत: नायक को पाग सिर पर लगाना जरूरी था भले वह भली प्रकार से न लगाया गया हो ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: प्रेमपचीसी पृ0 893छं017, ब्रजेंद विनोद, पृ0 708 छं0 23, श्रृंगार विलास 290/21, बोधा, विरह वागीश, पृ0 68 छं0 14, औरंगजेबनामा: द्वितीय भाग, अनुवादक मुंसिफ पृ0 118, श्रीमती जमीला बृजभूषण: द कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 40

2- सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास, पृ0 290, छं0 21, श्रीमती जमीला बृजभूषण: द कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ0 40, मैन्डल्सो, पृ0 53, डीलेट, पृ0पृ0 80-81, जे0यू0पी0 हिस्ट्री जुलाई, पृ0 68-69 ।

पाग की चर्चा खण्डिता प्रकरण में इस प्रकार की गयी है :

कसु के उधारत हौ फलक पलक ग्यातें,

पालिका में पौढ़ि श्रम राति को निवारिये ।

लटपटैं पेंचसिर बात न कहत बनै,

लटपटे पेंचसिर पाग के सुधारिये ।।[2]

प्रस्तुत छंद में लटपटें शब्द का व्यंग्य ध्यात्व है। पाग को बाल केसाथ बाँधा जाता था अतः नायक के बाल से पगड़ी के साथ बंधे हैं किन्तु पगड़ी अस्त्र-व्यस्त हो गयी है और सिरपेंच ढीला पड़ गया है सबसे प्रमुख बात यह है कि नायिका के बालों से पगड़ी पटी पड़ी है । यह लटपटे का यह अर्थ है ।

इस उद्धहरण में छोटे से वस्त्र पाग के माध्यम से समाज में व्याप्त विलासिता को ओर संकेत है साथ ही यह भी महत्वपूर्ण बात है कि विलासिता में मग्न यह पुरूष उच्च वर्ग से भिन्न है क्योंकि उच्च वर्ग के पास अन्तःपुर हरम आदि होते हैं जिसका इसके पास अभाव है ।

1- मतिराम: श्रृंगार सुधाकर, सं0 मन्नालाल द्विज, पृ0 189; देव्र
देवसुधा: पृ0 138 ।

इस प्रकार पुरूष वर्ग के लिए पाग महत्वपूर्ण सम्मानित वस्त्र था जिसे उच्च निम्न जिसे सभी वर्ग सिर पर लगाते थे।[1]

पाग बाँधने की विभिन्न शैलियाँ तत्कालीन समय में प्रचलित थीं जिसमें एक प्रकार खिड़कीदार पाग बाँधने का भी था :

छूटि गयो मान लगी आपु ही संवारन कौं,
खिरकी सुकवि "मतिराम" पिय पाग की ।[2]

पगड़ी बांधने की शैली जाति विशेष तथा स्थान को सूचित करती है ।[3]

1- देव प्रेमपचीसी पृ0 892 छं0 17, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 78 छं0 24; पृ0 156 छं0 1; पृ0 60 छं0 7; फेंटा पृ0 121 छं0 45; पृ0 124 छं0 7; ब्रजेंदविनोद, पृ0 649 छं0 21; पृ0 514 छं0 11; पृ0 467 छं0 64; पृ0 708 छं0 23; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 28; पृ0 78 छं0 190; मतिराम: रसराज पृ0 67 छं0 48; पृ0 280 छं0 351; श्रृंगारविलास, पृ0 290 छं0 21; माधवविनोद, पृ0 327 छं0 59; बोधा, विरह वागीश: पृ0 68 छं0 14; मैन्डलसो पृ0 63; ओविंगटन पृ0 314; थैवनॉट, भाग3, पृ0 36; मुहम्मदयासीन: ए सोशलहिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया। जे0यू0पी0 हिस्ट्री सोसाइटी जुलाई, 1942 पृ0 68-69; श्रीमती जमीला बृजभूषण: द कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 40; पाग को प्रस्तुत छंदों में कही-कहीं फेंटा तथा पगड़ी कहा गया है।

2- मतिराम ग्रंथावली: रसराज पृ0 130; लटपटीपेंच; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 121 छं0 45; मतिराम रसराज, पृ0 67; जमीला बृजभूषण, वही।

3- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 50, पर चित्र 1 में कृष्णगढ़ की छोटी पगड़ी चित्र 3-4 जोधपुर की लम्बी पगड़ी इसी प्रकार पहाड़ी चित्रकला की छोटी पगड़ी चित्र 3-4 जोधपुर की लम्बी पगड़ी इसी प्रकार चित्रकला में चित्र 1, 2, 4, 5 तथा 6 में पुरूषों द्वारा विभिन्न की पगड़ी धारण की गयी है।

टोपी: पगड़ी के अलावा टोपी भी प्रचलित थी :

गुहे, गुभुआरे, घुघरारे, बार सोहैं सिर मोतीबीच बनक कनक
कनवारी के ।

झीनो पोत झँगुली झलक अंगु लीने लसे, झिलमिले टोपी रूप ओप
सी लिलारी के ।[1]

जूता – पुरूष वर्ग पैरो में जूता पहनते थे इसका उल्लेख कवियों ने किया है :

लकुट रंगीन पीतपट धोती । पगन पाँउडी कानन मोती ।[2]

1– देव ग्रंथावली: देवचरित्र, पृ07 छं0 21; देवमाया प्रपंच, पृ0 228 छं0 15; मैन्डली पृ0 35; जे0यू0पी0 हिस्ट्री सोसा0 1942 पृ0 28, पृ068–69; श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया पृ028

2– बोधा: विरह–वारीश, पृ0 168 छं0 74; सोमनाथ ग्रंथावली; सुजान वि0 पृ0 742 छं0 34; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड1, पृ0 54, छं0 380; देव ग्रंथावली रसविलासपृ0 176 छं0 46; (जूते को पाँउड़ी भी कहा गया है) स्टेवोरीनियस, 1, पृ0 414–15, थैवनॉट, चैप्टर XX पृ037; ट्रेवेर्नियर। 291; मुहम्मदयासीन ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 40; श्रीमती जमीला बृजभूषण कास्ट्यूम्स – – – में विभिन्न प्रकार के जूते पहने हुए पुरूषों के चित्र मिलते है पृ0 50 चित्र 3 पृ0 57 चित्र 6; राजस्थानी परम्परा, पहाड़ी चित्रों में पृ0 52 चित्र 2 आगे की ओर नुकीली तथा ऊपर को ओर उठी हुयी नुकीली जूते का अंकन है।

वस्त्रों को रँगाई, छपाई : वस्त्रों की रँगाई का व्यवसाय पारम्परिक रूप से रंगरेजों द्वारा किया जाता रहा किन्तु रंगरेजों की आर्थिक एवं सामाजिक दशा ठीक न थी । कलाकार की कला के अनुसार उनको कम वेतन मिलता था ।[1]

कपड़ों को अच्छी तरह रँगने के लिए एक कार्बनिक अवयव कुसुम्य का प्रयोग किया जाता था जो रेशमी वस्त्रों को रंगने के लिए बहुत ही अच्छा माना गया इसमें चमकीले रंग विशेषकर नारंगी रंग बहुत ही अच्छा उभर कर आता था ।[2] लोधरा वृक्ष की छाल का इस्तेमाल रंगाई के लिए तथा कमीला पाउडर लाल रंग की छपाई के लिए इस्तेमाल होता था ।[3]

कपड़ों की रँगाई के संदर्भ में विशेष बात यह थी कि भली प्रकार रंग चढ़ाने के लिए कपड़े को तीन बार रँग में डालना पड़ता था :

" त्यौं पट में अति ही चटकीलौ चढ़ै रंग तीसरी बार के बौरै ।[4]

तत्कालीन समय में प्रयुक्त किये जाने वाले कुछ विशिष्ट वस्त्र -

(1) बादला: यह विशुद्ध सोने का चिपटा तार होता है जिसका प्रयोग

1- श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 64

2- वही, पृ0 62

3- वही, पृ0 62

4- मतिराम ललितललाम पृ0 छं0 9; तोष-सुधानिधि पृ0 34 छं0 102

विशेष रूप से कामदानी साड़ी के निर्माण के लिए किया जाता है ।[1]

§2§ मुसरू या मिश्री: यह शब्द सूती और रेशमी धागों के मेल से बने मलमल जैसे वस्त्र के लिए प्रयुक्त हुआ है । मुसरू का घाँघरा और लँहगा बनाये जाने का उल्लेख है ।[2]

§3§ कपूर घूर : कपूरघूर एक प्रकार का महीन रेशमी कपड़ा है जिससे साड़ी ओढ़नी आदि बनायी जाती थी ।[3]

1- "बादला" - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, बादले की साड़ी पृ0 165 छं0 26; पृ0 642 छं0 100; देव ग्रंथावली: भावविलास, पृ0 123 छं0 5; शब्दरसायन, पृ0 71; खाफी खाँन, मुन्तखब-उल-लुबाब;, इलियट एण्ड डाउसन पृ0 269; भाग 8, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; आइन-ए-अकबरी, भाग 1, पृ0 50 ।

2- 'मुसरू' -तोष सुधानिधि- लहँगा मुसरू धनवाकी, पृ098, छं0 286; घाँघरो ललित मुसरूकी पृ0 21 छं0 67; घाँघरा सिरिफ मुसरू की, पृ0 103, छं0 302 एम0 ए0 शास्त्री, आउटलाइन्स ऑफ इस्लामिक कल्चर, 1954 पृ0 225; जाफर शरीफ : कानून ए इस्लाम अनुवादक जी0ए0 हरक्लार्ट्स, लॉज इस्लाम इन इंडिया, पृ0 300; मुहम्मद यासीनः ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 39, फुटनोट से उद्धृत ।

3- 'कपूर घूर' - भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, कपूरघूर की साड़ी, पृ0 124 छं0 165; कपूरघूर ओढ़नी, पृ0 99 छं0 46; आईन; 31, पृ0 97

§4§ पंचतोरिया : पंचतोरिया अत्यन्त महीन हलका एवं पारदर्शी सूती कपड़ा है, जिससे साड़ी बनायी जाती थी, पाँच तोले के वजन के बराबर होती थी ।[1]

§5§ असावरी : असावरी हल्के श्याम रंग और सफेद रंग के धागों से बनाया जाता था जिससे साड़ी तथा ओढ़नी दोनों बनती थी ।[2]

§6§ खासा : खासा एक प्रकार का महीन सूती कपड़ा बताया गया है जिसका प्रयोग चूनरी तथा धोती के लिए किया जाता था ।[3]

§7§ तनसुख : मलमल की तरह का अत्यन्त बारीक तथा कीमती कपड़ा साड़ी आदि बनाने के काम में लाया जाता था ।[4]

§8§ लहरिया :- यह एक प्रकार का सूती कपड़ा है जो काफी पहले से प्रचलित था इसकी छपाई लहर जैसी टेढ़ी-मेढी होने के कारण लहरिया कहा गया है ।[5]

§9§ बाफ्ता - बाफ्ता को सूती वस्त्रों की श्रेणी में रखा गया जिससे कंचुकी आदि बनती थी ।[6]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग , छं0 120, सुजान विनोद पृ068 छं025 सोमनाथ ग्रंथावली , श्रृंगारविलास पृ0 603 छं0 80, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इण्डिया पृ0 41 ,

2- सारी असावरी की...
- देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0 202 छं0 223, भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय पृ0 145, छं0253, :काव्यनिर्णय, पृ0 106 छं08, ।

3- तोष-सुधानिधि - चुनि चुनरी पहिरी चारू खासे की
- तोष सुधानिधि पृ0 119 छं0 350

4- देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ0 7 छं0 67 रसविलास, पृ0 193 आईन॰ 32 ब्लाखमन पृ0 100

5- देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 220 छं0 12,

3- कंचुकी बाफ्ते -...

§10§ तास : तास विशिष्ट कोटि का मखमल होता है जिस पर जरदोजी का काम होता है। इसका मुख्य कार्य क्षेत्र गुजरात था। इससे अंगिया आदि बनायी जाती थी ।[1]

§11§ जरतारी या जरकसी : जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है ऐसा कपड़ा है जिस पर सुनहले तार टँके हों या जरी से बेल-बूटे बनाए गये हों । इस प्रकार से निर्मित साड़ी पाग आदि का उल्लेख मिलता है ।[2]

तत्कालीन वस्त्रों पर प्राचीन प्रभाव और सामाजिक परिस्थितियाँ -

ऊपर शलवार, सूथन साड़ी अंगिया घाघरा, लहँगा आदि का जो विवेचन किया जा चुका है, इनका प्रचलन मुसलमानों के आने के बहुत पहले से था । मौर्य काल की समाप्ति और गुप्तकाल के आरम्भ के बीच पाँच-छः सौ वर्षों का जो अंतराल है उसमें शुंग, कुषाण, शक, सीथियन आदि जातियाँ भारत के अनेक भागों पर शासन करती रहीं और सिले हुए वस्त्रों का प्रचलन इन्हीं शासकों के काल में हुआ क्योंकि ये सभी प्रायः ऐसे देशों से आये थे, जिनके यहाँ सिले वस्त्रों का सामान्य प्रचलन था ।[3] तीसरी से सातवीं शती तक उनकी वेशभूषा भारतीयों

1- देव ग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ0 47 छं0 5; आईन' 32; ब्लाख़मैनन, पृ0 98

2- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, जरतारी सारी, पृ0 328 छं0 68; देव-ग्रंथावली: सारी हरी जरतारी पृ0 11 छं0 47; मतिराम: ललितललाम, सारी जरतारी की, पृ0 356 छं0 334; बोधा: विरह वागीश, जरकसी तुर्रा, पृ0 68 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली: जरकसी पाग, श्रृंगार विलास, पृ0 290 छं0 21; रसपीयूषनिधि, पृ0 121 छं0 45

3- डा0 मोती चन्द्र: प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ0 185-186

में इस प्रकार अभिनिविष्ट हो गयी कि इस सम्बन्ध में भारतीय-अभारतीय का भेद ही समाप्त हो गया। यहाँ तक कि विशुद्ध भारतीयता के संरक्षक गुप्त शासक भी सैनिक एवं शासक के रूप में अधिकतर विदेशी परिधानों का प्रयोग करने लगे। किसी सामाजिक उत्सव, धार्मिक पर्व आदि पर ही उन्हें हम धोती, उत्तरीय में पाते हैं।[1]

इस सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि सातवीं शती तक की वेशभूषा से अट्ठारहवीं शती की वेशभूषा में पर्याप्त समानता होते हुए भी वस्त्रों के कटाव, सिलाई, पहनने के ढंग आदि में काफी परिवर्तन आ गया था। सामान्य रूप से तो देखने में प्रतीत होता है कि तत्कालीन समय में बहुलांश रूढ़िगत वेशभूषा ही प्रचलित थी। और ऐसी रूढ़िगत वेशभूषा में अध्ययन की कोई विशेष वस्तु नहीं प्राप्त होगी। इसके उत्तर में किसी विद्वान का यह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण लगता है कि,

" अभी तक विद्वानों ने भारतीय संस्कृति के इस पहलू (वेश-भूषा) पर ध्यान तक नहीं दिया है, क्योंकि उनकी राय में वेशभूषा में विकासक्रम नहीं है। आज जो धोती, चादर और पगड़ी पहनी जाती है, वही दो हजार वर्ष पहले भी पहनी जाती थी। फिर ऐसी रूढ़िगत वेशभूषा का इतिहास ही क्या ?... यह सही है कि अब तक भारतीय धोती चादर, दुपट्टे और पगड़ी- पहनते हैं, लेकिन प्राचीन और आधुनिक वेशभूषा की समानताएँ यही खत्म हो जाती हैं। कौन कह सकता है कि आज की धोती एक ही तरह से पहनी जाती थी अथवा आज की पगड़ी

1- डॉ० मोती चन्द प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ० 185-86

और तब की पगड़ी एक ही है ।[1]

यही बात सातवीं शती की वेशभूषा और अट्ठारहवीं शती की वेशभूषा के संबंध में कही जा सकती है । तब के घाँघरे और लँहगे में घुटने का अधिकांश भाग दिखाई देता था तथा उसमें घेर और चुनन भी कम होती थी ।[2] परन्तु अट्ठारहवीं शती में घाघरा पूरे पैर को ढँकने लगा :

एड़िन ऊपर घूमत घाघरो तैसिये सोहति सालू को सारी ।[3]

साथ ही घाघरे में घेर भी बहुत अधिक होने लगा ।[4]

यही बात कंचुकीआदि के संदर्भ में दिखाई पड़ती है तब के कंचुकी के साथ उत्तरीय अनावश्यक समझी जाती थी जबकि अवलोकित काल मे कंचुकी के साथ उत्तरीय लेने का काफी प्रचलन हो गया :

चूनरी सुरंग दरदावन किनारीवारी
जरतारी कंचुकी अमंद सुखदानी की ।[5]

1- डॉ० मोतीचन्द्र: प्राचीन भारतीय वेशभूषा, पृ०2

2- डॉ० वासुदेवशरण अग्रवाल-हर्षचरित: एक सांस्कृतिक अध्ययन; चित्र 72, 69, 105

3- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ० 105 छं० 303

4- भिखारीदास ग्रंथावली: घाँघरो घनेरो, पृ० 119, पृ० 144, छं० 252, मतिराम: सतसई, घने घेरको घाँघरो छं० 695; तोष:सुधानिधि, घेरदार घाँघरो पृ० 21 छं० 67; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, घाघरे घनेरे, पृ० 74 छं०215; पृ० 104 छं० 301; पृ० 105, 303; शब्दरसायन पृ० 24

5- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ० 134 छं० 20; कुमारमणि रसिक, रसाल, पृ० 77 छं० 49; देव ग्रंथावली: पृ० 104 छं० 301

उक्त परिवर्तनों का प्रधान कारण सामाजिक परिस्थितियां हैं । मुगल एवं उनके पूर्व में मुसलमान शासकों के यहाँ स्त्रियाँ पर्दे की पुतली मात्र थीं । कभी-कभी अगर वे बाहर निकलती भी थीं तो आपाद मस्तक ढकी हुई । तीसरी से सातवीं शती तक शती के भारतीय समाज में स्त्रियों के लिए पर्याप्त उन्मुक्तता थी । उनकी वेशभूषा में शरीर का पर्याप्त अंग खुला पाया जाता है ।[1] परन्तु अट्ठारहवीं शती में स्त्रियाँ आपादमस्तक ढंकी रहने लगीं बाहर निकलने के लिए तरस जाती थी उनके लिए घर की देहरी लांघना भी उचित नहीं समझा जाता था घूंघट में अपना चेहरा छिपाये रहती थीं ।[2] इससे सातवीं शती या गुप्त कालीन स्वच्छन्दता एवं आशामय वातावरण और अवलोकित काल में परतंत्रता निराशा एवं अपने-आपको छिपाए रखने का संकेत मिलता है। साथ ही दोनों कालों में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति का भी स्पष्ट पता लग जाता है ।

इस सम्बन्ध में किसी विद्वान का यह कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण माना जा सकता है कि -

किसी सम्पूर्ण समाज की आशा और भय पहनावे के "कट" में प्रतिच्छायित होते हैं ।[3]

1- ए० एस० अल्तेकर, द पोजीशन आफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन पृ० 206

2- हेमिल्टन भाग 1, पृ० 163,

ओविंगटन , पृ० 221

3- जी एस० धुरिये, इंडियनकास्ट्यूम्स पृ० 9 से उद्धृत कार्लाइल काकथन है ।

इस प्रकार चिरकाल तक पराधीनता के कारण सम्पूर्ण हिन्दू समाज में एक ऐसी जड़ता की मनोवृत्ति ने घर कर लिया था कि उनमें भविष्य के लिए आशा की कोई किरण नहीं दिखाई देती जो साधनहीन थे, हाथ पर हाथ रखकर बैठे हुए थे। जिनके पास साधन एवं सम्पत्ति थी वे इसके वासनामय भोग में लगे हुए थे। स्त्रियाँ घर की चाहरदीवारी के अंदर बन्द, पुरूष की भोग्या मात्र रह रह गयी थीं। यदि उन्हें सन्तोष एवं आत्माभिमान का कहीं कुछ अनुभव होता भी था तो अपने वस्त्र और आभूषणों में। कहने का तात्पर्य यह है कि तत्कालीन समाज में प्रयुक्त होने वाले वस्त्र उस काल की एक विशेष मनोवृत्ति को संकेतित करते हैं।

(खण्ड ख) आभूषण

आभूषण स्त्री पुरूष दोनों के द्वारा एक महत्वपूर्ण वस्तु माना गया है ।[1] किन्तु आभूषण का विशेष आकर्षण एवं लगाव स्त्रियों में अधिक देखने को मिलता है ।[2] अवलोकित काल में विभिन्न प्रकार के धातुओं से आभूषणों का निर्माण होता था । यथा: सोने तथा चाँदी से निर्मित आभूषण :

सोने के भूषण अंग रचे .... ।[3]

1- मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया पृ0 41

2- चलत पीव परदेश कौं बरज सकौ नहिं तोहि ।
लै ऐहौं आभरन जो जियत पायहौ मोहि ।

- मतिराम: रसराज, पृ0 250 छं0 215;

तथा, मेरे लिए जित ही उठिकै गहनौ ... गढ़ाय कै लावेनवीनो ।
प्रस्तुत उद्धहरणो के दूसरे उदाहरण में मतिराम रसराज पृ0 232 छं0 142;में नायिका उसी के साथ रहना चाहती है जो उसके लिए नित्य नये गढ़ने गढ़ा कर लाये तथा प्रथम उद्धहरण में वह परदेश से वापस आने पर पति से सिर्फ आभूषण लाने की बात करती है किसी अन्य वस्तु की नहीं अत: आभूषण के प्रति स्त्रियों का अनुराग स्वत: स्पष्ट है ।

3- मतिराम: ललितललाम, पृ0 331 छं0 18; रसराज पृ0 285छं0 376; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद ,पृ0 503 छं0 49; देव: भावविलास, पृ0.72 छं0 86; तोष: सुधानिधि: पृ0 63 छं0 182; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 130 छं0 42; "चाँदी के आभूषण" तोष सुधानिधि: पृ0 102 छं0 300; देव ग्रंथावली: अष्टयाम पृ0 18 छं0 10; आलम: आलमकेलि, पृ0 35 छं0 51; भिखारीदास ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 105 छं0 69; पृ0 121 छं0 147; खंड 2, पृ0 146 छं0 34; बर्नियर, पृ0 224; आईन; भाग3, पृ0 34; थैवनॉट, इंडियन ट्रवेल्स, पृ0 52

इसके अतिरिक्त हमें विभिन्न प्रकार के रत्नों या बहुमूल्य पत्थरो यथा जवाहर माणिक्य आदि द्वारा निर्मित आभूषणों का उल्लेख मिलता है :

मनि जटित भूषन अंग ।

उर में गरूर तरंग ।।[1]

तथा कुछ आभूषण विभिन्न प्रकार के फूलों से निर्मित होते थे :

चौसर चमेली चारू हार नील कंचुकी पै ।[2]

आभूषणों को क्रम संख्या में सबसे पहले सिर और ललाट के आभूषण आते हैं जो निम्न प्रकार के थे -

---

1- सोमनाथ ग्रंथावली : रामचरित्र -रत्नाकर पृ0 1008 छं0 12 ; ब्रजेंदविनोद मनिजटित टीका, पृ0 503 छं0 48; देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, माँग गुही हीरन पृ0 83 छं0 241 ; सुजानविनोद , मोती नगहीरन हार, पृ0 34 छं0 18; मनिमाल पृ0 60 छं0 54 ; आलम: आलमकेलि, बीरनि के नगनि, पृ0 21 छं0 73; खाफी खाँ, मुन्तखब -उल-लुबाब, इलियट एंड डाउसन, पृ0 364 , 365; भार मल राय, लुब्बात-ए - तवारीख हिंद, (इलियट एंड डाउसन) पृ0 169

2- देवग्रंथावली: राग-रत्नाकर , पृ0 6 छं0 21; पृ0 18 छं0 75 ; 18 छं0 76; पृ0 19 छं0 77; भाव विलास, पृ0 133 छं0 102 ; आलम: आलमकेलि, पृ0 26 छं0 21; 'पुष्पमाल' मतिराम: रसराज, मालती माल, पृ0 55 छं0 77; देव: राग-रत्नाकर, फूल जपा उरमाल, पृ0 4 छं0 14; पृ0 4 छं0 14; पुहुपमाल, पृ0 5 छं0 16; चम्पक फूल गरे, पृ0 10 छं0 37; सुजानविनोद, सरोज मई मृदुमाल पृ0 50 छं0 22; फूलनि माल, पृ0 79 छं0 26; भिखारी दास ग्रंथावली: खंड 1, सुमन माल, पृ0 95 छं0 32; 'बनमाल पृ0 74 छं0 508 खंड 2, वनमाल पृ0 125 छं0 14; 'फूलों का गजरा' भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, फूले फूले फूलनि के गजरा, पृ0 74 छं0 508; पुष्प के कर्णाभूषण, आलम-आलमकेलि, रतोपल कीतरको, पृ0 125 -पृ0 125 छं0 306 , मतिराम रसराज , गुच्छनि के अवतंस पृ0 134 छं0 238; देवग्रंथावली; राग-रत्नाकर अंब बौरनि बौरनि बौरै बिराजति, पृ0 6 छं0 23; पुष्पों से निर्मित केश के आभूषण: मतिराम; ललितललाम कुसुम कलित केस, छं0 89; रसराज, केसन में छाई छबि फूलन के वृन्द की पृ0 64 छं0 103; पी. एन. ओझा. ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ015

सीसफूल - जैसा कि इस आभूषण के नाम से ही विदित है यह फूल(पुष्प) के आकार का आभूषण था जो सिर पर धारण किया जाता था :

सिर सीसफूल उदार है ।[1]

सिर में इसे माँग के मूल में धारण किये जाने का उल्लेख मिलता है ।

माँग को मूल उतै सिरफूल दब्यो ।[2]

मांग बालों को दो भागों में विभाजित करने पर बीच की बनी रेखा को कहते हैं जिसे मध्ययुग में पाटी भी कहा गया ।[3]

सीसफूल को सिरफूल भी कहा गया है ।[4]

1- "सीसफूल" सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 503 छं0 50; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 242; पृ0 84 छं0 243; शब्दरसायन, पृ0 7 छं0 70; राग-रत्नाकर पृ0 7 छं0 27; सुजानविनोद, पृ0 47 छं0 5; आलम-आलमकेलि, पृ0 31 छं0 22; ~~छं0 22~~; 33/73; मनूची; स्टोरिया दमोगोर भाग 2, पृ0 31; आइनए-अकबरी, भाग 33, अनुवादक सर जदुनाथ सरकार पृ0 343 : आईन, अनुवादक जैरेट, पृ0 312 (आईन में सीसफूल को गेंदे के फूल के आकार का बताया गया है)

2- देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 84 छं0 243 ; पृ0 83 छं0 242; सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 328 छं0 69; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

3- पाटी दुहूँ बिच माँग की लाली
- भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 102 छं0 57; पृ0 122 छं0 154 ; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 241; पृ0 83 छं0 242; पृ0 84 छं0 243

4- 'सिरफूल' तोष-सुधानिधि , पृ0 97 छं0 273 देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 242 पृ0 84 छं0 243, मनूची: स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0 317

माँगफूल नामक आभूषण भी शीशफूल की भाँति सिर पर धारण किये जाने का उल्लेख कवि ने किया है ।[1]

माँगमोती या मोतीलर - यह मोतियों की लड़ी जैसा बनाया जाने वाला माँग का आभूषण है । अवलोकित काल में जहाँ भी मोतियों से माँग भरने या माँग पूरने का उल्लेख हुआ है, वहाँ माँगलर से ही तात्पर्य है ।[2]

टीका या बेंदी - टीका एक पतली जंजीर के सहारे लटकाकर सिर पर धारण किये जाने वाला आभूषण है। इसके किनारे पर नीचे की ओर मोती आदि लगे होते हैं तथा सोने के इस आभूषण में माणिक्य

1- माँगफूल,' सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि , पृ0 111 छं0 33,' श्रीमती जमीला बृजभूषण,' द कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया , पृ0 51 , पर मेल एंड फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाडी पेन्टिंग्स चित्रफलक । तथा 2

2- "माँगमोती या माँगलर" देवग्रंथावली : भावविलास, मोतिन माँग पृ0 128, प्रेम-चन्द्रिका, माँग मुकतारी सवाँरी नीकी,[मुकुतारी का तात्पर्य मोती से है]पृ0 34 छं0 24 ; सुजान विनोद,पृ0 52 छं0 27,' सुखसागरतरंग , पृ0 83 छं0 241 ;' आलम: आलमकेलि पृ0 49, छं0 ; भिखारीदास ग्रंथावली; भाग 1 , माँग भरी मोती , पृ0145 छं0 225 ; माँगलरी, देवग्रंथावली ; सुखसागर तरंग पृ083 छं0 242 ; वही राजस्थानी फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरीज त्रिफलक । तथा 4

आदि रत्न जड़े रहते हैं :

टीकौ जटित मनि जाल में ।[1]

सूर्य के आकार का अन्य माथे का आभूषण प्रचलित था जिसे बेंदा कहा गया है।[2]

शिरोभूषण के अन्तर्गत बिंदुली का भी उल्लेख मिलता है ।[3]

1– "टीका" सोमनाथ ग्रंथावली ; ब्रजेंदविनोद, पृ0 503 छं0 49; आलम; आलमकेलि 'बेंदी' 33/73 ; 88/242; देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, बेंदी जराऊ, पृ0 83 छं0 241 ; पृ0 113; 89/249; शब्दरसायन-प्रकाश, पृ0 78 छं0 70; रसविलास, पृ0 193 ; भिखारीदास: श्रृंगारनिर्णय, पृ0 150 150/274; भि0 ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 149 छं0 273; पृ0 150 छं0 277; मतिराम 149/273; मतिराम सतसई, छं0 427; छं0 550; सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 32 ; ब्रजेंदविनोद, पृ0 549 छं0 54; सुजान विलास, पृ0 640 छं0 73; माधवविनोद, पृ0328 छं0 69; भारत कला भवन से प्राप्त एकमुगल शैली का स्नान दृश्य (लल्लन राय के प्रबन्ध काव्य से उद्घृत) 1750 ई0 चित्रफलक 9, जमीला बृजभूषण वही, कोमल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं0 4 आइन-ए- अकबरी, अनुवादक एच0एस0 जैरेट, टीका को आईन में कोर बिलादर कहा गया है ।

2– ललित लाल बेंदा लसै बाल-भाल सुखदानि ।
दरपन रबि- प्रतिबिंब लौं दहै सौति अँखियानि,
– भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 76 छं0 518; छंदार्णव, पृ0 223 छं0 9; निकोलाई मनूची ; मुगल इंडिया ऑर स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317 (शिरोभूषण में सूर्य के आकार का उल्लेख किया है संभवतः वह बेंदा ही है)

3– "बिंदुली" भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 7 छं0 32; पृ0 15 छं0 86; बिंदुलीजडाऊ, आलम: आलमकेलि , पृ0 123 छं0 262; आईन में इसे सोने की मुहर से थोड़ा छोटा आभूषण बताया गया है।

इन सबके अलावा जड़ाऊ बिन्दी का भी उल्लेख मिलता है जिसे माथे पर लगाया जाता था ।[1]

अवलोकित काल में केशों को आभूषणों से सुसज्जित किया जाता था । जो धातु के आभूषणों के अलावा पुष्प से भी निर्मित होते थे ।[2]

1- आलम-आलमकेलि "जराउ को बिन्दु, पृ0 146 छं0 378; देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ0 70 छं0 42; सुखसागर तरंग पृ0 88 छं0 242; 89 छं0 249; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; पृ0 150; सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद, पृ0 328 छं0 69 ; सुजानविलास, 640 छं0 73; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 32; ब्रजेंदविनोद, पृ0 549 छं0 54; जड़ाऊ बिन्दी (धातु खंडों को काटकर बनायी जाती है जिसे गोंद लगाकर माथे में चिपका दिया जाता है) श्रीमती जमीला बृजभूषण, कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, पृ0 51 चित्र सं0 3, 4 तथा वही पृ0 58 चित्र सं0 1

2- "केशाभूषण" देवग्रंथावली: पृ0 110 छं0 92; मतिराम: ललितललाम, पृ0 69 छं0 100 ; रसराज, कुसुम कलित केशनि में छाई छवि फूलन के बूंद की, पृ0 64 छं0 103; रसपीयूषनिधि पृ0-97 ललितललाम छं0 89; पृ0 97 छं0 50; सोमनाथ ग्रं0: स्याम सरकारे बार फूलनि सो गूँथि रचे, डुबाइस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 342; ग्रोस, भाग1, 143

कान के आभूषण -

कुण्डल - कर्णाभूषण में कुण्डल (बाली) सम्पन्न वर्ग की महिलाओं को अत्यन्त प्रिय था।

कनक मेखला पहिरे नारी, कॉनन सोहत कुंडल भारी।[1]

कुण्डल का ऊपरी भाग पतला और नीचे का भाग अपेक्षा कृत चौड़ा होता है। नीचे का भाग भारी होने के कारण शरीर के तनिक भी आन्दोलित होने पर कुण्डल हिलने लगता है।[2] मकराकृत कुंडल के प्रचलित होने का उल्लेख कवियों ने किया है।[3] इस प्रकार विभिन्न प्रकार के सादे व मणिजटित कुण्डल पहना

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 708 छं0 24; देव: प्रेमचन्द्रिका, 25 छं 23; मतिराम: रसराज, 120 छं0 297; पृ0 123 छं0 306; तोष-सुधानिधि, पृ0 60 छं0 173; पृ0 112 छं0 331; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 85 छं0 581; पृ0 90 छं0 9; हेमिल्टन: न्यू अकाउन्ट आफ ईस्ट इंडीज, भाग 1 पृ0 163; थैवनॉट, भाग 3, पृ0 37; आईन0, भाग 3, पृ0 343

2- कुंडल हलत मुख मंडल झलमलात झूलत दुकूल भुजमूल भहरात हैं
- देव ग्रंथावली रसविलास पृ0 237 छं0 28; मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 334 छं0 268; 365/ 397; रसराज, पृ0 292 छं0 410; पृ0 290 छं0 401; रत्नावली पृ0 107 छं0 191; वही।

3- तोष: सुधानिधि, कुण्डलमकर पृ0 2 छं0 6; भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश, पृ0 38 छं0 256; कुण्डल मकराकारे, काव्यनिर्णय, मकराकृत कुंडल; पृ0 98 छं0 19; (मकर से तात्पर्य कवियों ने मोर की आकृति से लिया है), अंसारी भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, (इम्परर्स) पृ0 114; हेमिल्टन, न्यू अकॉउन्ट ऑफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; थैवनॉट भाग 3, पृ0 37;

जाता था ।[1]

लुरकी – कानों के (निचले भाग) लर में पहने जाने के कारण संभवतः इस आभूषण को लुरकी कहा गया। लुरकी नामक आभूषण में मोतियों का गुच्छा सा लटकता रहता है ।[2]

कर्णफूल – जैसा कि इस आभूषण के नाम से स्वतः स्पष्ट है कि पुष्पाकृति के आभूषण को कानों में पहनने के कारण इस आभूषण का नाम कर्णफूल रखा गया । कर्णफूल के बीच में हीरा आदि जैसे नग जड़े रहते थे और उसकी कटिंग किनारे से कुछ इस प्रकार की जाती थी जिससे वह पुष्पाकृति का दिखाई पड़ता था ।[3]

1- मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, मनि कुण्डल, पृ0 62 छं0 76; पृ0 53; रसराज, पृ0 120 छं0 297; पृ0 123 छं0 306; 293/410; देवग्रंथावली; भावविलास, पृ0 69; राग-रत्नाकर, पृ0 20 छं0 93; रसविलास 237/28; सोमनाथ ग्रंथावली; कंचन मंडित कुण्डल, पृ0 504 छं0 28; ब्रजेंदविनोद पृ0 77 छं0 44; हेमिल्टन: न्यू अकाउन्ट ऑफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 343; थैवनॉट: भाग 3, पृ0 37

2- "लुरकी" देव अगम्भग जोतिन की लर मोतिन की लुरकीन,
-देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग पृ0 83 छं0 243;
प्रेमचन्द्रिका, पृ0 83 छं0 239; निकोलाई मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

3- "कर्णफूल" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12; आलम; आलमकेलि; सुतिफूल, पृ0 9 छं0 20; (आलम ने कर्णफूल को सुतिफूल कहा है) भूषण ग्रंथावली पृ0 252; हेमिल्टन: न्यू अकाउन्ट आफ ईस्ट इंडीज, भाग 1, पृ0 163; अंसारी, हरम आफ दि ग्रेट मुगल, पृ0 14 जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, मेल एंड फीमल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाडी पेन्टिंग्स पृ0 60, चित्रसं0 4, बीच में हीरा आदि जड़े रहने का उल्लेख, निकोलाई मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 317

झुमका- यह एक लोकप्रिय आभूषण था। झुमके को कर्णफूल आदि के साथ पहना जाता था यह स्वतंत्र रूप से पहना जाने वाला आभूषण नहीं है। कर्णफूल के नीचे यह प्यालोनुमा घंटी के आकार सा होता था जो कानों से थोड़ा नीचे लटकता रहता था। जिसके किनारे पर घुँघरू (छोटे-छोटे) या मोती के गुच्छे लटकते रहते हैं।[1]

तर्‌यौना - तर्‌यौना को कवियों ने कानों में पहना जाने वाला गोलाकृति आभूषण बताया है :

चक्र तरयौना जुवा भ्रिकुटी मृग नैनन है ससि को रथ संभवि।[2]

1- "झुमका" सोमनाथ ग्रंथावली : शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9; मासीर ए- आलमगीरी; अनुवादक जदुनाथ सरकार, पृ0 93; मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; बर्नियर, पृ0 223, डीलेट, पृ0 81; मैन्डल्सो, पृ0 50; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 339-340; श्रीमती जमीला ब्रजभूषण; कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया पृ0 58; फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं0 4।

2- "तर्‌यौना" देवग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 88 छं0242; पृ0 83 छं0 241; सोमनाथ ग्रंथावली; शब्द रसायन, पृ0 67 छं0 70; सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 41; सुजानविनोद, पृ0 31 छं0 4; पृ0 56 छं0 42; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 124 छं0 165; पृ0 150 छं0 277; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 130 छं0 42; पृ0 248 छं0 21; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 223 छं0 334; 98/55; श्रृंगार विलास, 305 छं0 44; सुजानविलास, पृ0 808 छं0 17; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

तत्कालीन कवियों ने तरौना[1] तथा तरविन[2] भी कहा है ।

तरयौना नामक कर्णाभूषण में विभिन्न प्रकार के बहुमूल्य पत्थर या रत्न के नग जड़े रहते थे ।[3]

<u>बीर</u> - कानों में बीर नामक आभूषण भी स्त्रियाँ धारण करती थीं :

इन्दु सो आनन सुन्दर कानन हीरनि की निधि बीरनिसाधी[4]

अन्य आभूषणों की भाँति बीर नामक कर्णाभूषण भी रत्नजटित होता था ।[5]

1- "तरौना" मतिराम ग्रंथावली : रसराज, पृ0 269 छं0 297; रत्नावली, पृ0 54 छं0 84; पृ0 117 छं0 91; ललितललाम, पृ0346 छं0 280; मतिराम सतसई, पृ0 380 छं0 142; मतिराम ग्रंथावली पृ0 419; देवग्रंथावली: पृ0 117; शब्दरसायन, पृ0 10 छं0 19; आलम: आलमकेलि, पृ0 13 छं0 29; पृ0 23 छं0 87; पृ0 13; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 277; रसपीयूषनिधि, पृ0 223, छं0 334 ।

2- "तरविन" मतिराम ग्रंथावली: सतसई, दो. 471; देवग्रंथावली शब्दरसायन पृ096

3- "जड़ाऊ तरयौना": देवग्रंथावली सुजान विनोद पृ0 10 छं0 19; मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0269 छं0 297; रत्नावली, पृ0 117 छं0 91; सतसई, पृ0 320 छं0 142; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ० 317

4- "बीर" देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0239; राग-रत्नाकर, पृ0 6 छं0 23; सुजानविनोद, पृ0 47 छं0 5; आलम: आलमकेलि, पृ0 31 छं0 73; मनूची वही ।

5- आलम: आलमकेलि, बीरनि के नगनि, पृ0 31 छं0 71; देवग्रंथावली: सुखसागर, तरंग, पृ0 83 छं0 239, मनूची वही ।

खुँटिला - खुँटिला को दीपक की लौ के समान कुछ लम्बा आभूषण बताया गया है जो कान के निचले लर में पहना जाता था :

घूँघट जवनिका में कारे-कारे केस निसि,

खुँटिला जराऊ जरे डीवटि उजारी है ।[1]

नाक के आभूषण - भारत के अधिकांश प्रदेशों में नाक के आभूषण मांगलिक एवं सौभाग्यसूचक माने जाते हैं ।[2] नाक का आभूषण कब से प्रचलित हुआ इस संबंध में मतभेद दिखाई पड़ता है । 1932 में बंगाल की रायल एशियाटिक सोसाइटी के जर्नल में इस संबंध में एक लेख प्रकाशित हुआ । इस लेख में संस्कृत साहित्य और संस्कृत कोशों में नाक के किसी आभूषण का उल्लेख नहीं मिलता ।[3] किन्तु 1937 ई० मे कलकत्ता रिव्यू से प्रकाशित लेख में इसेहिन्दू काल का जाना-पहचाना आभूषण सिद्ध किया गया ।[4]

1- खुँटिला: आलम-आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; पृ0 31 छं0 73; (यहाँ डीवटि उजारी से जलते हुए दीपक की लौ यह अर्थ लिया गयाहै) आइन-ए- अकबरी, में इसे गावदुम कहा गया इसकी आकृति भी दीपक की लौ की भाँति बतायी गयी, आइन-ए- अकबरी: अनु एच. एस. जैरेट, जिल्द 3, पृ0 312

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण, इंडियन ज्वेलरी आनामिन्ट्स एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स पृ0 11

3- एन0 बी0 डिबाटिया: जर्नल ऑव एशियाटिक सोसाइटी ऑव बंगाल, जिल्द 19, पृ0 67

4- नलिनदास गुप्ता, भारत में प्रचलित नाक के आभूषंण जिल्द 63, पृ0 142, 144

किन्तु 1937 में ही प्रकाशित एक अन्य ग्रंथ में नाक के आभूषण को मुसलमानों से लिया बताया गया है ।[1] परन्तु, इस बात पर आश्चर्य होता है कि-एक विदेशी उत्पत्ति का आभूषण भारतीय स्त्रियों में सौभाग्य का चिन्ह कैसे बन गया ? किन्तु, इस बात पर आश्चर्य होता है कि एक विदेशी उत्पत्ति का आभूषण भारतीय स्त्रियों में सौभाग्य का चिन्ह कैसे बन गया।[2] किन्तु निश्चित रूप से इस आभूषण को मुस्लिम उत्पत्ति का मान लेना अधिक संगत नहीं लगता । क्योंकि प्रारम्भिक मुगल एवं ईरानी चित्रों में हमें नाक के आभूषणों का अंकन नहीं मिलता बाद के विशुद्ध मुगल चित्रों में भी नाक के आभूषण कुछ विशेष प्रसंगों में दिखाये गये हैं जैसा कि अकबरकालीन दो चित्रों से पता चलता है ।[3] सन् 1580 ई0 के आसपास बने ये दोनों ही चित्र पूर्णतया प्रामाणिक हैं । इनमें राजकुमार (संभवतः जहाँगीर) के जन्मोत्सव का दृश्यांकन हुआ है। जन्मोत्सव में चगताई वंश की मुगल स्त्रियों के साथ राजपूत स्त्रियों का भी अंकन हुआ है । मुगल स्त्रियाँ विशेष चगताई वेश में हैं । इनमे कोई भी नाक का आभूषण नहीं पहने हैं। गाने बजाने वाली राजपूत स्त्रियों में कई नाक में मोती का लटकन धारण किये हुए हैं ।

1- अल्तेकर, दि पोजीशन ऑफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन, (1936) पृ0 364

2- अल्तेकर: द पोजीशन ऑफ वोमेन इनहिन्दू सिविलाइजेशन(1936) पृ0 364

3- देखिए मुगल पेंटिंग (कुमार स्वामी) जिल्द 6 चित्रफलक3-4 ।

इससे स्पष्ट होता है कि संभ्रात मुगल स्त्रियों में नाक के आभूषणों का चलन नहीं था ।[1]

संभव है पश्चिमी एशिया और मध्येशियाई देशों से भारत के सांस्कृतिक संबंधों के फलस्वरूप ये आभूषण भारत आया हो क्योंकि व्यापारिक लेन-देन के साथ ही भारतीयों के साथ उनका सांस्कृतिक आदान प्रदान भी होता था ।[2] नाक के चार आभूषणों - बेसर, नथ, फूली और लौंग[3] का उल्लेख अवश्य हुआ है, पर इनके हिन्दी नाम इस बात के साक्षी हैं कि ये मुगल उत्पत्ति के नहीं है । वस्तुत: अकबर द्वारा राजपूतों के साथ वैवाहिक संबंधों के कारण इन आभूषणों का प्रवेश रानी एवं दासियों के द्वारा राजमहल तक हो गया । उन्हीं के प्रभाव से मुगल स्त्रियों में इन आभूषणों का प्रचार हुआ होगा ।

अब प्रश्न उठता है कि राजपूतों में इसका प्रचार कब और कैसे हुआ ? इस संबंध में यह संभावना व्यक्त की जा सकती है कि शायद प्राय: व्यापारिक उद्योग धंधे के साथ ही भारत आये । मध्यप्रदेश और राजस्थान में उनके माध्यम से नाक के आभूषणों का ग्रहण संभव है। आज भी वहाँ के हिन्दुओं में उत्तर प्रदेश,

---

1- प्रारम्भिक मुस्लिम साहित्य में नाक के आभूषणों का कोई उल्लेख नहीं मिलता । हिन्दू काल के सभी चित्र तथा स्थापत्यकला नाम के आभूषण की पूर्णतया उपेक्षा करते हैं । जे0बी0ए0एस0(बी0एन एस) XXIII; 1927 पृ0 295-296

2- एम0ए0 शास्त्री, आउटलाइंस ऑव इस्लामिक कल्चर 1954 पृ022 ।

3- आइन-ए अकबरी, भाग 3 एच0एस0 जैरेट पृ0 313

बिहार, बंगाल आदि में नाक के आभूषणों का पर्याप्त प्रचलन है यहाँ पर नाक के आभूषणों का प्रचलन कब और कैसे हुआ ? नवीं से तेरहवीं शती के मध्य सूफी धर्म प्रचारक और शोया वर्ग के व्यापारी तथा उद्योग धंधा करने वाले मुसलमान काफी संख्या में बिहार, और बंगाल में आये ।[1] संभवत: पारस्परिक भेद-भाव अधिक न होने के कारण बिहार और बंगाल के हिन्दुओं ने सौहार्द्रपूर्ण ढंग से मुसलमानों से नाक का आभूषण लिया होगा ।

किन्तु संभावनाओं के आधार पर किसी निश्चित निर्णय पर नहीं पहुंचा जा सकता फिर भी उपर्युक्त तथ्यों को देखते हुए इसी बात का संभावना अधिक है कि नाक के आभूषणों का नवीं दसवीं के पूर्व भारत में कोई उल्लेख न मिलना नाक के आभूषणों की भारतीय उत्पत्ति को संदिग्ध करते हैं ।

कुछ भी हो अट्ठारवीं शती में नाक के आभूषणों का पर्याप्त चलन दिखाई पड़ता है ।

1- पंजाब यूनिवर्सिटी चण्डीगढ़ से प्रकाशित हिन्दी पत्रिका में डॉ० बुद्धप्रकाश का , सूफी मत "शीर्षक लेख, पृ० 29 ।

बेसर - नासिकाभूषणों में बेसर[1] का काफी उल्लेख मिलता है । बेसर सोने की बनती थी और उसमें बहुमूल्य रत्नादि लगे होते थे :

कनक मनि मंडित बेसर ।[2]

1- "बेसर" देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग , पृ0 61 छं0 85; पृ0 87 छं0 237 ; 816, 236; पृ0 113; भावविलास , पृ0 84 छं0 26; सुजानविनोद , पृ0 47 छं0 5; शब्दरसायन, पृ0 22 छं0 124 , मतिराम ग्रंथावली: सतसई, पृ0 184 छं0 72; ललितललाम, पृ0 155 , पृ0 348 छं0 288 ; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 146 , पृ0 22 छं0 28; तोष:सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300 ; सोमनाथ ग्रंथावली , रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 12; शशिनाथविनोद, पृ0 504 छं0 12; आलम: आलमकेलि, पृ0 10 छं012 पृ0 31 छं073; पृ0 35 छं0 81 ; पृ0 123 छं0 298 ; पृ0 123 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 185 छं0 60, थैवनॉट भाग 1 पृ0 37, डौलेट पृ0 81, अंसारी: भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114; आइन-ए-अकबरी, अनुवादक एच0 एस0 जैरेट, जिल्द 3, पृ0 313

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 504 छं0 24; सुजान-विलास पृ0 641 छं0 82; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 87 छं0 237; आलम-आलमकेलि, पृ0 31; थैवनॉट, पृ0 37, डौलेट , पृ0 81, आइन ए- अकबरी: अनुवादक एच. एस. जैरेट, पृ0 313

बहुमूल्य रत्नों के अलावा बेसर में मोती लगी होती थी जो अधर तक लटकती थी और मुख हिलने पर जब मोती हिलती थी तब वह ऐसी प्रतीत होती थी जैसे कि मोती नृत्य कर रही हो :

अधर सुरंग भूमि नृपति अनंग आगे,

नृत्य करे बेसर को मोती नृत्यकारी है ।[1]

इस नासिकाभूषण को पहनने के लिए नाक में छेद होता था ।[2]

<u>नथ</u> - नासिकाभूषणों में नथ का भी उल्लेख कवियों ने किया है । नासा अप्पमंडल यों राजे ।[3] नथ का आकार गोल बताया गया है[4] तथा

1- आलम! आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55 ; पृ0 12 छं0 27 ; देव ग्रंथावली ; शब्दरसायन, पृ0 127 ; वही ।

2- आलम, आलमकेलि, पृ0 14 छं0 32; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 343 ।

3- "नथ" सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 328 छं0 72; ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 46; देवग्रंथावली: सुजानविनोद , पृ0 57 छं0 42; शब्दरसायन पृ0 7 छं0 70; रसविलास, पृ0 273 छं0 26; पृ0 193, प्रेमचन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; भिखारीदास ग्रंथावली , खंड 2, पृ0 248 छं0 21; जमीला ब्रजभूषण, "इंडियन ज्वेलरी आर्नामिन्ट्स एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स, पृ0 11, थैवनॉट पृ0 37, डीलेट, पृ0 81, अंसारी भाग 34, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114

4- इमि शोभ नथ अभिराम की ।
जनु कुंडली नट काम की ।।
- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 46 ; माधवविनोद, पृ0 328 छं0 72; देव ग्रंथावली! सुजानविनोद , पृ0 57 छं0 42; थैवनॉट, पृ0 37; डीलेट, पृ0 81

रत्नादि के अलावा मोती लगे नथ का उल्लेख हुआ है ।[1]

विवाह के समय नथ का होना आवश्यक माना गया है अतः नाक के इस गहने का विशेष महत्व रहा है ।[2]

नथुनी - नथ की ही भाँति नथुनी का भी प्रचलन था[3] इसमें भी मोती[4] रत्नादि[5] लगे रहते थे ।
नथ की अपेक्षा नथुनी छोटी होती थी ।

कहै मतिराम मनि मंजुल तरौना छोटी
नथुनी बिराजै गजमुकतन संग की ।[6]

1- बेंदिया जड़ाऊ बड़े मोतिन सों नीको नथ,
—देव ग्रंथावली:शब्दरसायन-प्रकाश, पृ0 [illegible] छं0 70; प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; रसविलास, पृ0 273 छं0 26; सुजानविनोद, पृ0 57 छं0 42; भारतकला भवन से प्राप्त चित्र लिल्लन राय के प्रबन्ध से उद्धृत (राधा किशनगढ़ शैली 1700-1850 ई0 के मध्य

2- श्रीमती जमीला बृजभूषण, इंडियन ज्वेलरी आर्नामेन्ट्स एंड डेकोरेटिव डिजाइन्स पृ0 11

3- "नथुनी", मतिराम ग्रंथावली :रसराज, पृ0 282 छं0 358; ललितललाम पृ0 346 छं0 280; पृ0 314 छं0 86; मतिराम-सतसई, पृ0 395 छं0 326; पृ0 373 छं0 50; रत्नावली, पृ0 42 छं0 81; सोमनाथ ग्रंथावली, पृ0 502 छं0 9; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

4- भिखारीदास ग्रंथावली: भाग 2, मोती नथुनी के, पृ0 137 छं0 29; सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद, पृ0 502 छं0 9; मतिराम: ललितललाम, पृ0 314/86; मनूची: वही

5- तोष: सुधानिधि, पृ0 98 छं0 286 मतिराम ललितललाम, पृ0 346 छं0 280 सतसई पृ0 395 छं0 326, वही ।

6- मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 346 छं0 280; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग, 2, पृ0 317; डॉ0 ग्रियर्सन, बिहार पीजैन्ट लाइफ (1885) पृ0 155

नकमोती - नासिका भूषणों में कवियों ने नकमोती[1] का वर्णन कियाहै। नकमोती प्राय: एक लम्बोतरी लटकी हुयी मोती को कहते थे जो नासिका के निचले अग्र भाग में भाग में लटकाकर पहनी जाती थी। दो मोती के मध्य एक लम्बोतरे मोती का लटकन भी तत्कालीन चित्र में मिलता है।[2]

लटकन - लटकन को नथ या बेसर में लगाया जाता था[3] जिससे इन आभूषणों का संतुलन बना रहता था।

गले तथा वक्ष स्थल के आभूषण -

हार - हार का मूल अर्थ "हरण करने वाला" या पराजय है।[4]

1- चंचल लोचन चारू विराजत पास लुरी अलकै थहरै।
नाक मनोहर औ नकमोतिन को कुछ बात कही न परै।
- भिखारीदास ग्रंथावली; काव्यनिर्णय, पृ० 87 छं० 8;
भिखारीदास ग्रंथावली, खंड 1, पृ० 36 छं० 249; पृ० 138 छं० 226; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ० 23 छं० 48; पृ087 छं08; पृ० 170 छं० 19; रससारांश, पृ036 छं० 249; मतिराम: सतसई, छं० 118; राधा किशनगढ़ शैली का चित्र 1700-1850 ई० (लल्लनराय के प्रबन्ध से उद्धृत) चित्र पृ०सं० 11; जमीला बृजभूषण: द कास्टयूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ इंडिया, पृ० 58; फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स चित्र सं04।

2- वही, राधा-किशनगढ़ शैली का चित्र।

3- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ057 छं० 42; डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ० 343; नाक के आभूषणों का विस्तृत विवरण, अलिनदास गुप्त, भारत में प्रचलित नाक के आभूषण कलकत्ता रिव्यू से प्रकाशित।

4- नामलिंगानुशासन- अमरसिंह, सं. डॉ० हरदत्त शर्मा, पृ० 156 छं० 105

अवलोकित काल में हार[1] का बहुशः उल्लेख मिलने से ऐसा प्रतीत होता है कि हार तत्कालीन समाज में स्त्रियों का गले में पहना जाने वाला प्रिय आभूषण था ।

1- "हार"- कंचन कुंडल कान हार उर रहेखेभ्मानि ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद पृ0 321 छं0 3; ब्रजेंद्र-विनोद, पृ0 788 छं0 76; शशिनाथ विनोद, (प्रथमोल्लास) पृ0 505 छं0 33; रसपीयूषनिधि, पृ0 176 छं0 35; पृ0 95 छं0 42; पृ0 85 छं09; पृ0 97 छं0 52; पृ0 123 छं0 51; सुजानविलास, पृ0 642 छं0 91; श्रृंगारविलास, पृ0 298 छं0 14; श्रृंगारविलास (पंचमोल्लास) पृ0 294 छं0 16; (षष्ठउल्लास) पृ0 295 छं0 17; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 86 छं0 82; पृ0 77 छं0 55; पृ0 14; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0202 छं0 24; (अष्टम भाग) पृ0 202 छं0 28; भावविलास पृ0 43 छं0 18; पृ0 40 छं0 14; पृ0 49 छं0 25; पृ0 69, 111; तृतीय भावविलास, पृ0102; चतुर्थभाव विलास, पृ0 126 छं0 2; पृ0 128, 133; सुखसागर-तरंग, पृ0 77 छं0 223; 78 छं0 226; 105 छं0 303; संपादक बालादत्त मिश्र, पृ0 120; अष्टयाम; पृ0 1 छं0 4; पृ0 18 छं0 10; सुजानविनोद, पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; पृ0 79 छं0 25; शब्द-रसायन, पृ0 25, 524; राग-रत्नाकर, पृ0 8 छं0 29; मतिराम ग्रंथावली: रत्नावली, पृ0 82 छं0 140; पृ0 54 छं084; पृ0 75 छं0 127; रसराज, पृ0224 छं0 193; 243 छं0 187; पृ0 241 छं0 179; पृ0256 छं0238; पृ0 60 छं0 93; सतसई, छं0 2; 667; छं0182; छं0 199; छं0 364; छं0 429; ललितललाम, पृ0351 छं0 313; भिखारीदास ग्रंथावली: काव्य-निर्णय, पृ0 239 छं0 3; छंदार्णव, पृ0 223 छं09; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 77 छं0 53; पृ0 186 छं0 68; पृ0 7 छं0 70; पृ0248 छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड1, पृ0 22 छं0 143; पृ0 47 छं0 335; पृ0 98 छं0 43; पृ0 105 छं0 65; पृ0112 छं0 104; पृ0 144 छं0 252; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; घनानंद ग्रं0, पृ0 13 छं0 36; आलम, आलमकेलि, पृ0 7 छं016; पृ0 15 छं0 33; मासीर-ए-आलमगीरी, पृ0 93; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 343; अंसारी: भाग 34, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, पृ0 339-40; डी-लेट पृ0 81; थैवेनो भाग 3, पृ0 252; मैन्डल्सो पृ0 50, बर्नियर पृ0 268

विभिन्न प्रकार के रत्नजटित[1] तथा कई लड़ियों वाले हार[2] का उल्लेख कवियों ने किया है ।

1- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, मोती नग हीरन हार, पृ0 34 छं0 18; सुखसागर तरंग, चंद्रहार, 84/222; पृ0 77 छं0 223; पृ0 78 छं0 226; पृ0 120; [चंद्रहार से तात्पर्य ऐसे हार से है जिसकी आकृति चन्द्रमा के समान होती है और उसमे बहुत अधिक श्वेत नग हीरा आदि का जड़ा रहता है] भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1 हीरन के हार, पृ0 191 छं0 528; मुक्ताहार, पृ0 112 छं0 104; पृ0 144 छं0 252; छंदार्णव, पृ0 223 छं0 9; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, मुक्ताहल के हार, पृ0 77 छं 0 53; मोतिय हार, पृ0 186 छं0 68; मतिराम ग्रंथावली, सतसई, मुक्ताहार पृ0 67, 429; चद्रंहार, पृ0364; मुक्तामाल 408/475; रसराज, पृ0 243 छं0 187; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास[षष्ठ उल्लास] मुकतानि के हार, पृ0 295 छं04; पृ0 298 छं0 14; सुजानविलास, पृ0642 छं0 91; रसपीयूषनिधि, मानिन के हार पृ0 97 छं0 52; शशिनाथविनोद, पृ0 505 छं0 33; ब्रजेंदविनोद, 788 छं0 76; तोष: सुधानिधि, मोतिन को हार, पृ0 51 छं0 152; हीरन को हार पृ0103छं0302; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 343; मनूची: स्टोरिया दमोगोर, भाग2, पृ0 339, -40; आइन-ए-अकबरी: भाग3, पृ0 313 ।

2- कंचन पंचलरा गज मोती हरा,

- भिखारीदास ग्रंथावली, खंड 2, पृ0 98 छं0 63;

राग-रत्नाकार, देव ग्रंथावली: चौसरू चारु चमेली पृ0 6 छं021 [चौसरू का तात्पर्य चार लड़ियों वाला हार] सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास, पृ0 505 छं0 33; मनूची: स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0317 राधा-किशन शैली के चित्र में राधा ने कई लडियो का हार पहना है 1700-1850 ई0 [लल्लनराय को प्रबन्ध काव्य रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन] चित्रफलक 17 विभिन्न लड़ियों वाले हार के चित्र हैं ।

कांच की गुरियों के हार का प्रचलन था।[1] जो संभवत: निम्न वर्ग की स्त्रियाँ पहनती होंगी। उपर्युक्त हारों के अलावा पुष्पनिर्मित विभिन्न प्रकार के हारों का उल्लेख समकालीन कवियों ने किया है।[2]

माला- माला और हार वैसे तो देखने में एक से प्रतीत होते हैं किन्तु माला "ग्रथित" अर्थात् गुँथीहुयी [3] और हार "योजित" अर्थात् जोड़ा हुआ होता है प्राचीन समय से ही यह भेद चला आ रहा है।[4]

1- पोत ही के छरा अपछरा सी लगति हौ।

- आलम- आलमकेलि पृ0 8 छं0 18;

यहाँ पोत का तात्पर्य कांच की गुरियों के हार से है। तोष-सुधानिधि, पृ0 123 छं0 362; इरफान: पृ0 99

2- आलम: आलमकेलि, कुसुम के हार, पृ0 26 छं0 61; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 95 छं0 42; पृ0 85 छं0 9; देवग्रंथावली: राग रत्नाकर, चौसरू चमेली पृ0 6 छं0 21; चम्पक हार, पृ0 18छं0 75; पुहुपहार, पृ0 18 छं0 76; फूल हरा पृ0 19 छं0 77; भावविलास, चंपकहार, पृ0 133; रसविलास, पृ0 202 छं0 24; मतिराम ग्रंथावली: कुसुम के हार पृ0 81, चमेली का हार, पृ0 88, पृ0 351 छं0 313; रत्नावली, पृ0 82छं0 140; पृ0 54 छं0 84;, पृ0 75छं0 126; पेलसर्ट, इंडिया पृ0 25

3- अर्थशास्त्र, सं0 पं0 गंगाप्रसाद शास्त्री पृ0 123

4- आइन-ए-अकबरी: अनुवादक एच0. एस0. जेरेट, जिल्द3, पृ0 313

हार की ही भाँति स्त्रियाँ माला[1] को भी गले में ही धारण करती थी ।
सोने से बनी मनकों की लम्बी माला को जिसकी लम्बाई उदर तक होती
थी मोहनमाला[2] कहा गया ।

1- भिखारीदास ग्रंथावली :भाग 2, पृ0 3 छं0 48 ; पृ0 40 छं0 11; पृ0 87 छं0 9; पृ0 102 छं0 36; पृ0118 छं0 20; पृ0 162 छं0 28; भिखारीदास ग्रंथावली खंड: 1, पृ0 15 छं0 87; पृ017 छं0103; पृ0 29 छं0 202; पृ0 47 छं0 128; पृ0 49, छं0 340 ; पृ0 47, छं0 508; पृ0 85 छं0 581; पृ098 छं0 43; पृ0 121 छं0 49; पृ0 149 छं0 273; छंदार्णव, पृ0 223 छं0 9; काव्यनिर्णय, पृ0 118 छं0 20; पृ0 82 छं0 80; देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर, पृ0 14छं0 57; सुजानविलास, पृ060 छं0 54; सुखसागर तरंग, पृ0 86 छं0 250; पृ0 97 छं0 283; छं0103 छं0 299; भाव विलास, पृ0 77 छं0 88; पृ0 86; द्वितीय भाव विलास, पृ0 55 छं0 30; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 86 छं0 13; पृ0 136 छं0 26; शृंगार-विलास, पृ0 612 छं0 123; मतिराम ग्रंथावली: सतसई, छं0 405; आलम: आलमकेलि, पृ0 124 छं0 305 ; तोष: सुधानिधि पृ0 89 छं0 259; पृ0 2 छं0 6; पृ063 छं0 182; पृ0 102 छं0 300; पृ0 123 छं0 259; पृ0 2 छं0 6, पृ0 63 छं0 182, पृ0 102 छं0 300, पृ0 123 छं0 362; मासीर -ए आलमगीरी: अनुवादक जदुनाथ सरकार, पृ0 93, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317; मैन्डल्सो, पृ0 50; बर्नियर 223-224; डीलेट, पृ0 81; कैरी, भाग 3, पृ0 313; डॉ0 लल्लनराय वही; औरंगजेबनामा, द्वितीय भाग, अनुवादक मुंसिफ, पृ0 39

2- देवग्रंथावली भावविलास पृ0 72 छं0 89; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 339-40; आइन, भाग 3, पृ0 313

विभिन्न प्रकार के पुष्पों से निर्मित पुष्प की माला पहनने का भी चलन था।[1] चूँकि तत्कालीन काल वैभव का काल था फलतः उच्चवर्गीय लोग काफी ऊँचे दाम के रत्नादि जटित आभूषण का प्रयोग करते थे। अधिकांश आभूषणों मे रत्न मोती आदि लगे रहने का उल्लेख मिलता है माला के संदर्भ में भी यही बात लागू होती है।[2]

1- "पुष्पनिर्मित माला": मतिराम ग्रंथावली: रसराज, मालती पुष्पमाला, पृ0 556 छं0 77; तोषसुधानिधि : प्रसून की माला, पृ0 60 छं0 174; देवग्रंथावली; रागरत्नाकर, फूल जपा उर, पृ0 4 छं0 13; पृ0 4 छं0 14; पुहुप माल, पृ0 5 छं0 16; पृ0 5 छं0 18; चम्पक फूल माल गरे पृ0 10 छं0 37; सुजानविनोद, सरोज मई मृदु माल, पृ0 50 छं0 22; फूलनि माल पृ0 79 छं0 26; सुखसागरतरंग, पृ0 98 छं0 288; कुमारमणि; रसिक रसाल, पृ0 14; पैलसर्ट इंडिया, पृ0 25

2- देवग्रंथावली :सुजानविनोद मनिमाल, पृ0 60 छं0 54; सुखसागर-तरंग, मोतीमणिमाल, पृ0 86 छं0 250; लरैं मोतिन की, पृ0 97 छं0 283; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, मुकुतमाल पृ0 156 छं0 87; 29, छं0 202; पृ0 47 छं0 138; पृ0 49 छं0 340; मोतीमाल पृ0 47 छं0 508; मुकतानि की माल, पृ0 85 छं0 581; मनि लाल की माल पृ0 98 छं0 43; मुक्ताहल पृ0 121 छं0 149 [यहाँ माला को हल कहा गया है] भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, लालमाल पृ0 3 छं0 48 ; मुक्ताहल पृ0 87 छं0 9; मोतीमाल पृ0 102 छं0 36; पृ0 118 छं0 20; आलम; आलमकेलि, मुकतालर, पृ0 124 छं0 305; मनूची, स्टोरिया दमोगोर, भाग 2 पृ0 339, -40; लल्लनराय हिन्दी रीतिकालीन---, चित्रफलक 17

कई लड़ियों की भी माला पहनने का चलन था ।[1]

माला के अन्तर्गत कंठमाल[2] का उल्लेख मिलता है :

कंठाभूषण में हुमेल का भी उल्लेख मिलता है ।

दरसत कंठ भूषन अनंत मनि जटित हैम के झलमलंत । जगजगति रतन मंडित हमेल, जातैं हथानि को छुटत खेल ।[3]

1- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, तिलरी माला, पृ0223 छं0 9; पंचलरा 90 छं0 9; सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथविनोद(प्रथमोल्लास) पंचलरी नौलरी पृ0 505 छं0 33; आलम: आलमकेलि, पृ0 30 छं0 70; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0317; लल्लनराय, वही, । राधा किशनगढ़ शैली का चित्र राधा में तिलरी धारण की है। 1700-1850 ई0 के (लल्लनराय की प्रबन्ध से उद्धृत चित्रफलक ।।

2- "कंठमाल" आलम: आलमकेलि पृ0 30 छं0 70; भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 144छं0 252; पृ0 22 छं0 143; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 98 छं0 285; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास, पृ0 612 छं0 123; रसपीयूषनिधि, पृ0 136 छं0 26; वही, श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स........, फीमेल कास्ट्यूम्स इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पहाड़ी पेन्टिंग्स पृ0 60, चित्र सं 1 तथा 4

3- "हमेल" सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 642 छं0 90; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 33; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, 145 छं0 252; खंड 2, पृ0 248 छं0 21, लल्लनराय, वही ।

चौकी, उरबसी, धुकधुकी - ये तीनों प्राय: एक प्रकार के आभूषण हैं । उरबसी का स्थान वक्षस्थल और पेट की संधि का गढ़ा होता है, जिसे धुकधुकी भीकहते हैं । इसीलिए इस आभूषण को भी धुकधुकी कहा जाता है । इसे पदिक या जुगनू भी कहते हैं ।[1]

ताबीज - तत्कालीन समाज में रूढ़ियाँ और अंधविश्वास व्याप्त था फलत: स्त्रियाँ ताबीज[2] और रक्षा-यंत्र भी धारण करती थीं जोगले में पहना जाता था ।

कहै कवि तोष जिय जानि दुख-काती
तातें, छाती की ताबीज पिय पाती को किये रहै ।।[3]

1- "उरबसी" भिखारीदास ग्रंथावली: भाग 2, पृ0 77 छं0 53; 'धुक-धुकी' तोषसुधानिधि, पृ0 89 छं0 298; देव ग्रंथावली: पृ0 छं0 283, तथा "चौकी-
(1) कंचन चौकी जराय जरी मणि माणिक मोतिन ज्योंतिन साखी ।
कैधौं दुहूकुच बीच बसाय प्रिया पिय को प्रतिमूरति राखी ।।
- देव सुखसागर तरंग, पृ0 77 छं0 225;
औरंगजेबनामा: द्वितीय भाग, अनुवादक मुंसिफ, पृ0 118, लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी-साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, चित्रफलक 17, तथा पृ0 157

2- "ताबीज" तोष-सुधानिधि, पृ0 64 छं0 184; भिखारीदास ग्रंथावली, खंड 1, पृ0 85 छं0 283; खंड 2, पृ0 102 छं0 36; जाफर शरीफ, कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक, जो0ए0 हरक्लाट्स, पृ0 247-82

बाहु के आभूषण – बाजूबंद– बाँह में सबसे ऊपर पहने जाने वाला यह आभूषण दो–ढाई इंच की लचीली पट्टी जैसा होता था जिसमें झबिया, फुँदना आदि लटकाया जाता था। झबिया बजने पर मधुर आवाज करती थी।[1] रत्नजटित बाजूबंद प्रचलित था।[2]

बाजूबंद के अलावा टाड[3] नामक आभूषण भी बाहु में पहना जाता था। इसे बाजू में पहना जाने वाला खोखला, वृत्ताकार आभूषण बताया गया है।[4]

1– "बाजूबंद": देवग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ0 97 छं0 283; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, (प्रथमोल्लास) पृ0 505 छं0 33; माधवविनोद, पृ0 329 छं0 75; तोषसुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; बाजूबंद झबिया बजी झक–झक पृ0 23 छं0 70 'मासीर–ए–आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93, पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15; डीलेट पृ0 81; बर्नियर पृ0 223–224; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41

2– सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 505 छं0 33; आलम ग्रंथावली: अक्षरमालिका, पृ0 127 छं0 64; वही,

3– "टाड" गोरी गूजरी की दसा बनति विलोकति ही
कहूँ डारी मुटकी अनूप भुज टाड़ कहूँ

–सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 136 छं0– सुजानविलास, पृ0 642 छं0 92; श्रृंगारविलास, पृ0 612 छं0 123; माधव-विनोद पृ0 329, छं0 76; आलम: आलमकेलि संग्रह, पृ0 52, आइन ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 343

4– आईन०, भाग 3 जैरेट, पृ0 313

बिजायठ-बिजायठ नामक आभूषण बाजूबन्द के नीचे पहना जाता है । कवि ने इसके बाँधे जाने का उल्लेख किया है तथा पहनने पर यह भुजमूल (खयन) से चिपका रहता है और इसमें लगी झबिया हिलने पर झनकार उत्पन्न करती है :

> खुभि रहे खयन बिजायठे जराउ छवा झूमति झमकि झुकि सौति उर सूल है ।
>
> संचार समीर चीर अंचर बिराम काम धाम धुजमूल भामती के भुजमूल है।[1]

कलाई के आभूषण - 'कंकन'(कड़ा) कलाई के आभूषणों में कंकन का उल्लेख मिलता है :

> ललो किह गली कित जाती है। निडर चली ।
>
> कसे करि किंकिनी औ कंकन कलाई में ।[2]

कंकन को कँकनी[3], कँगनी[4] तथा ककना[5] भी कहा गया है । कलाई के अन्य आभूषणों

1- देवग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ0 78 छं0 227 ; सुजान विनोद, पृ0 10 छं0 1९ भिखारीदास ग्रंथावली, खंड1, पृ0 90 छं0 9; डॉ0 ग्रियर्सन, बिहार पीजैण्ट्स लाइफ पृ0 154 ,

2- "कंकन" भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0 149 छं0 273; काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42; भिखारीदास ग्रथावली, खंड, पृ0 104 छं0 65; पृ0 149छं0 273; पृ0 150 छं0 277; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 130 छं042; सोमनाथ ग्रंथावली / ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 502 छं0 44; माधवविनोद पृ0 469 छं0 104; पृ0 329 छं0 76; सुजानविलास पृ0 642छं092; देव ग्रंथावली: देवचरित्र, पृ017छं0 83; रसविलास, 237छं0 28; रागरत्नाकर, पृ0 3 छं010; भावविलास, पृ0 69, छं0 35; कुमारमणि: रसिक-रसाल, पृ0 14 छं030; तोष:सुधानिधि पृ0 89 छं0 259; मआसीर-ए-आलमगीरी अनुवादक सरकार, पृ0 93, मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ041 मैन्डल्सो पृ0 50; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 339-40 डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 342

3- 'कँकनी' देव-सुखसागर तरंग, पृ079छं0 228

4- 'कँगनी' वही: पृ0 96 छं0278

5- "ककना" तोषसुधानिधि, पृ0102छं0300

में चूरी(चूड़ी) का वर्णन कवियों ने किया है। काँच की चूरी को हिन्दू स्त्रियों के लिए सौभाग्य का चिन्ह माना गया।[2] तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ अधिक संख्या में चूड़ी पहनती थीं जिसके लिए चारिक (अधिक संख्या) शब्द का प्रयोग किया गया:

चारिक चुरी कर सोहाग माँग मोती इतने ही इतराति सालै
सौतिन करेज ही ।[3]

1- "चूड़ी" (चुड़ी) तोष-सुधानिधि: पृ0 23 छं0 70; पृ0 58 छं0 170; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 30 छं0 209; पृ0 112 छं0 104; पृ0 121 छं0 147; पृ0 121 छं0 149; पृ0 131 छं0 195; रससारांश, पृ0 30 छं0 208; काव्य-निर्णय, पृ0 47 छं0 19; देवग्रंथावली, सुजानविनोद, पृ0 1 छं0 2; पृ0 52 छं0 27; पृ0 60 छं0 59; सुखसागरतरंग, पृ0 79 छं0 208; अष्टयाम, पृ0 24 छं0 16; अंसारी, हरम ऑफ ग्रेटमुगल-पृ0 114; इरफान हबीब, पृ0 99, डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 342; आइन ए अकबरी, भाग 3 जैरेट, पृ0 343; सरकार, पृ0 345 ।

2- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 52 छं0 27; इरफान हबीब, पृ0 99 सुतरंग 92/2+3

3- देवग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 52 छं0 27; पृ0 72 छं0 41; देव, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्यसंग्रह, पृ0 73 छं0 41; पृ0 73 छं0 40; तोष: सुधानिधि चुरियाँ, पृ0 23 छं0 70; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज पृ0 342 (चूड़ी) हाथ में आधी या चौथाई दूरी तक पहनी जाती थी ।

स्त्रियाँ हाथों को गजरे [1] नामक आभूषण से भी सुसज्जित करती थीं । सोने से निर्मित रत्नजटित पहुँची हाथ में पहना जाने वाला अन्य आभूषण था:

कर कंचन की पहुँची ।[2]

वलय - यह हाथ का पतला कड़ा है जो प्राचीन समय से ही चला आ रहा था ।[3]

हथेली एवं अंगुलियों के आभूषण : हथफूल - हथफूल हथेली के पृष्ठ भाग में पहना जाने वाला आभूषण था ।[4]

1- "गजरा" आलम, आलमकेलि पृ0 123 छं0 298; देवग्रंथावली: अष्टयाम पृ0 18 छं0 10; आइन-ए- अकबरी, भाग 3, जे एंड एस0 पृ0 343-345

2- "पहुँची" भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 85 छं0 581; आलम; आलमकेलि, पृ037 पन्नन की पहुँची, तोष-सुधानिधि, हीरन की पहुँची, पृ0 51 छं0 152, पृ0 63 छ0 182; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; मैन्डलसो, पृ0 50, डीलैट, पृ0 81, मआसीर- ए-आलमगीरी; अनुवादक सरकार, पृ0 93, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, 339-40

3- "वलय" देवग्रंथावली :सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 229; मतिराम ग्रंथावली; सतसई, छं0 375 ; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड1, पृ0 20 छं0 134; पृ0 125 छं 167; पृ0 132छं0 199; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 139 छं0 43; आप्टेकृत, संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी; जिल्द1, पृ0519; मआसीर-ए आलमगीरी, सरकार, पृ0 93; डीलैट पृ0 81; मैन्डल्सो पृ0 50

4- "हथफूल" सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथविनोद, पृ0 505 छ0 33; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 317

आरसी – आरसी नामक आभूषण हाथ की अंगुलियों में से अंगूठे में धारण किया जाता था जिसमें नग के स्थान पर शीशा लगा होता था और उस शीशे में किसी भी छवि स्पष्ट रूप से देखी जा सकती थी :

आरसी ऊँची करी कर की कहि तोष लख्यौ छवि भाँति भली सो[1]।

आरसी के अतिरिक्त विभिन्न अंगुलियों में पहनने के लिए विभिन्न प्रकार की अंगूठियां प्रचलित थी:

अरू नव हथफूल आरसी मुँदरी अँगु-रीन विविध लसाई।[2]

मुँदरी या अंगूठी प्रायः सोने की होती थी जिसमें रत्न जड़े होते थे।[3]

1– "असी" तोष: सुधानिधि, पृ0 38 छं0 21; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, दर्पन की मुंदरी पृ0 9 छं0 13; कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 253; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, पृ0 168; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथविनोद, प्रथमोल्लास पृ0 505 छं0 33; अंसारी, हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, भाग 34, पृ0 114, थिवनॉट, चैप्टर XX, ~~पृ0 37; छं0 38~~ मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340

2– सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 33; माधवविनोद, पृ0 329 छं0 77; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 510 छं0 110; कुमारमणि रसिक-रसाल, पृ0 85 छं0 75; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 228; पृ0 79 छं0 229; मतिराम: रसराज, 252/224; रत्नावली, 81/138; "मासीर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93; अंसारी, हरम आफ द ग्रेट मुगल, पृ0 114 मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; डोलेट पृ0 81; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 339–40; आईन, जे एंड सेंस, पृ0 343; 345 औरंगजेब नामा, द्वि भाग, अनु॰ मुंसिफ, पृ0 39

3– देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 79 छं0 228; सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 329, छं0 77; ब्रजेंद विनोद पृ0 510, छं0 110; 502, 42; मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग 2 पृ0 340

कटि के आभूषण : किंकिणी - किंकिणी जिसे रशना, क्षुद्रघंटिका आदि कहा गया कमर में पहना जाने वाला आभूषण था:

मंद गयंद की चाल चलै कटि किंकिनी नेवर की धुनि बाजैं ।[1]

किंकिनी के अतिरिक्त स्त्रियां मेखला नामक आभूषण भी धारण करती थी :

1- मतिराम: रसराज, पृ0 285 छं0 375 ; पृ0 274 छं0 319 ; पृ0 54 छं0 71; पृ0 64 छं0 103; पृ0 109 छं0 257 ; पृ0 113 छं0 27; सतसई, पृ0 413 छं0 537; रत्नावली, पृ0 56 छं0 89; पृ0 91 छं0 158; पृ0 94 छं0 164; पृ0 94 छं0 165; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 68 छं0 43; पृ0 67 छं0 38; पृ0 70 छं0 49; श्रृंगारविलास, पृ0 282 छं0 38; पृ0 293 छं0 42; माधव विनोद, पृ0 415 छं0 33; पृ0 441 छं0 93; 493/113; रामचरित्र रत्नाकर, पृ0 71 छं0 18; ब्रजेंदविनोद, पृ0 501 छं0 40; सुजानविलास, पृ0 642 छं0 99; पृ0 808 ; सोमनाथ-ग्रंथावली; पृ0 502 छं0 9; देवग्रंथावली, भाव विलास, पृ0 91 छं0 63; पृ0 43 छं0 18; पृ0 73 , 87, 109; चतुर्थ भाव विलास, पृ0110 छं04; सुखसागर तरंग: किंकणीक रसना (रत्नमणि मुक्तायुक्त) पृ0 75 छं0 218; पृ0 98 छं0 285; पृ0 83 छं0 218; पृ0 79 छं0 194 ; पृ0 74 छं0 163; पृ0 115 छं0 6; अष्टयाम, पृ0 18 छं010; शब्दरसायन, पृ0 38; प्रेमचन्द्रिका, रसना, पृ0 41 छं0 43; रागरत्नाकर, कटिसूत्र, पृ086 , 31; सुजानविनोद, रसना रव पृ0 61 छं0 59; पृ0 55 छं0 37; आलम-आलमकेलि, क्षुद्र घंटिका पृ0 760 , 16; किंकिणी पृ0 24 छं0 55; पृ0113 छं0 370; पृ0115 छं0 378 ; रसना, पृ0 38, छं0 90; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 248 छं0 21; रसना, भिखारीदास ग्रंथावली खंड 1, पृ0132 छं0 199 ; अंतःपुर हरम आफ द ग्रेट मुगल, भाग 34, पृ0114; आईन०, भाग 3, पृ0 313

कनक मेखला पहिरें नारी।[1]

<u>पैर के आभूषण</u> – पैर के आभूषण में घूँघरी या घुँघरिया धारण किये जाने का प्रसंग मिलता है :

पिय वियोग में तरूनि को पियरानी मुख जोति ।
मृदु मुखा को घूंघरी कटि में किंकिनी होती । [2]

अन्य चरणाभूषणों में पायल का उल्लेख मिलता है । जिसमें घुँघरू लगे होने के कारण चलते समय ध्वनि होती थी ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 708 छं0 24 ; पृ0 292 छं0 76 ; देव ग्रंथावली: रागरत्नाकर, पृ0 5 छं0 16 ; वही; तथा आईन0, 3, जे. एंड एस, पृ0 343-345 ।

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 206 छं0 187; तात्पर्य है नायिका विरह से इतनी पतली हो गयी है कि वह पैर के घूंघरी नामक आभूषण को किंकिनी बनाकर कमर में पहन लेती है ; तोष-सुधानिधि; पृ0 16 छं0 53; पृ0 23 छं0 29; पृ0 39 छं0 116; पृ0 132 छं0 348; घूंघरिया पृ0 93 छं0 273 ; 97 छं0 284 ; आइन-ए- अकबरी, भाग 3, पृ0 313

3- "पायल" भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, बजनी पाइल पृ0 9 छं0 24; 125 छं0 167; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 2, पृ0 139 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पग पैंन पाइल बाजती, पृ0 501 छं0 39; पायल को पाइल कहा गया है, हेमिल्टन भाग 1, पृ0 163; मनूची ; स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340, अंसारी; हरम ऑफ द ग्रेट मुगल, इम्पस्से 34; पृ0 114 आइन-ए-अकबरी, भाग 3, जे. एंड एस, पृ0 343-345

नूपुर [1] और पायजेब [2] पायल की भाँति पैरों में पहना जाने अन्य प्रकार का आभूषण था ।

जेहर[3] का उल्लेख भी चरणाभूषण के अन्तर्गत मिलता है ।

1- "नूपुर" पग के धरत कल किंकिनी नूपुर बजे
बिछिया झनक उठै एक ही झमक ते ।
- मतिराम, रसराज पृ० 239 छं० 170;
पृ० 238छं० 168; 274 छं० 319; पृ0239छं0170; पृ0 92; नेवर 54छं071 113, छं0 271 ; रत्नावली: पृ0 56 छं0 89; कुमारमणि; रसिक रसाल, पृ0 48 छं0 55; सोमनाथ ग्रंथावली; पृ0503 छं0 22; माधवविनोद, पृ0493 छं0 113; 444 छं0130 ; 329/79; रत्नाकर, पृ0 71 छं018; रसपीयूषनिधि, पृ0 95 छं0 42; पृ0 96 छं0 48; ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 501 छं0 39; पृ0 709 छं0 32; पृ0 511 छं0112 ; 774 छं044; श्रृंगारविलास, 304 छं0 43; देवग्रंथावली: भावविलास, पृ0 68 छं0 8; 43/18; सुखसागर तरंग, पृ0 72 छं0 152; 82/214; नेवर, देवचरित्र, पृ0 72 छं0 21; प्रेम-चन्द्रिका, नेवर, पृ041 छं0 43; आलम; आलमकेलि, पृ0 24 छं0 55; पृ0 31 छं0 71 ; पृ0117 छं0 277; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ0 456, 304; रससारांश, पृ0 45 छं0 304; [नूपुर को कहीं-कहीं नेवरभी कहा गयाहै] नूपुर की विशेषता यह है कि यह ध्वनि प्रधान आभूषण है।

2- "पायजेब" सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 642 छं0101; रसपीयूषनिधि पृ0 176, 35

3- "जेहर" देव ग्रंथावली: सुजानविनोद पृ051 छं024; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 176छं0 35; सुजानविलास, पृ0 642 छं0101; अंसारी, हरम ऑफ दि ग्रेट मुगल इम्पायर, 34, पृ0 114; आइन-ए- अकबरी, -भाग 3, जैरेट, पृ0 313

इनके अलावा पैर की अंगुलियों में बिछिया या बिछुआ[1] धारण किया जाता था। अनवट पैर के अंगूठे में पहना जाने वाला आभूषण था :

रूप गुमान भरी मद में
पग हीके अगूठा अनौट सुधारे ।[2]

"बिछिया"
1- गौने के द्यौस कहै मतिराम
सहेलिन को मिलि के गनु आयौ ।।
कंचन के बिछिया पहिरावत
प्यारि सखी परिहास बढ़ायौ ।।

– मतिराम: रसराज, पृ0 269 छं0 296 ; पृ0 239 छं0 170; पृ0 54 छं0 71; तोष: सुधानिधि, पृ0 13 छं043; पृ0 23 छं0 70; देव ग्रंथावली: अष्टयाम, पृ0 18-10; भाव विलास, पृ0 68, 109; पृ077 छं0 9; 103 छं0 2; पृ0 86 छं0 38; पृ0 108; 97 छं0 22 ; 99 छं030; पृ0 100 छं0 39; पृ0 110 छं0 4; सुखसागर तरंग, 79 छं0194; ओविंगटन पृ0 320; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, जे एंड एस, पृ0 343-345

2- "अनवट" मतिराम; रसराज, पृ0 217, छं0 80; रत्नावली, पृ0 64छं0104; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथविनोद(प्रथमोल्लास) पृ0 503 छं0 22; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड1, पृ0 105छं0 69; औरंगजेबनामा, अनुवादक मुंसिफ, भाग 2, पृ0 39; आईन; भाग 3, जैरट, पृ0 313

पुरूषों तथा बच्चों के आभूषण :

स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों को आभूषण के प्रति कम रूचि थी इसलिए तत्कालीन साहित्य में स्त्रियों की अपेक्षा पुरूषों के आभूषण का कम उल्लेख मिलता है। फिर भी कुछ आभूषण ऐसे थे यथा, माला, अंगूठी आदि जो स्त्री पुरूष दोनों इस्तेमाल करते थे। और कुछ आभूषण पुरूष, स्त्री अलग-अलग पहनते थे। शिरोभूषण में पुरूष मुकुट लगाते थे :

> पावै सोभा सीस तब रचिए मुकुट बनाइ ।
>
> बढ़ति बड़ाई मुकुट की जब हरि सीस लगाइ ।।[1]

1- "मुकुट" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0206छं0189; पृ0 37छं034; 49, छं0 49; पृ0187छं015; पृ0134छं019; पृ0 120छं044; पृ0122छं050; पृ0 134छं018; ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 514छं011; पृ0626छं018; पृ0709छं035; पृ0841 छं0 48; रामकलाधर, पृ0 455छं09; माधवविनोद, पृ0 321छं03, पृ0 317 छं01; रामचरित्ररत्नाकर, पृ0 231छं03; ध्रुवविनोद, पृ0555छं0 52; सुजानविलास, पृ0 759छं0 7; श्रृंगार विलास, पृ0 601 छं069; पृ0602छं072; भिखारीदास ग्रंथावली: छंदार्णव, पृ0 119 छं0161; पृ0119 छं0165; पृ0 74 छं0508; पृ0221 छं0 45; काव्यनिर्णय, पृ040छं011; पृ08छं021; पृ022छं039; रससारांश: पृ0 77छं0521; भिखारीदास ग्रंथावली; खंड 1, पृ022छं039; मतिराम ग्रंथावली; रत्नावली, अवतंस, पृ0 107 छं0 190; पृ0 17 छं01; किरीट, पृ0 82 छं0140; 84 छं0144, पृ0299छं05; ललितललाम, पृ0352 छं0322; सतसई, पृ0401 छं0390; रसराज, पृ0290छं0401; देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ061 छं085; देवसुधा; किरीट, पृ0 1छं02; देव: जगदीश गुप्त, रीतिकाव्यसंग्रह पृ072छं035; कुमारमणि: रसिक-रसाल, पृ0 1छं0 1; पृ0 96छं0115; उपर्युक्त कुछ छंदो में मुकुट को किरीट और अवतंस भी कहा गया है। मुकुट का चलन सामान्य रूप से था ऐसा नहीं लगता इसका प्रयोग विवाह आदि अवसरों पर ही होता होगा क्योंकि मुकुट का अंकन कृष्ण के ही संदर्भ में हुआ है। श्रीमती जमीला बृजभूषण; कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स मेल कास्टयूम रीप्रेजेन्टेड इन द पहाड़ी पेन्टिंग्स ऑफ द ऐटटीन्थ सेन्चुरी चित्र 3 में कृष्ण को मुकुट पहने दिखाया गया है।

मुकुट में कलँगी [1] भी लगी होती थी। पुरूषों के अन्य आभूषणों में विभिन्न प्रकार के कुंडल का उल्लेख मिलता है जो कानों में पहना जाता था :

मोर परवानि किरीट बन्यो,

मुकुतानि के कुंडल श्रौन बिलासी।[2]

ग्रीवाभूषण में पुरूष वर्ग हार [3], तथा माला का प्रयोग करते थे :

1– "कलँगी" सोमनाथ ग्रंथावली: प्रेमपचीसी, 'पचरंग पाग लटपटी तिसपै कलँगी मनिमय वारी है" पृ0 893 छं0 17; औरंगजेबनामा, द्वितीय भाग, अनुवादक मुंसिफ, पृ0 118

2– "कुंडल"– मतिराम: रत्नावली पृ0 84 छं0145; ललितललाम, पृ0 352 छं0 322; पृ0 329 छं0 174; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद्रविनोद, मकराकृति कुंडल पृ0690 छं07; पृ0 695 छं0 37; पृ0 621; 21; 708' छं023; 841 छं0 49; 514 छं0 11; 788 छं0 76; रसपीयूषनिधि, मनिमय कुंडल पृ0 78 छं0 24; छं0 24 पृ0 49छं0 49; पृ0 120 छं0 44; पृ0 122 छं0 50; पृ0134 छं019; पृ0 87छं015; पृ0 163छं016; ध्रुवविनोद: पृ0551 छं021; पृ0 555 छं059; रामचरित रत्नाकर, द्वि0ख0, पृ0 202 छं02; पृ0 214 छं013; प्रेमपचीसी, पृ0 893छं017; सुजानविलास, पृ0 794छं023; रामकलाधर, पृ0 455छं09; माधव-विनोद, कंचनकुंडल पृ0 321छं03; कलधौत कुंडल, पृ0327 छं0 59; भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय, पृ0210छं0 582; काव्यनिर्णय, पृ098छं019; छंदार्णव, पृ0 221छं045; हेमिल्टन भाग 1, पृ0 163आइन-ए-अकबरी, भाग2, पृ0126; पी. एन. ओझा: ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ़ इनमुगल इंडिया, पृ0 15

3– "हार"– हरि प्रति कोकुंडल मुकुट हार हिये को स्वच्छ।
आँखिन देख्यों सो रह्यो हिय में छाई प्रतच्छ।
–भिखारीदास ग्रंथावली, द्वि. खं. काव्यनिर्णय पृ0 239 छं0 3; रस सारांश, पृ032छं0225; मतिराम: ललितललाम, पृ0354छं0334; सतसईपृ0 405 छं0 437; रत्नावली, पृ0 75छं0127; सोमनाथ ग्रंथावली; द्वि0ख0, पृ0231, छं0 10; ब्रजेंद्रविनोद पृ0 708 छं023; रामकलाधर पृ0 455 छं09; देवग्रंथावली पृ0 74 छं0 68; 904/21; 915/4

सैा माल पहरै जुग भाई ।[1]

माला में पुरूष वर्ग एक विशेष प्रकार की माला पहनते थे जिसे बनमाला कहा गया :

मोती माल बनमाल गुंजन की माल गरै ,

फूले फूले फूलनि के गजरा रसाल है ।[2]

1- "माला" सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर, पृ0 106 छं0 19; पृ0 107 छं0 27; पृ0 111 छं0 48; बैजंतीमाला, ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 560 छं0 73; पृ0 735 छं0 11; मतिराम: ललितललाम, गुंज की माला, पृ0 336 छं0223; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड1 पृ0 74 छं0 58; गुंजमाल, श्रृंगारनिर्णय, पृ0 90 छं0 9; देवग्रंथावली: रसविलास, पृ0 176 छं0 46 ; बर्नियर 268 ; पेलसर्ट इंडिया पृ0 25

2- "बनमाला" भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 1, 74 छं058; छंदार्णव, पृ0221 छं0 45; भिखारीदास ग्रंथावली: खंड 2, पृ0 125 छं0 14; कुमारमणि, रसिक-रसाल, पृ0 8 छं015; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 111 छं0 25; पृ0 78 छं024; ब्रजेंदविनोद, पृ0 691 छं010; पृ0 626 छं0 18; ध्रुव विनोद, पृ0555 छं0 60; देवग्रंथावली: देवसुधा, पृ0117 छं0 210; भावविलास, पृ0 73; शब्दरसायन, पृ0 45; मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 291 छं0 402 पृ0 292 छं0 410; पृ0 372 छं0284; पृ0213 छं060; ललितललाम, पृ0 205 पृ0 353; छं0323 छं052; 6 62 ; 676; छं0 105; पृ0334 छं0268; रत्नावली, पृ083 छं0 143; पृ0 107 छं0191; सतसई, छं0 426 , 383; छं0186; आलम: आलमकेलि पृ। छं 91; बनमाला की विशेषता यह थी कि यह एक विशेष प्रकार के फूलों से निर्मित थी तथा घुटनों तक लम्बी होती थी । श्रीमती जमीला बृजभूषण: कास्ट्यूम्स एंड टेक्सटाइल्स ऑफ ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ057 चित्र सं0 3 ।

भुजा के आभूषण में पहुँचो [1] भुजबंद [2] तथा बाजूबन्द पहनते थे।

सोहत बाजूबंद बड़े बाहुनि जाकैं। [3]

हाथ के आभूषणों में पुरूष कंकन का भी प्रयोग करते थे :

काहू लई कर को बँसरी कवि देवकोऊ कर कंकन मोरे। [4]

1- "पहुँचो"- कंचन को पहुँचो मुक्तानि को मंजुल माल गरे।।
-भिखारीदास ग्रंथावली भाग।, श्रृंगारनिर्णय 85छं0 581; तोष:सुधानिधि, पृ0 63 छं0 182; आसीर-ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ093; मनूची: भाग 2, स्टोरिया दमोगोर, पृ0 339-40; डोलेट पृ081; मैन्डल्सो पृ0 50; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, 41

2- "भुजबंद"- सोमनाथ ग्रंथावली: द्वि खं, पृ0 214 छं0 13; 231 छं0 11; ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 502 छं0 45; रामचरित्र रत्नाकर पृ0 214 छं0 12; ध्रुवविनोद, वही 555 छं0 62; वही।

3- "बाजूबंद" सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 962छं0 36; ब्रजेंदविनोद, पृ0 691 छं010; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 97 छं0 283; तोष-सुधानिधि: पृ0 102 छं0 300; वही, पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15,

4- "कंकन" देवग्रंथावली: पृ0 74 छं0 68; आलम-आलमकेलि, पृ0 35, छं081; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद्रविनोद, पृ0 788 छं076; माधवविनोद 469, छं0104; मुहम्मदयासीन-ए; सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडियापृ0 41, डोलेट पृ0 81; "आसीर ए- आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0 93, मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 339-40

कराभूषण में गजरा भी पुरूष पहनते थे :

मोतीमाल बनमाल गुंजन की माल गरै,

फूले - 2 फूलनि के गजरा रसाल हैं ।[1]

हाथ की अँगुलियों को पुरूष अंगूठियाँ या मुँदरी नामक आभूषण से सुसज्जित करते थे :

मुँदरी धनी अँगुरीनि मैं ।।

मनि जटित जोति जगीनि मैं ।।[2]

बच्चों को अधिकांशतया ध्वनियुक्त पैंजनी (नेवर, पायल) पाँवों में तथा चूरा (कड़ा) नामक आभूषण हाथ पाँव दोनों में पहनाया जाता था :

कंचन के चूरा, नेवर पगनि बाजै, साजै सुख किंकिनी

झनक झनकारी के ।

'गजरा'

1- भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 74 छं0 508; देवग्रंथावली: रागरत्नाकर, पृ0 14 छं0 55; मतिराम: रसराज, पृ0 27 छं0 50; पृ 27 छं0 51; यह गजरा गले केगजरे से भिन्न कलाई में बांधा जाता है (आइन - ए-अकबरी, अनुवादक एच0 एस0 जैरेट,, जिल्द 3 पृ0 313

'अँगूठी या मुँदरी'

2- सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 42, सुजानविलास, पृ0 642 छं0 94; मतिराम ग्रंथावली; रत्नावली, पृ0 119 छं0 107, कुमारमणि, रसिक-रसाल, पृ085 छं0 75; हेमिल्टन, भाग 1, पृ0 163; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 41; आइन-ए-अकबरी, भाग2 पृ0 126; आइन-ए-अकबरी, भाग3, अनुवादक जे एंड एस, पृ0343, 345

अंचल सौ अंकित, दृगचलनि ताकत, मयंक मुह तारो दै-अंग महतारो के ।[1]

छोटे बच्चों को कमर में करधनो[2] पहनायी जातो थी जिसे कवियों ने क्षुद्रघंटिका, किंकिनो आदि उपनामों से संबोधित किया है।

निष्कर्ष - चूँकि अट्ठारहवीं शती के मध्ययुगीन समाज का मुख्य वर्ण्य विषय स्त्री, उसका सौन्दर्य एवं आकर्षण रहा है, फलस्वरूप पुरूषों के आभूषणों की अपेक्षा स्त्रियों के आभूषणों का अंकन विशेष रूप से हुआ है। ऊपर के विवेचन से यह स्पष्ट हो गया है कि आभूषण एक ओर तो स्त्री के रूप सौन्दर्य को बढ़ाते हैं तो दूसरी ओर इसके साथ ही साथ आभूषण उस काल की स्त्रियों की सामाजिक प्रतिष्ठा एवं उनके अभिजात्य को भी भली-भाँति द्योतित करते हैं ।

1- देव ग्रंथावली:देवचरित्र , पृ0 7 छं0 21; तोषसुधानिधि, पैजनी पृ013 छं0 42; बजनी पैजंनी, पृ0 27 छं0 83; भिखारीदास ग्रंथावली: पैजनी बाजत, पृ0 248 छं021; चूरा, देव ग्रंथावली: पृ0 7 छं0 21; भिखारीदास ग्रंथावली; कंचनचूरे पाइ जराई पृ0 85छं0 282 ; 121/147 आलम-आलमकेलि, पृ0 35छं051; 36/81; डॉ0लल्लन राय, रीतिकालीनहिन्दी साहित्य में उल्लिखत वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 165तथा पृ0 171; आईन-ए-अकबरी, भाग3, अनुवादक जे0 एंड एस, पृ0 343 , 345

2- "करधनी"-भिखारी दास ग्रंथावली: करधनी, पृ0 20 छं0 134; भिखारीदास ग्रंथावली, खंड2 जबरोली किंकिणीपृ0248 छ021; अलम, आलमकेलि, क्षुद्रघंटिका, पृ07छं016; किंकिणी, पृ0 24छं0 55; देवग्रंथावली; देवचरित्र पृ07 छं0 21; आइन-ए- अकबरी, भाग3, पृ0313

पाँचवाँ अध्याय

प्रसाधन

प्रसाधन

वैसे तो प्रसाधन का प्रयोग लोग अपनी रूचि तथा आर्थिक स्थिति के अनुसार करते हैं तथापि स्त्रियों के लिए श्रृंगार की जिन सामग्रियों को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया वह इस प्रकार है - स्नान करना, तेल लगाना, चोटी गूँथना आभूषण पहनना , चन्दन के लेप करना, वस्त्र धारण करना, कुरका लगाना, काजल लगाना, बुन्दे पहनना, नाक में सोना एवं मोती पहनना, गले में आभूषण पहनना, फूल या मोती की माला पहनना, पानखाना, इत्रलगाना आदि का वर्णन है। ये सभी वस्तुएं स्त्रियों के सोलह श्रृंगार के अन्तर्गत परिगणित की गयी हैं ।[1]

कुछ अन्य लोगों के अनुसार सोलह श्रृंगार के अन्तर्गत जिन वस्तुओं का समावेश हुआ है उनमें स्नान, चीर, हार, तिलक, अंजन , कुंडल नासामौक्तिक, केशपाश रचना, कंचुक, नूपुर, सुगंध, कंकण चरणराग, मेखल रणन , ताम्बूल, करदर्पण आदि प्रमुख हैं ।[2]

स्पष्ट है कि सोलह श्रृंगार के अन्तर्गत प्रयुक्त होने वाली वस्तुओं के बारे में लोगों का भिन्न दृष्टिणकोण है ।

अट्ठारहवीं शताब्दी की उच्चवर्गीय महिलाएं ऊपर बताये गये विधियों से श्रृंगार करती थीं । वास्तव में भोग-विलास में लिप्त होने की प्रवृत्ति का

1- आइन-ए- अकबरी, भाग3, अनुवादक सरकार, पृ0 343

2- डॉ0 बच्चनसिंह, रीतिकालीन कवियों की प्रेमव्यंजना, पृ0 306

का प्रभाव सम्पूर्ण समाज पर पड़ा अतः कवियों ने भी, जो अपने समाज की प्रचलित प्रवृत्तियों से ही कविताओं का स्रोत एकत्रित करते हैं, ईश्वरीय प्रेम पर आधारित काव्यों को मानवीय प्रेम कविताओं में बदल दिया। इसी कारण नायिका की वेशभूषा आभूषणों तथा श्रृंगार का वर्णन करना स्वभाविक ही था। इससे हमें तत्कालीन समाज में प्रचलित श्रृंगारिक उपकरणों आदि के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है।

यहाँ तत्कालीन समय में प्रयुक्त होने वाली श्रृंगारिक प्रसाधनों के कतिपय उन विशिष्ट तत्वों की चर्चा की जायेगी, जिससे यह पूर्णतया स्पष्ट हो सके कि तत् समाज में किन श्रृंगारिक उपकरणों का विनियोग विशेष रूप से किया गया है -

<u>मंजन और स्नान :</u> मंजन संस्कृत के मार्जन शब्द से बना है, जिसका मूल अर्थ रगड़ कर साफ करना है अतः इसे स्नान से भिन्न और उसके पूर्व की क्रिया समझनी चाहिए।[1] संस्कृत साहित्य में मज्जनम्- शब्द डूबने और कभी-कभी नहाने के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।[2]

कवियों ने प्रसाधन के अन्तर्गत मंजन का उल्लेख किया है।[3]

1- आप्टे - संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द 2, पृ0 1265

2- वही, पृ0 1220

3- "मंजन" देव: अष्टयाम सं0 रामकृष्ण वर्मा, पृ0 10 छं0 18; सुखसागर तरंग, पृ0 19 छं0 58; पृ0 79 छं0 230; आलम: आलमकेलि, पृ0 15 छं0 53; आलम ग्रंथावली: पृ0 21 छं0 33; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300, मतिराम, रसराज, पृ0 217 छं0 80,

कुछ कवियों ने मंजन शब्द का प्रयोग स्नान के अर्थ में किया है ।[1] किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि मंजन का मार्जन अर्थ तत्कालीन समय में समाप्त हो गया था ।

कवि ने स्पष्ट रूप से लिखा है :

मंजन कै नित न्हाइ के अंग अँगोछि के बार झुरावन लागी [2]

अन्य कवि ने मंजन का प्रयोग पोतने या मलने के अर्थ में किया है :

अंजन दै नैननि अतर मुख मंजन कै
लीन्हें उजराइ कर गजरा जराइ के ।[3]

इसके अलावा मंजन का तात्पर्य नहाने से पहले लगाये गये उबटन से लगाया गया है :

मर्दन करि उबटाइ तन आयौ न्हान नरेस ।
कंचन चौकी पैलस्यौ मानौ उदैदिनेस ।[4]

इस प्रकार विभिन्न प्रसंगों में प्रयुक्त हुए मंजन का यदि सूक्ष्मता से अध्ययन किया जाय तो वह प्रसाधन के एक विशेष चलन को द्योतित करता है।

1- मतिराम ग्रंथावली: रसराज पृ0 69 छं0 114 ; ललितललाम पृ014 छं0 34; तोष-सुधानिधि पृ0 103 छं0 302; आलम; आलमकेलि, पृ0 15 छं053,

2- मतिराम: ललितललाम, पृ0 14 छं0 34

3- देव-अष्टयाम, पृ0 14 छं0 30

4- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविनोद पृ0 764 छं0 11

मार्जन या उबटन मलने की क्रिया तथा सीधे अलंकरण के अन्तर्गत नहीं आयेंगे। इन्हें प्रसाधन के लिए पूर्व नियोजन माना जा सकता है। मंजन और स्नान को षोडश श्रृंगार का प्रथम कृत्य माना गया है।[1]

स्नान भोग के अन्तर्गत विभिन्न रीतियों से सुगंधित जल बनाने, मैल छुड़ाने के लिए गुग्गुल, सैन्धव, चौल, सज्ज-रस आदि में दूध या पानी मिलाकर लगाने, विभिन्न प्रकार से बने उबटनों को शरीर पर मलने आदि का विस्तार से वर्णन हुआ है।[2] नित्य-स्नान को आयु बढाने वाला तथा लक्ष्मी को बिपुल करने वाला बताया है।[3]

विभिन्न अनुलेपन और सुगन्धियाँ : मंजन एवं स्नान के बाद शरीर को सुगन्धित करने, उसके रंग को निखारने तथा त्वचा को कोमल बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार के सुगंधित लेप तैयार किये जाते थे जिसका प्रयोग अति प्राचीन काल से ही होता रहा है।[4]

1- आइन-ए- अकबरी: भाग 3, अनुवादक सरकार, पृ0 343; बच्चनसिंह: रीतिकालीन कवियों की प्रेम व्यंजना, पृ0306

2- सोमेश्वर देव: अभिलषितार्थ चिन्तामणि प्रथम भाग, पृ0 284-पीटर मुंडी, पृ0 450

3- सोमेश्वर देव· पृ० 284

4- डॉ0 वासुदेवशरण अग्रवाल, पाणिनीकालीन भारतवर्ष- पृ0 138; वाल्मीकि कृत रामायण, 1/6/10, 2/11म -18-19; मनुस्मृति: अध्याय 5/126; अर्थशास्त्र, अनुवादक पं0 गंगाप्रसादशास्त्री, पृ0 126 -28, आईन· 30, अनु0ब्लाखमैन, पृ0 78 से 87 तक

कवियों ने गंध एवं अनुलेपनों का उल्लेख प्रसाधन के लिए किया है, जिसके निर्माण में चंदन,[1] केसर[2], कुंकुम[3] कपूर[4], जबाद[5] इत्र[6] अरगजा[6] चोबा[8] कस्तूरी आदि पदार्थों का योगदान रहता था ।

1- "चंदन"- भिखारीदास ग्रंथावली; प्रथमखंड पृ० 51 छं० 357; पृ० 53 छं०370; पृ० 147 छं० 263; पृ० 159 छं0318 ; मतिराम, रसराज, पृ० 67 छं० 114;पृ० 246 छं० 199; ललितललाम, पृ० 355 छं० 343; छं० 89; रत्नावली, पृ० 50 छं० 76; सोमनाथ ग्रंथावली; द्वितीय खंड, रामचरित्र रत्नाकर, तृतीय सर्ग, पृ० 28 छं० 32; श्रृंगार विलास, पृ० 311 छं० 69; देव ग्रंथावली; राग-रत्नाकर, पृ० 13 छं० 52; पृ० 13; छं० 53; सुजानविनोद, पृ० 58 छं० 44; भवानी विलास, पृ० 110 छं० 92 तोष:सुधानिधि, पृ० 60 छं० 174; पृ0 89 छं० 259; पृ० 94 छं० 274; आलम: आलम ग्रंथावली, सं. विद्यानिवास मिश्र, पृ० 10 छं० 29; आईन. 30, ब्लाखमैन पृ0 83 ; जरनल ऑफ वेंकटेश्वरा ओरियंटल इंस्टीट्यूट, भाग 8, 1964, पृ० 25-26

2- "केसर" देव ग्रंथावली : तृतीय भाग, पृ० 110 छं० 92; रसविलास, अष्टम भाग पृ० 238 छं० 33; भावविलास, पृ०72, 128; पृ० 84 छं० 26; राग-रत्नाकर, पृ० 5छं० 16; पृ०9 छं० 34; पृ० 18 छं० 76; सुजान विनोद, पृ० 58 छं० 344; शब्दरसायन, पृ० 22, सुखसागर तरंग, पृ० 79 छं० 230; अष्टयाम, पृ० 16 छं० 6; तोष-सुधानिधि, पृ० 2 छं० 6; पृ० 102 , छं० 300; मतिराम; ललितललाम, पृ० 356 छं० 344; छं० 88; रसराज, पृ० 63 छं० 101; पृ0 246 छं० 201; ~~छं० 201~~ पृ० 223 छं० 105; मतिराम सतसई, छं० 22; ~~घन आनंद~~: ग्रंथावली; पृ० 125 छं0 407 ; वही ; जे. ए. एस. बी; 1, 1935, पृ० 280

3- "कुंकुम"- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग, पृ० 122छं०50; मतिराम रसराज, 271छं० 304; सतसई, पृ० 357; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथमखंड, पृ०39 छं0260; पृ० 122 छं० 154; पृ० 127 छं0177; पृ० 135 छं० 211; भिखारीदास ग्रंथावली; द्वितीय खंड पृ० 156 छं० 26; देव ग्रंथावली; राग रत्नाकर, पृ०20 छं० 96; तोष:सुधानिधि, पृ० 102 छं0300, वही, रेखा मिश्रा: वीमेन इन मुगल इंडिया, पृ० 123; आइन-ए-अकबरी; भाग 3, पृ० 312

4- "कपूर"- देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 58, छं0 44; रागरत्नाकर पृ0 5 छं0 16; पृ0 9 छं0 34; पृ0 13 छं0 52; पृ0 13 छं0 53; सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग पृ0 122 छं0 50, वही ।

5- "जाबाद"-भिखारीदास ग्रंथावली द्वितीय खंड, पृ0 137 छं0 33, वही आइन-ए-अकबरी, ब्लॉकमैन, पृ0 83

6- "इत्र"- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 328 छं0 68; श्रृंगारविलास, पृ0 311 छं0 69; रसपीयूषनिधि, एकादशतरंग, पृ0 104 छं0 75; देवग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; देव: अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; पृ0 17 छं0 8; पृ0 18 छं0 10; देवग्रंथावली, सुजानविनोद पृ0 34 छं0 18; पृ0 52 छं0 27; भूषण ग्रंथावली; शिवाबावनी पृ0 15 छं0 10; वही । मासीर-ए-आलमगीरी 3 सरकार, पृ0 100; अनूस्ची; 1, पृ0 163; यासीन, पृ0 42; सियार-उल-औलिया, पृ0 101

7- अरगजा" देवग्रंथावली राग-रत्नाकर, पृ0 166 वही । आइन-ए-अकबरी, ब्लॉकमैन 8

8- चोवा" घन आनंद कवित्त, पृ0 45 छं0 72; मतिराम: रसराज, पृ0 228, छं0 123; देवग्रंथावली, रागरत्नाकर, पृ0 9 छं0 34; सुजानविनोद, पृ0 34, छं0 18; पृ0 43, छं0 49; पृ0 58, छं0 44; सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 66; पृ0 89, छं0 250; देव: अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; वही । के. एम. अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 180-181

9- "कस्तूरी" - मतिराम: रसराज, पृ0 61 छं0 97; - सतसई, छं0 378; देवग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ0 58 छं0 44; पृ0 60 छं0 54; पृ0 83 छं0 39; सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 240; राग-रत्नाकर, पृ0 5 छं0 19; पृ0 9 छं0 34; आलम, आलमकेलि, पृ0 39, छं0 91; पृ0 84 छं0 242; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, प0 306 छं0 48; वही ।

उपर्युक्त अनुलेपनों का विस्तृत विवरण निम्न प्रकार से है :

<u>चंदन</u> : प्रसाधन में चंदन का प्रयोग कई प्रकार से होता है । शरीर को गौर चर्म कोकोमल और शीतल बनाए रखने के लिए किसी स्निग्ध पदार्थ के मेल से इसका अत्यन्त पतला लेप तैयार किया जाता है, जिसका उपयोग प्रायः गर्मी से बचने, विरहणियों के शीतोपचार आदि के लिए किया जाता था:

धोर धनो धनसार सो केसरि चंदन गारि के अंग सम्हारै । [1]

दो रंगो के चंदन, सफेद चंदन[2] और लाल चंदन[3] अधिक इस्तेमाल किये जाते थे । कवि के अनुसार सौन्दर्य वृद्धि के दृष्टिकोण से भी चंदन नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ करती थी :

1- देव ग्रंथावली: पृ0 110 छं0 92; के0 एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन्स ऑफ पोपुलस ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181

2- "सफेद चंदन : मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 50 छं0 76; सोमनाथ, ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 779 छ014; वही, आईन 30 अनुवादक ब्लाखमैन पृ0 83; अर्थशास्त्र अनुवादक गंगाप्रसाद शास्त्री, पृ0 126

3- "लाल चंदन " सोमनाथ ग्रंथावली: रामचरित्र रत्नाकर, तृतीय सर्ग, पृ0 28छं0 32; सुजान विलास, पृ0 790 छं0 19, पृ0 232 छं012; पृ0 231 छं05; आईन 30, अनुवादक ब्लाखमैन पृ0 83, अर्थशास्त्र, अनुवादक गंगाप्रसाद शास्त्री पृ0 126

ए री बाल तेरे भाल- चंदन के लेप आगे

लोपि जात और के हजारन के गहने ।[1]

<u>केसर और कुंकुम :</u> चंदन की भाँति केसर नामक प्रसाधन तथा कुंकुम का उल्लेख मिलता है । अनुलेपन के लिए ~~केसर~~ अन्य सुगंधियों के मेल से बनता था:

1- भिखारीदास ग्रंथावली : प्रथम खण्ड, पृ0 147 छं0 263; पृ0 159 छं0 318; पृ0 53 छं0 370; मतिराम: रसराज, पृ0 246 छं0 198; पृ0 67 छं0 114; सोमनाथ ग्रंथावली; रामचरित्र रत्नाकर पृ0 28छं0 32; देवग्रंथावली; राग-रत्नाकर पृ0 13 छं0 52; पृ0 13 छं0 53; सुजानविनोद, पृ0 58 छं0 44; के एम अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 180, आईन, भाग 3, पृ0 312

2- "केसर तथा कुंकुम"- तोषःसुधानिधिः पृ0 2 छं0 6; पृ0 102 छं0 300; देव-ग्रंथावली; रसविलास, पृ0 202 छं0 24; अष्टयाम पृ0 16 छं0 6; देवग्रंथावली; तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92; भिखारीदास ग्रंथावली; पृ0 137 छं0 33; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 107 छं0 11; श्रृंगार विलास, पृ0598 छं0 53; सुजानविलास, पृ0 764 छं018; "कुंकुम" भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ0 39 छं0 260; पृ0 122छं0 154; पृ0 127 छं0 177; देव: रागरत्नाकर, पृ0 20छं0 96; सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, त्रयोदशतरंग, पृ0122 छं0 50; जनरल ऑफ वेंकटेश्वर ओरियंटल इंस्टिटीयूट, भाग7, 1946 पृ025-26; के0एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

घोरि घनो घनसार सो केसरि चंदन गारि के अंग सम्हारै ।[1]

कभी- कभी अकेले होकेसर का लेप तैयार किया जाता था जिसे स्त्रियाँ प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थी :

सारी जरतारी की झलकत तैसी
केसरि को अंगराग कीनो सब तन में ।[2]

केसर की प्रकृति समशीतोष्ण है, सभी ऋतुओं में इसका प्रयोग हो सकताहै फलतः केसर को युवतियों का सर्वाधिक मन पंसद लेप बताया गया है ।[3]

केसर को पुष्प का किंजल्क माना गया है ।[4] प्राचीन संस्कृत साहित्य में कुंकुम आज के केसर के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है तथा किंजल्क पराग या फूलों के बीच के पतले तंतु को केसर कहा गया है ।[5]प्राचीन कुंकुम को केसर से

1- देव ग्रंथावली: तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92; भिखारीदास ग्रंथावली, द्वितीय खंड, पृ0 137 छं0 33; आइन-ए- अकबरी, भाग 3, पृ0 312

2- मतिराम: ललितललाम, पृ0 356 छं0 344; मतिराम, रसराज, पृ0 246 छं0 120; पृ0 223 छं0 105; देव ग्रंथावली: रसविलास, पृ0 238 छं0 33; के0एम0 अशरफ लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15

3- लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य मे उल्लिखित वस्त्राभूषणों का अध्ययन पृ0 189 -190

4- देव: सुखसागर तरंग पृ079छं0230

5- कालिदास: रघुवंश सर्ग 4/ 67; पूर्व मेघदूत छं0 22 में कदम्ब के किंजल्क को भी केसर कहा गया है।

भिन्न माना जाने लगा। कवियों ने कुंकुम का उल्लेख केसर के साथ और स्वतंत्र रूप से दोनों ही प्रकार से किया है।[1]

<u>कस्तूरी</u> : कस्तूरी एक सुगंधित पदार्थ है जो मृग की नाभि से प्राप्त किया जाता है। काले रंग के इस सुगंधित पदार्थ को कवियों ने मृगमद और कुरंगसार कहा है जिसे केसर की भाँति शरीर में लगाया जाता था :

पुनि अंगनि केसर मद कुरंग, ...।[2]

कस्तूरी चूँकि ऊष्ण प्रकृति की मानी गयी है इसलिए कवि ने शीतकाल में कस्तूरी के लेप का उल्लेख किया है :

सिसिर के सीत प्रियापीतम सनेह दिन छिन से बिहात देव रति भियरातीं
केसर कुरंगसार अंग में लिपत दोउ, दुहू में दिपत औ छिपत जातछाती मैं।[3] कस्तूरी

1- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, केसरि कुंकुम, पृ० 135 छं० 211; तोष: सुधानिधि, केसरिकुंकुम, पृ० 102 छं० 300; सोमनाथ ग्रंथावली: केसरि कुंकुम पृ० 122 छं० 50; देव ग्रंथावली: रागरत्नाकर, कुंकुम पृ० 20 छं० 96; कुमारमणि रसिक-रसाल, कुंकुम पृ० 77 छं० 50; भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० कुंकुम, पृ० 39 छं० 260; पृ० 122 छं० 154; छं० 154, पृ० 127 छं० 177; भिखारीदास ग्रंथावली, द्वितीय खंड, पृ० 156, 26 पी. एन. ओझा: ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ० 15
2- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ० 764 छं० 18; मतिराम: रसराज, मृगमद पृ० 61 छं० 97; आलम-आलमकेलि, पृ० 84 छं० 242
3- देव ग्रंथावली: राग-रत्नाकर, मृगमद, पृ० 5 छं० 19; सुजानविनोद, पृ० 60, छं० 54; कुरंगसार, देव: सुजानविनोद, पृ० 58 छं० 44; पृ० 83 छं० 39
4- देवग्रंथावली : सुजानविनोद: पृ० 79 छं० 26

को मृगम्मद तथा मृगमदपोति भी कहा गया है ।[1] इस प्रकार कस्तूरी नामक प्रसाधन अंगराग के लिए इस्तेमाल किया जाता था ।[2]

कपूर : प्रसाधन के रूप में कपूर[3] का भी प्रयोग स्त्रियाँ करती थीं । कपूर को धनसार भी कहा गया है।[4] अनुलेपन के लिए या सुगन्धि के लिए कपूर का प्रयोग स्वतंत्र रूप से नहीं बल्कि गुलाब रस, इत्र, चोवा आदि के साथ मिलाकर किया जाता था :

1- देव ग्रंथावली: मृगम्मद पृ0 83 छं0 240, मृगम्मद पोति, आलम: आलमकेलि, पृ0 39 छं0 91

2- "कस्तूरी" - मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 61 छं0 97; सतसई, छं0378; देवग्रंथावली: राग-रत्नाकर, पृ083 छं0 39; सुजानविनोद, पृ060, छं0 54; पृ0 58 छं0 44; देवसुधा, 132/131; 271/95; 222/168; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 764, छं0 18; के0एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पोपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 15

3- "कपूर" देवग्रंथावली: रागरत्नाकर पृ0 5 छं0 16; 9/34; 13/52; 13/53; सुजानविनोद, पृ0 58 छं0 44; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 122 छं0 50; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 312

4- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ015छं010, देव: भावविलास, पृ0128, देव ग्रंथावली: तृतीय भाग पृ0 110 छं0 92

अतर गुलाब रस चोवा घनसार सब,[1]

- -

किसी भी वस्तु के साथ मिलाने पर यह अपना रंग न देकर केवल गंध देता है। क्योंकि यह ऐसा पदार्थ है जो अलग रहने पर उड़ जाता है। कपूर का वृक्ष होता है। इसी वृक्ष से निकलने वाले द्रव पदार्थ को सुखाकर कपूर बनाया जाता है।[2] कपूर के ऐसे विशाल वृक्ष का वर्णन मिलता है जिसकी छाया में सौ घुड़सवार एक साथ ठहर सकते थे।[3]

<u>गोरोचन</u> : यह गाय के पित्ताशय से प्राप्त होने वाला ठोस पदार्थ है जिसे बंदन कहा गया।[4] बंदन का प्रयोग मुख्य रूप से प्रसाधन के रूप में तिलक लगाने के लिए किया जाता था :

1- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; पृ0 39 छं0 128; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 122 छं0 50; देवग्रंथावली तृतीय भाग, पृ0 110 छं0 92

2- आईन; 30 अनुवादक ब्लाखमैन; पृ0 83

3- वही

4- "बंदन" भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 1 छं0 2; पृ07 छं0 32; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 40 छं0 12; पृ0 177 छं0 17; तोष-सुधानिधि, पृ0 61 छं0 438; पृ0 89 छं0 259; पृ0 123 छं0 362; मतिराम: मतिराम सतसई, छं0 696; देवग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 83, छं0 240; लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 191

बंदन तिलक लिलार मे ऐसो मुख छवि होति ।
रूप-मौन में जगमगै मनो दीप की ज्योति ।।[1]

ललाट पर गोरोचन (बंदन) के तिलक से मुख का सौन्दर्य इस प्रकार प्रकाशित हो रहाहै मानों छविगृह में दीप की ज्योति जगमगा रही है। यहाँ तिलक को दीपक की लौ द्वारा संकेतित किया गयाहै। चूँकि बंदन को तिलक लगाने के अर्थ में लिया गया है इसलिए इसे अनुलेपन न मानकर रंजन द्रव्य मानना अधिक संगत लगता है।

जबाद या जुबाद : जबाद या जुबाद बिल्ली जैसे जानवर (गंध बिलाव) के मद से बनने वाला अत्यन्त मूल्यवान सुगंधित पदार्थ है ।[2]

कवि ने जबाद नामक प्रसाधन का प्रयोग उबटन के रूप में किये जाने का उल्लेख किया है :

कैवा जबादिन सो उपटयौ सज्यौ केसरि को अंगराग अपारो ।[3]

अंगराग : विभिन्न अनुलेपनों को कवियों ने प्राय: अंगराग शब्द से अभिहित किया है । जहाँ चंदन केसर, कस्तूरी आदि के अंगराग का उल्लेख है , वहाँ तो इसके निर्माण में योग देने वाले पदार्थ स्पष्ट हैं, लेकिन जिन स्थलों

1- मतिराम: मतिराम सतसई, पृ0 309, छं0 696; तोष:सुधानिधि, पृ0 89 छं0 259; पृ0 123 छं0 362; पृ0 61 छं0 438 ; देव, सुखसागर-तरंग, पृ0 83 छं0 240; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ0 7/32; पृ0 1 छं0 2; द्वितीय खंड पृ0 117 छं0 17; पृ0 40 छं0 12

2-आईन· 30, अनुवादक ब्लाखमैन, पृ0 85

3- भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 137 छं0 33, वही ।

पर केवल अंगराग शब्द का उल्लेख हुआ है, वहाँ पर पता नहीं चलता कि वह किन किन वस्तुओं के योग से बना है सिर्फ अंगराग लगाये जाने की पुष्टि होती है :

अंग ललित सित रंग परअंगराग अवतंस ।[1]

अरगजा : अरगजा ग्रीष्म काल का अत्यन्त शीतल लेप है। कवि ने ग्रीष्म की दुपहरी में अरगजा लगाये जाने का उल्लेख किया है :

ग्रीष्म मध्यान अरगजा कियो अंगराग--[2]

चोवा : चोवा एक प्रकार का सुंगधित द्रव्य है जिसे स्त्रियाँ प्रसाधन के रूप में इस्तेमाल करती थी।यह चुवाया जाने वाला द्रव-पदार्थ है, जो प्रायः श्यामवर्ण का होता था, किसी ने श्वेत वर्ण का भी बताया है, औगरू की लड़की से चुवाया जाता था ।[4] कवि ने चोवा चुवाकर बनाने का उल्लेख किया है । [5]

1- "अंगराग"-मतिराम: मतिराम सतसई, पृ0 401 छं0 393 ; छं0 511; रसराज: पृ0 62 छं 99; भिखारीदास ग्रंथावली; द्वितीय खंड, पृ0 127 छं0 177,

2- "अरगजा" देव- रागरत्नाकर पृ0 16 छं0 68; पृ0 16 छं0 66; देवसुधा, संपा मिश्रबन्धु पृ0 168,

3- "चोवा" भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं 10; मतिराम: रत्नावली, पृ0 67 छं0 111; रसराज , पृ0 228 छं0 123; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 66; 89 छं0 250; अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; 270/10; 271/16; सुजान विनोद पृ0 34 छं0 18; पृ0 43 छं0 49; पृ0 58 छं0 44; राग-रत्नाकर, पृ09 छं0 34; आईन-30 अनुब्लाखमैन्न, पृ086

4- आईन-30 ब्लाखमैनन, पृ0 86

5- चुवाई कियौ चितचैन को चोवा-

घनानंद कवित्त, पृ0 45छं0 75; वही

चोवा नामक प्रसाधन को बालों में लगाये जाने का उल्लेख कवि ने इस प्रकार किया है :

तिलोछति सुकेस देस चोवा चुपरत हो"[1]

चोवा द्वारा अंगिया तथा कंचुकी को सुरभित किया जाता था। कवि ने कंचुकी में चोवा लगाने का सुन्दर चित्रण किया है :

कंचुकी मैं चुपर्‌यौ करि चोवा लगाइ लियो उर सो अभिलाख्यौं ।।[2]

<u>अगुरू</u> : अगुरू(या अगर)को एक विशेष वृक्ष को जड़ बताया गया है, जो काफी समय तक जमीन में गाड़कर तैयार किया जाता था ।[3] आयुर्वैदिक ग्रंथो में इसे उत्कृष्ट एवं गुणकारी औषधि बताया गया है।[4] इसके तेल को काषाय, कुष्ठ, कफ़ और वायु का नाशक बतलाया गया है ।[5] अगरू से बाल धूपा जाता था जिसका उल्लेख प्राचीन संस्कृत साहित्य मे भी मिलता है।[6] चंदन आदि मिलाकर इसका लेप तैयार किया जाता था ।[7] तत्कालीन कवि नेअगुरू से बाल धूपने का ~~स्पष्ट~~ उल्लेख किया है :

1- देव ग्रंथावली: सुजान विनोद, पृ043 छं0 49; पृ0 34 छं0 18,

2- देवग्रंथावली:पृ0 67 छं0 14; भवानी विलास, पृ0 45 छं0 29; राग-रत्नाकर, पृ0 9छं0 34; "अंगिया में लगावत चोवे "मतिराम: रत्नावली, पृ0 67 छं0 111; घनानंद ग्रंथावली: पृ0 45 छं0 72; आईन. 30, पृ0 78-87

3- आईन. 30, अनुवादक ब्लाखमैन, पृ085

4- श्री अत्रिदेव विद्यालंकार, प्राचीन भारत के प्रसाधन, पृ048, 51

5- वही, पृ0 50

6- कालिदास ऋतुसंहार, 4/5, 5/13

7- वहीं, 2/21

बारन धूपि, अगारन धूपि कै, धूम अंध्यारो पसारो महा है ।।[1]

अगुरू को कोटाणु निरोधक बताया गया है, जिसका चूर्ण चर्म और वस्त्र में मलने के काम आता था ।[2]

इत्र - यद्यपि प्राचीन समय से ही अनेक सुगन्धियों का वर्णन मिलता है । परन्तु विशेष प्रक्रिया से इत्र बनाने का आरम्भ मुगल काल में हुआ ।[3] नूरजहाँ की माँ ने गुलाब के पुष्प से एक नये प्रकार का इत्र तैयार किया जिसका नाम इत्र-ए- जहाँगीरी रखा ।[4]

तत्कालीन समय में उच्चवर्गीय स्त्रियाँ सुगंधियों का अधिकाधिक प्रयोग करती थीं फलत: इत्र का प्रयोग प्रसाधन के रूप में खूब किया जाता था :

1- मतिराम ग्रंथावली: ललितललाम, पृ0 22 छं0 35; विस्तृत विवरण के लिए आईन· 30, पृ0 78-87 ।

2- आईन· 30 वही

3- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग । पृ0 163-164; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 42

4- उपरोक्त, आईन 30, अनु0 ब्लाखमैन, पृ0 85; मुहम्मदयासीन, वही, सियार उल औलिया, भाग 3, पृ0 225, तुजुक-ए- जहाँगीरी अनुवादक, आर, एंड बी, भाग ।, पृ0271, मनूची स्टोरिया द मोगोर, भाग ।, पृ0 163-165

सौमनाथ कहैं आछौ अतर लगायौ तैसो

छहरो सुगंध चारू चंपक सुदेश ते ।[1]

कवि ने चंदन के इत्र का उल्लेख किया है :

सौमनाथ चंदन को अतर लगायो चारू, छहरो सुगंध तन कंचन

सुदेशाते ।[2]

इत्र के अलावा अन्य कई प्रकार की सुगन्धियों का प्रयोग स्त्रियाँ करती थीं जैसे " गुलाब (जल)[3] विभिन्न प्रकार सुंगधित तेल -फुलेल आदि[4]

1- "इत्र" - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, एकादश तरंग पृ0 104 छं0 75; श्रृंगार विलास पृ0 311 छं0 69; माधवविनोद पृ0 328, छं068; ब्रजेंदविनोद, पृ0 670 छं0 30; देवग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ034 छं018; अष्टयाम पृ017; पृ016 छं06; 18 छं010; 270/10; 269/16; सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; मआसीर ए-आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ0100, पी0एन0 ओझा; ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ017; मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, 42 आईन; अनुवादक ब्लाखमैन, पृ 0 78-93 प्रस्तुत छंदो में इत्र को अतर कहा गया है।

3- गुलाब(जल) - भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 15 छं0 10; देव; भाव विलास, पृ0 111 छं0 69; देव, अष्टयाम, पृ0 16 छं0 6; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 22 छं0 67; पृ0 86 छं0 249; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 94, छं0 40; पृ0 95 छं0 45; आईन, I, पृ0 75 अशरफ, 181,

4- "फुलेल" -देव ग्रंथावली : पृ0 86 छं0 249; सुखसागर तरंग 89/250; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 40

कुछ स्थलों पर कवियों ने सिर्फ – सुगंधि या सोंधा[1] शब्द का इस्तेमाल किया है जिससे सिर्फ इतना ज्ञात होता है किसी सुगंधित वस्तु का प्रयोग हुआ है ~~किन्तु~~, यह सुगंधि विशेष किस वस्तु से बनी है यह ज्ञात नहीं हो पाता ।

एक समयमें ~~में~~ स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के प्रसाधन सामग्री का प्रयोग करती थी। इसके लिए कवि का निम्न छंद बहुत महत्वपूर्ण है :

चोवा सो चुपरि केस केसर सुरंग अंग केसरि उबटि
अन्हवाई है गुलाब सों ।
अँतर तिलोद आछे अंबर लै पोछि ....।।[2]

मुस्लिम द्वारा इत्र आदि सुगंधित वस्तुओं का प्रयोग "सुन्ना" के रूप में स्वीकार्य था अतः उनके द्वारा इसका प्रयोग सामान्य व वृहद् स्तर पर किया गया ।[3]

1– "सुगंधि या सोधों" –घनानंदः घन आनंद कवित्तः पृ० 47 छं० 75 ; पृ० 228; पृ० 49 छं० 78; देव ग्रंथावलीः भावविलास, पृ० 69; शब्द-रसायन, पृ० 45; राग-रत्नाकर पृ० 5 छं० 18; देव-अष्टयाम, पृ० 5 छं02; पृ० 8 छं० 9; भूषण ग्रंथावलीः शिवाबावनी, पृ015 छं० 10; तबकाते-अकबरी, भाग 2, 494

2– देव-अष्टयाम, पृ० 16 छं० 6; सुखसागर तरंग, पृ० 79 छं० 230 ; 89/250; भिखारीदास ग्रंथावलीः पृ० 135 छं० 211; तोषः सुधानिधि, पृ० 102 छं० 300; भूषण ग्रंथावलीः शिवाबावनी, पृ० 15 छं० 10; घनआनंद, घनानंद कवित्त, सं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ० 228, के०एम० अशरफ लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान , पृ० 181

3– मासीर-ए- आलमगीरी, अनुवादक सरकार, पृ० 100; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 42

अन्य प्रसाधनो में स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के तिलक, बिन्दी, पत्रावली, गोदना आदि का प्रयोग करती थीं जो इस प्रकार है -

तिलक :- तिलक का प्रयोग स्त्रियाँ काफी समय पहले से ही करती थीं ।[1]

तिलक को एक जंगली पौधा बताया गया है जो चार-पाँच फीट का होता है। उसके फूल में पाँच पंखुरियाँ होती हैं और नीचे की पंखुरी सबसे बड़ी होती है । उसकी बड़ी पंखुरी पर एक चिन्ह बना होता है, जो स्त्रियों के मस्तक पर बनाये जाने वाले तिलक से बहुत मिलता है ।[2] किन्तु यहाँ पर यह बात स्पष्ट नहीं हो पायी कि तिलक का आकार-प्रकार कैसा था । इसके विपरीत तत्कालीन कवि ने स्त्रियों द्वारा माथे पर लगाये जाने वाले तिलक का जो उद्धहरण प्रस्तुत किया है उससे तिलक के आकार के संदर्भ में कुछ संकेत मिलता है, उद्धहरण इस प्रकार है :

बंदन तिलक लिलार में ऐसी मुख छवि होति ।
रूप भौन मैं जगमगै मनो दीप की ज्योति ।।[3]

यहाँ पर तिलक दीप की लौ द्वारा संकेतित किया गया है। अतः उसके दीपशिखा जैसे लम्बा तथा नुकीला होने की ओर एक अस्पष्ट सा संकेत माना जा सकता है।

1- कालिदास: रघुवंश, 9/41

2- आप्टे: संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द 2 पृ0 774

3- मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ0 122 छं0 138

माथे पर तिलक लगाने के लिए स्त्रियाँ रुचि के अनुकूल विभिन्न प्रसाधनों का प्रयोग करती थीं ।[1]

आड़[2] तथा खौर[3] भी एक प्रकार का तिलक माना गया है जिसे स्त्रियाँ माथे पर लगाती थीं । आड़ के नाम से ही पता चलता है कि इसे स्त्रियाँ आड़े आकार का बनाती होंगी ।

1- "तिलक"- आलम: आलमकेलि, कुकुम तिलक, पृ0 146 छं0 278; देव ग्रंथावली: राग रत्नाकर, चंदन तिलक, पृ0 14 छं0 45; केसरि को तिलक, वही, पृ0 18छं0 76; तिलक भाल कुंकुम, पृ0 20छं0 96; सुखसागर-तरंग, मृगम्मद केसरि चंदन तिलक, पृ0 84 छं0 242; तोष: सुधानिधि, चंदन तिलक पृ0 89 छं0 259; मतिराम: रत्नावली, चंदन तिलक, पृ0 122 छं0 138; मैन्डल्सो, पृ0 51; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल ऑफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी. एन. ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15

2- "आड़": भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 170 छं0 19, देव: प्रथम खंड, पृ0 छं0 334; पृ0 122 छं0 154; देव: शब्दरसायन, पृ0 22, सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास, पृ0 296 छं07, रसपीयूषनिधि, पृ0 228 छं023; ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मीडिवल इंडिया, पृ0 56

3- "खौर" - तोष: सुधानिधि पृ0 2 छं0 6; पृ0 126 छं0 639; देव: भावविलास, पृ0 72; भिखारीदास, ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 7 छं032; पृ0 24 छं0 159; पृ0 119 छं0 139 ; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 170 छं0 19; वही ।

माथे की बिन्दी[1] लगाकर भी सजाया जाता था । बिन्दी को टीका[2] तथा चखौड़ा [3] भी कहा गया है।

<u>पत्रावली रचना</u> : पत्रावली रचना का फैशन काफी पहले से ही था । पत्रावली मुख, ललाट और शरीर के अन्य अंगों पर बनाया जाता था ।[3] कवियों ने पत्रावली शरीर के विभिन्न भाग में बनाने का उल्लेख किया है ।[5]

1- "बिन्दी"- आलम: आलमकेलि, पृ0 19 छं0 29; पृ0 14 छं0 32; पृ0 146 छं0 378; मतिराम: सतसई , छं0 650; देव: भाव विलास, पृ0126; शब्दरसायन, पृ0 127 ; प्रेम-चन्द्रिका, पृ0 35 छं0 23; राग-रत्नाकर, पृ0 5 छं0 16; पृ0 9 छं0 34; सुजान-विनोद, पृ0 47छं0 5; पृ0 52 छं0 26; पृ0 57 छं0 42; पृ0 60 छं0 54; सुखसागर तरंग संपा-बालादत्त मिश्र, पृ0 75 छं0 218; पृ0 81 छं0 230; पृ0 83, छं0 240; तोष: सुधानिधि, पृ0 17 छं0 55; पृ0 102 छं0 300; 103 छं0 303; मैन्डलसो पृ0 51; के0 एम अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; रशीद-सोसाइटी एंड कल्चर इन मिडिवल इंडिया, पृ0 56

2- "टीका" भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 174छं0 439; आलम-आलमकेलि, पृ0 10 छं032; पृ0 31 छं0 73

3- आलम: आलमकेलि, पृ0 6 छं0 12; आलमग्रंथावली, पृ0 15 छं0 12

4- आप्टे: संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, जिल्द 2, पृ0 955, कामसूत्र, भाग 1, मधवाचार्य शर्मा पृ0 100,

5- देव: अष्टयाम, पृ0 17 छं0 9; (देव ने पत्रावली के लिए अंग रचना शब्द प्रयुक्त किया है): भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 136 छं0 137; पृ0 147 छं0 262; भिखारीदास ग्रंथावली:, द्वितीय खंड, पृ0 89 छं0 19,

तिल या श्यामल बिन्दु :- कपोल या ठुड्डी पर स्वभाविक तिल की अनुपस्थिति में काजल कस्तूरी आदि से कृत्रिम तिल बनाया जाता था ।[1] सौन्दर्य बढ़ाने हेतु संभवत: कृत्रिम तिल का प्रयोग किया जाता होगा ।

गोदना : गोदने के लिए प्रयुक्त अंग्रेजी "टैटूइंग" अपने मूल रूप में पालिनेशियाई शब्द है ।[2] गोदना चर्म में सुई चुभोकर रंग के सहारे बनायी जाने वाली आकृति को कहते हैं ।[3] गोदना के लिए महत्वपूर्ण बात यह है कि गोदना विश्व के अनेक भागों में प्रचलित रहा है ।[4]

गोदने की उत्पत्ति कहाँ से हुयी इसके बारे में विद्वानों में मतभेद है । किसी विद्वान ने गोदने की प्रथा को प्राचीन मिस्र से पूरब को, और अंत में जापान पालिनेशियाई द्वीपों तथा न्यूजीलैंड तक फैलने का उल्लेख किया है ।[5] इसके विपरीत अन्य विद्वान ने गोदने की प्रथा का आरम्भ द्वापर युग में हुआ ऐसा बताया है ।[6]

1- "तिल" देव ग्रंथावली: सुजानविनोद, पृ0 57 छं0 43; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 228 छं0 23; ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मीडिवल इंडिया, पृ0 56; आईन-ए अकबरी, अनुवादक, ब्लाखमैन, जिल्द 1 पृ0 103 द्वितीय संस्करण

2- द इन साइक्लोपीडिया अमेरिकाना, जिल्द 26 (1951) पृ0 283 (लल्लनराय के प्रबन्ध काव्य के फुटनोट से उद्धृत)

3- वही

4- डब ल्यू. बी. ग्रिग्सन, द माड़िया गोंड्स आव बस्तर, पृ0 74; फिजीवासी, द इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, जिल्द 16 (1926) पृ0 451, अरब, एवं अल्जीरियाई, लारेंस लैंगर द इम्पाटेन्स ऑफ वियरिंग क्लाथ्स. पृ0320

5- लारेंस लागनर, द इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका, जिल्द 16 (1926) पृ0 451

6- द इण्डियन एण्टीक्वैरी: सितम्बर 1904, जिल्द 33, में प्रकाशित "टैटूइंग इन सेण्ट्रल इंडिया शीर्षक लेख, पृ0 219

कुछ भी हो किन्तु गोदना भारत के विभिन्न प्रान्तो में किसी न किसी रूप में प्रचलित रहा ।

भारत के पश्चिमोत्तर सीमान्त पर पायी जाने वाली गिलजाई जाति में गोदना प्रचलित था ।[1] सीमान्त के कुछ मुसलमान भी गोदना गोदवाते थे ।[2]

दक्षिण भारत में गोदना टोड़ जाति में विशेष महत्व रखता है ।[3] मध्य प्रदेश में विभिन्न आकृतियों का गोदना प्रचलित था ।[4] तत्कालीन समाज में भी गोदना स्त्रियों में प्रचलित था ।[5]

रंजन -द्रव्य : शरीर पर स्नानु लेपन और विभिन्न सुगंधियों के प्रयोग से इच्छित वर्ण एवं गंध की प्राप्ति होती है तथा तिलक, पत्रावली-रचना, गोदना आदि से अपेक्षित वर्ण को उद्दीप्त किया जाता है। रंजन-द्रव्यों का कार्य इन दोनों से कुछ भिन्न है । प्रकृतिदत्त सौन्दर्य से मानव मन कभी तुष्ट नहीं होता । वह उसे और बढ़ा चढ़ाकर देखने का प्रयत्न करता है । अधर, हाथ,

---

1- द इण्डियन एण्टीक्वैरी मई (1904) जिल्द 33 में प्रकाशित फीमेल टैटूइंग अमांग्स्ट गिल्ज़ाई ,पृ0 147

2- द इण्डियन एण्टीक्वैरी, जून (1902) जिल्द 31, मे प्रकाशित नोट्स आन फीमेल टैटूइंग इन पंजाब, पृ0 297,

3- श्री राइवर्स, द टोड्स, पृ0 578

4- द इण्डियन एण्टीक्वेरी (जून 1902) जिल्द 31, पृ0 296-7

5- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 98 छं0 44; भिखारीदास ग्रंथावली द्वितीय खंड, पृ0248 छं0 21; देव ग्रंथावली: पृ0 215 छं0 2; ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मीडिवल इंडिया पृ0 56

पैर की स्वाभाविक लाली, नेत्रों की स्वभाविक श्यामता उसे पूर्ण संतोष नहीं दे पाती । विभिन्न रंजनों से वह उसे और बढ़ाता है। तत्कालीन समय में प्रचलित रंजन द्रव्य निम्न प्रकार के थे :

अंजन : भारत में अंजन का प्रचलन अत्यन्त प्राचीन काल से है ।[1] संस्कृत-साहित्य में अंजन को स्पष्ट रूप से मांगलिक माना गया है ।[2]

अंजन का प्रयोग आँखों की श्यामता को बढ़ाने के लिए किया जाता था:

अंजन दै करौ नैननि में सुषमा बढ़िस्याम सरोज प्रभातैं ।[3]

1- अथर्ववेद: 4/9/9,

2- कालिदास: कुमार संभव, 6 छं0 | 20

3- "अंजन" मतिराम: ललितललाम, पृ0 331 छं0 188; छं0 56; रसराज, पृ0 40 छं0 27; पृ067 छं0114; पृ0 91 छं0 189; पृ0 114 छं0 272; पृ0 267 छं0 290; पृ0 250 छं0 214; पृ0 217 छं0 77; पृ0 217 छं0 80; पृ0 228 छं0 125; देव ग्रंथावली: सुजान-विनोद, पृ0 52 छं0 27; देव-अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 19 छं0 58; आलम, आलमकेलि, पृ0 13 छं0 29; पृ0 15 छं0 33; आलम ग्रंथावली: पृ0 21 छं0 33; भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 23 छं0 150; पृ0 122छं0 154; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0101 छं0 32; पृ0 153, छं0 36; काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42; पृ0 88 छं0 14; तोष: सुधानिधि, पृ0 94 छं0 274; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 176 छं0 32; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 340

अंजन के लिए कई पर्यायवाची शब्द काजल, कज्जल, काजर आदि शब्द कवियों ने प्रयुक्त किये हैं ।[1]

दिठौना : दिठौना यद्यपि बिन्दी, तिल आदि के साथ आना चाहिए था लेकिन यह काजल से बनाया जाता था अतः इसे रंजन द्रव्यों के अन्तर्गत परिगणित किया जा सकता है । दिठौना काजल से बनाया जाने वाला संरक्षणात्मक प्रसाधन बताया गया है ।[2] वैसे तो दिठौना बच्चों को लगाया जाता है किन्तु अवलोकित काल में स्त्रियाँ भी दिठौने का प्रयोग करती थीं इस डर से कि उनके सौन्दर्य पर किसी की कुदृष्टि न पड़े । न केवल दूसरे की नजर से बचने के लिए दिठौना लगाती थीं बल्कि सौन्दर्य में वृद्धि के लिए दिठौना लगाया जाता था ।[3]

1- "काजल" मतिराम: रत्नावली, पृ0 113 छं0 53, सतसई काजर, छं0 769, भिखारीदास ग्रंथावली: काजल पृ0 131 छं0 48, तोष: सुधानिधि, काजर, पृ0 60 छं0 175, कज्जल, पृ0 102 छं0 300, आलमग्रंथावली: अक्षरमालिका, काजर, पृ0 134 छं0 222, मनूची भाग 2 स्टोरिया दमोगोर, पृ0 340, पी. एन. ओझा: ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 15, के0एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 151, ए रशीद, सोसाइटी एंड कल्चर इन मीडिवल, इंडिया, पृ0 56

2- "दिठौना" देव: सुजानविनोद, पृ0 96 छं. 15; सुखसागरतरंग, पृ0 86 छं0 251; भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 33 छं0 227; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 158 छं0 6

3- आलम-आलमकेलि, पृ0 6 छं0 12, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 33 छं0 227 ।

पान: भारत में पान खाने का चलन प्राचीन काल से है जिसे ताम्बूल पत्र, नागवल्ली, नागपर्णी आदि अनेक नामों से अभिहित किया गया है ।[1]

पान के साथ सुपारी का उल्लेख भी प्राचीन समय से मिलता है ।[2]

अवलोकित काल में स्त्रियाँ पान[3] का प्रयोग बहुत अधिक करती थीं । पान खाने से उनके ओष्ठ लाल रंग के हो जाते थे जो एक प्रकार से लिप्स्टिक (ओष्ठ रंगने का पदार्थ) का कार्य करते थे ।

1- कामसूत्र: अनु० पं० माधवाचार्य शर्मा, पृ० 128, कालिदास: रघुवंश, 6 /59, 60, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी: प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद, पृ० 23

2- कालिदास: रघुवंश पृ० 6/63

3- "पान" - सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ० 132 छं० 10; पृ० 166 छं02 पृ० 126 छं० 16; पृ० 162 छं० 9; पृ० 107 छं011; पृ० 116 छं० 21; ब्रजेंदविनोद, पृ० 527 छं० 66; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड पृ0229 छं० 46; देव ग्रंथावली: भाव विलास, पृ० 126 छं० 2; सुखसागर तरंग, पृ० 92 छं० 268; देव: अष्टयाम, पृ07छं07; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग1, पृ० 63; मासीर-ए-आलमगीरी, पृ० 262, मैन्डल्सो, पृ० 33, ट्रेवेर्नियर, भाग1, पृ० 294, पी०एन० ओझा, ग्लिम्पसेस, ऑफ, सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ० 15; के० एम० अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन ऑफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान पृ० 181

पान की गिलौरी के लिए बिरी[1] तथा बीरी[2] दो पर्यायवाची शब्द का प्रयोग कवियों ने किया है ।

<u>मेंहदी:</u> मेंहदी जिसे हिना[3] भी कहा गया एक कँटीला पौधा होता है, जिसकी पत्तियाँ पीसकर हथेली, पैर नखों, आदिपर लगायी जाती है, जिससे गाढा लाल रंग उत्तर आताहै,[4] विदेशी पौधा बताया गया जो मुसलमानो के साथ भारत आया और धीरे -धीरे श्रृंगार का प्रमुख उपकरण बन गया ।[5]

मेंहदी नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ नख पाणि तथा चरण में लगाने के लिए करती थीं कवियों ने इसका स्पष्ट संकेत दिया है :

1- "बिरी" भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ0 51 छं0 272; पृ0122 छं0 154; पृ0 146 छं0 258; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ0 145 छं0 25; मतिराम: रसराज , पृ0 114 छं0 272; पृ0 285 छं0 376; देव ग्रंथावली: रागरत्नाकर, पृ0 15 छं0 60; तोष: सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300; पृ0 126 छं0 363

2- "बीरी" -सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 111 छं0 24; पृ0107, छं0 11; पृ0 116 छं0 21; पृ0 84 छं0 5; पृ0 121छं0 47,

3- मुहम्मदयासीन:ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65; के0एम0 अशरफ, लाइफ एंड, कंडीशनआफ पीपुल्सऑफ हिन्दुस्तान पृ0 181

4- मनूची, स्टोरिया दमोगोर भाग 2 पृ0 340

5- डॉ0 नगेन्द्र: रीतिकाव्य की भूमिका तथा देव और उनकी कविता, पृ0 102, डॉ0 बच्चन सिंह, रीतिकवियों की प्रेम व्यंजना, पृ0 313

मेंहदी रची पग अरू पानि ।

मिहदी नखन रचाई । [1]

मेंहदी को कवियों ने मिंहदी भी कहा है :

.... पायन तेरे रचो मिंहदी । [2]

1- "मेंहदी"- मतिराम: रसराज पृ0 144 छं0 272; सतसई पृ0 2 छं0 102; पृ0 265 छं0 315; पृ0 460, छं0 676; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 502 छं0 42, सुजान विलास पृ0 642 छं0 95 शशिनाथविनोद, पृ0 505 छं0 33, माधव विनोद, पृ0 329, छं077 मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 340, जनरल आफ वेंकटेश्वर ओरयटल इंस्टीट्यूट, भाग 7, 1946, पृ0 28 के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181, मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65; देव ग्रंथावली: सुजान विनोद पृ0 43 छं0 49, सुखसागरतरंग पृ0 79 छं0 228 पृ0 79, छं0 229, पृ0 104 छं0 301, पृ0 85 छं0 230, घनआनंद, घनआनंदकवित्त, पृ0 217 छं0 49 (जगदीशगुप्त रीतिकाव्य संग्रह) घन आनंद ग्रंथावली, पृ0 28 छं0 87, घनआनंद ग्रंथावली संपा, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र 69 छं0 213

2- "मिंहदी"- घनआनंद ग्रंथावली: पृ0 217 छं0 49, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 642 छं0 95, ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 42, माधवविनोद, पृ0 329 छं0 77

मेंहदी के द्वारा हथेली पर बुंदकियां बनायी जाती थीं :

यो ललित करनि मिहिंदी बनाय, राखी अनिदं बुदनि रचाय ।[1]

मेंहदी लगाना सामंती समाज-व्यवस्था और पर्दा-प्रथा का परिचायक है, जिसमें स्त्रियों को हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहना पड़ता था। इस्लामी देशों में इसके लिए अत्यन्त वातानुकूल वातावरण था । अवलोकित काल की समाज-व्यवस्था भी इसके लिए अनुकूल पड़ी ।[2]

<u>महावर</u> : महावर लाल रंग का द्रव्य- पदार्थ था तथा महावर स्त्रियों का अत्यन्त मनपसंद प्रसाधन था जिसे स्त्रियाँ अपने पैरों में लगाती थीं :

अति कोमल चरन महावर मंड़ित नूपुर लसत नवीनैं ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0642छं0 95; ब्रजेंदविनोद, पृ0 502 छं0 42; शशिनाथविनोद, प्रथमोल्लास, पृ0 505 छं0 33; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ0 85 छं0 230; आइन-ए-अकबरी, अनुवादक जैरेट जिल्द 3 पृ0 312, (प्रसाधन के सोलह वस्तुओं या विधियों में बुंदकिया बनाने की गणना आइन-ए-अकबरी में की गयी है ।)

2- लल्लनराय, रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखत, वस्त्राभरणों का अध्ययन, पृ0 236

3- "महावर" सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद पृ0329 छं0 79; पृ0 379छं0107; श्रृंगार विलास, पृ0 295 छं0 5; शशिनाथविनोद प्रथमोल्लास, पृ0 505छं034; रसपीयूषनिधि: पृ0 208 छं0 203; 203 छं0 163; मतिराम: रसराज, व्याख्याकार रामजी, पृ0 50 छं060; पृ0 243 छं0 187; पृ0 217छं0 77; मतिराम रत्नावली, पृ0 77 छं0 130; पृ0 75 छं0 127; घन आनंद ग्रंथावली, पृ0 209; देव ग्रंथावली: रसविलास, अष्टमभाग, पृ0 238 छं0 35; पृ0 236, 17; शब्दरसायन पृ0 22; सुजानविनोद, पृ0 20 छं06; पृ0 43, छं0 49; पृ0 59, छं051; सुखसागर तरंगपृ0104 छं0301; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 93छं0106; भिखारीदास ग्रंथावली 29छं0 203; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग2पृ0 340

कवियों ने महावर को जावक[1] तथा महाउर[2] भी कहा है। महावर को आलता भी कहा गया है।[3]

कवियों ने जावक या महावर का कथन प्रायः श्रृंगार की कोमल भाव-व्यंजना को लेकर किया है अतः हमें कई ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जिसमें नायक द्वारा नायिका के पैरों में महावर लगाया गया है :

1- "जावक"- देव ग्रंथावली:सुखसागर तरंग पृ0 79 छं0 94; चतुर्थ भाव-विलास, पृ0 123 छं0 4; पृ0 110 छं0 5; अष्टयाम, पृ0 18 छं0 10; भिखारीदास ग्रंथावली:काव्यनिर्णय, पृ0 130 छं0 42 ; श्रृंगारनिर्णय, पृ0 150; रस सारांश, पृ0 19, छं0 122; पृ0 23 छं0 149; पृ0 23 छं0 150; भिखारीदास ग्रंथावली: द्वितीय खंड , पृ0 153 छं0 4; शशिनाथ विनोद, पृ0 505 छं0 34; मतिराम, ललितललाम, पृ0 331 छं0 188; छं0 56 ; सतसई, छं0 98; पृ0 419 छं0 614; पृ0 176 छं0 361 ; पृ0 411 छं0 511; रत्नावली, पृ0 92 छं0 160; पृ0 87 छं0 151 ; रसराज, पृ0 40 छं0 27; पृ0 67 छं0 114; पृ0 90 छं0 189; पृ0 267 छं0 290; पृ0 223 छं0 105; छं0 105 पृ0 228; छं0 125 ; तोष सुधानिधि, पृ0 102 छं0 300

2- "महाउर" मतिराम: रत्नावली, पृ0 63 छं0 103; देव: चतुर्थ भावविलास, पृ0 116 छं0 2; भिखारीदास: रससारांश, पृ0 29 छं0 203; पृ0 53; घनानन्द ग्रंथावली: सुजानहित, पृ0 14 छं0 14,

3- मनूची: स्टोरिया द मोगोर , भाग 2, पृ0 340

आपने हाथ सों देत महावर आप ही बार सँवारत नोके ।

आपुन ही पहिरावत आनिके हार सँवारिके मौरसिरी के ।[1]

प्रस्तुत छंद से समाज में व्याप्त विलासिता स्वयं स्पष्ट है प्रसाधन का प्रयोग तो मात्र माध्यम का कार्य कर रहा है।

सिन्दूर : सिन्दूर सुहागिनस्त्रियों के लिए मांगलिक एवं सौभाग्य चिन्ह माना जाता है जिसे स्त्रियाँ मांग में लगाती हैं :

पुनि भरी मांग मुक्तनि सों सुंदरि भरि सिंदूर ललाई ।[2]

सिन्दूर का प्रयोग मुस्लिम स्त्रियाँ भी करती थीं जिसे कवि ने बड़े चातुर्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया है । कवि ने मुस्लिम स्त्रियों के मस्तक पर सिन्दूर का अभाव दिखाकर उनकी वैधव्यावस्था व्यंजित की है :

1- मतिराम ग्रंथावली: रसराज पृ0 241 छं0 179, पृ0 223 छं0 105; सतसई, पृ0 328 छं0 352; रत्नावली, पृ0 75 छं0 127; पृ0 77 छं0 130; पृ0 63 छं0 103; देव ग्रंथावली: चतुर्थभावविलास, पृ0 126 छं02; सोमनाथ-ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, पृ0 295 छं0 5; रसपीयूषनिधि, पृ0 84 छं05, पृ0 208 छं0 203

2- सिन्दूर सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद, पृ0 504, छं0 31; पृ0 729 छं018, देव: शब्दरसायन, पृ0 127 छं0 9; सुखसागरतरंग, पृ0 83 छं0 242; देव ग्रंथावली: पृ0 76 छं0 81; देवमायाप्रपंच, पृ0 228छं0 15; भिखारीदास, श्रृंगारनिर्णय, पृ0 102 छं0 57; तोष: सुधानिधि, पृ0 123 छं0 362; मनूची, स्टोरिया दमोगोर, भाग 2, पृ0 340

बिनु सिन्दूर के बुंद मुख इंदु जमनीन के ।[1]

रोरी : रोरी नामक प्रसाधन का प्रयोग स्त्रियाँ माथे पर टीका लगाने के लिए करती थीं ।[2]

केश विन्यास : बाल सीधे न तो वस्त्रों के अन्तर्गत आएंगे न ही आभूषणों के । फिर भी अन्यान्य प्रसाधन-विधियों तथा उपकरणों की चर्चा करते हुए उनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती । केश-विन्यास नारीसौन्दर्य के अनिवार्य उपकरणों में परिगणित किया जाता है। केश-प्रसाधन में सर्वप्रथम बालों को अच्छी प्रकार से साफ करके विभिन्न सुगंधियों से बासा जाता है। यह प्रक्रिया प्राचीन समय से ही विद्यमान थी।[3] धूपने के लिए बालों को[4] पहले अच्छी तरह साफ करके सुखा लिया जाता है फिर अगुरू आदि सुगन्धित वस्तुओं के धुएं से बालों को देर तक धूपा जाता है :

बारन धूपि अगारन धूपि कै, धूम अंध्यारी पसारी महा है ।।[5]

1- भूषण ग्रंथावली : शिवराजभूषण, पृ0 96 छं0 176; (प्रस्तुत उद्धरण में कवि ने यह बताया कि क्षत्रपति शिवाजी ने उनके पतियों को मारडाला है परिणामतः उन्होंने सिन्दूर मिटा दिया जिससे उनका मुख बिना सिन्दूर के चन्द्रमा की भांति दिख रहा है । वही ।

2- तोष : सुधानिधि : पृ0 103 छं0 300; भिखारीदास ग्रंथावली : द्वितीय खण्ड , पृ0 40 छं0 13

3- कामसूत्र : वात्सायन, टी0 देवदत्त शास्त्री, पृ0 106, कालिदास : ऋतुसंहार, 1-4, 2-21

4- मतिराम : ललितललाम, पृ0 15 छं0 35,

चूँकि घूपने की प्रक्रिया लम्बी तथा कठिन थी अत: तेल फुलेल, चोवा आदि सुगन्धित वस्तुओं से बालों को सुगन्धित किया जाने लगा ।[1]

मँाग और पाटी : बालों को स्वच्छ और सुगंधित करने के बाद कंघी द्वारा उन्हें बीच से दो भागों में विभाजित किया जाता है जिससे मध्यभाग से बाल हट जाते हैं । मध्यभाग, जहाँ से बाल हट जाते हैं, उसे मँाग और अगल बगल बैठाये गये बालों को पाटी (पट्टिका) कहते हैं :

पाटी दुहूँ बिच मँाग ....।[2]

कंघी तथा दर्पण[3] का प्रयोग भी किया जाता था ।

1- देवग्रंथावली: चोवा सो चुपरि केस -सुखसागर तरंग, पृ086छं0249; गुलाब फुलेल चोवा (बालों के लिए) पृ0 86छं0 248; फुलेल; पृ0 89छं 50; सुजान विनोद, गुहि बार सुगंधि सबै चसि कै, पृ0 35छं0 22; त्रिलोछति-सुकेस, पृ0 43छं0 49; अष्टयाम, चोवा से चुपरि केस, पृ0 16छं06; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 341, भाग3, पृ0 40

"मँाग और पाटी"
2- भिखारीदास ग्रंथावली: श्रृंगारनिर्णय पृ0 102छं0 57; 122छं0154; पाटी सोमनाथ ग्रंथावली; माधवविनोद, पृ0 328छं0 69; 'मांग' देवसुखसागरतरंग, 83, छं0 241,' पृ0 83छं0 242; पृ0 84छं0 243; देवग्रंथावली, पृ076छं081; तोषसुधानिधि; पृ0 122छं0 362; बोधा; वि. वा., 99 छं0 23; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 339-40

"कंघी तथा दर्पण"
3- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 89छं0 250; भिखारीदास ग्रंथावली, रससारांश, पृ0 17 छं0104; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 101 छं0 65; पृ0 189 छं0 52; थैवनॉट, चैप्टर, X X, पृ0 37-38, हैमिल्टन; 1 पृ0 119,

वेणी : सौन्दर्य को निखारने हेतु स्त्रियाँ बालों को विभिन्न प्रकार से संवारती थीं जिसमें वेणी (या चोटी गुँहना) बनाना स्त्रियों को विशेष प्रिय था कवियों ने गूंथी चोटी या वेणी का उल्लेख किया है :

बडवारे कारे सटकारे केसना गूँदो बेनी ।[1]

स्त्रियां अपने बालों को बिखरने से बचाने के लिए बालों को रेशमी धागे (फीता) से बांध रहती थीं :

बारन ज्यौ बाँधि राखे तामरस ताग सों ।[2]

1- "वेणी" बोधा :विरह वांगीश, पृ० 99 छं० 23, देव ग्रंथावली: सुजान-विनोद, पृ० 78 छं० 24; 35छं० 22; सुखसागर तरंग, पृ० 79 छं० 230; पृ० 83 छं० 441 ; पृ० 84 छं० 43; पृ० 99 छं० 287 ; देव ग्रंथावली: तृतीय भाग, पृ०110 छं० 92; देव: शब्दरसायन, पृ० 124; भाव विलास, पृ० 111; अष्टयाम , 18 छं० 10; मतिराम: मतिराम रत्नावली, पृ० 77 छं० 130; पृ० 63 छं० 103; रसराज पृ० 213 छं० 57; पृ० 217 छं० 77; सतसई, पृ० 388 छं० 245 ; पृ० 413, छं० 545; भिखारीदास ग्रंथावली; प्रथम खंड, पृ० 16छं० 92 ; पृ० 17 छं० 104; पृ० 131, छं० 194 ; पृ० 147 छं० 262; भिखारीदास: रससारांश, पृ० 29 छं० 196; पृ० 103 छं० 59; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ० 228, छं० 24; पृ० 247 छं० 67; तोष: सुधानिधि, पृ० 31 छं० 93; पृ० 98 छं० 386 ; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 40

2- मतिराम: ललितललाम, छं० 100; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ० 40

अलक लट : वेणी के अतिरिक्त अलक[1], लट[2] तथा घुंघराले बाल[3] रखने का भी वर्णन कवियों ने किया है जो संभवत: सौन्दर्य वृद्धि के लिए रखे जाते थे ।

छुटे हुए केश या खुले केश : कवियों ने छूटे बालों या खुले बालों का भी चित्रण किया है :

खुले केस चारो दिशा स्यामता सो ।
दियो देह दोपै तमी मे छटा सो ।[4]

1- "अलक"-भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ0 91 छं0 12; पृ0 143 छं0245; पृ0 145छं0 255; भिखारीदास ग्रंथावली;द्वितीय खंड, पृ0 87 छं08;पृ0118छं0 120; देव: रागरत्नाकरपृ03छं010;सुजानविनोद, पृ0 52छं0 26; भाव-विलास, पृ0 24; आलम-आलमकेलि, संग्रह, पृ0 7छं0 16

2- "लट" सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, प0 230 छं0 37; देवग्रंथावली: प्रेम चन्द्रिका, पृ0 35छं0 23; शब्दरसायन, पृ0 22; तोष: सुधानिधि पृ0 97छं0 284 ; पृ0 123छं0 361; पृ0126 छं0 369

3- "घुंघरारे केश"- देव ग्रंथावली: सुखसागरतरंग, पृ0 103 छं0 299; मतिराम सतसई छं0695

4- "खुले केश" बोधा: ग्रंथावली: विरह-वागीश, पृ0 117छं035; मतिराम: रसराज, पृ0 56छं080; तोष: सुधानिधि, पृ093छं0 273;पृ0 103छं0302;पृ0103छं0303; देव; भावविलास;पृ043छं0 69; राग-रत्नाकर, पृ0 8छं028; आलम, आलमकेलि, पृ0 123छं0300; पृ0 124छं0 305; पृ0 37छं087; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खंड, पृ0 135छं0 211, पृ0 119 छं0138 ; भारत कला, भवन से प्राप्त चित्र राधा-कृष्ण गुलेर, लगभग, 1760 ई0 इस चित्र में राधा के बाल खुले दिखाए गये हैं ।

जूड़ा : केश-विन्यास के अन्तर्गत जूड़ा बनाने का भी उल्लेख मिलता है :

परी हठीली हरि नजरि जूरो बांधत जाइ ।
भुज अभरन में करन में चिकुरन में लपटाइ ।।[1]

भुजाओं को उलटा पीछे ले जाकर बालों को समेटना फिर उसे घुमाकर लपेटना आदि जूड़ा बांधने में सहायक होने वाली स्वभाविक क्रियाएं बतायी गयी हैं ।[2] जूड़ा प्राचीन काल से ही भिन्न-भिन्न प्रकार से बनाया जाता रहा है ।[3]

चूँकि स्त्रियाँ अपने बालों की देखभाल अच्छी तरह करती थीं तथा विभिन्न प्रसाधनों के माध्यम से उन्हें स्वस्थ्य एवं सुन्दर बनाती थीं फलत: अधिकांश स्त्रियों के बाल काले चिकने और लम्बे होते थे :

1- "जूड़ा " - भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, रससारांश, पृ0 29 छं0 196; तोष:सुधानिधि, पृ0 89 छं0 259 ; मनूची: स्टोरिया दमोगोर, भाग 3, पृ0 40; भारतकला-भवन से प्राप्त चित्र स्नान द्वय, मुगल शैली, 1750 ई0, स्त्रियों ने भिन्न -भिन्न केश विन्यास बनाये हैं जिसमें एक स्त्री ने जूड़ा बनाया है ।

2- भारत कला भवन से प्राप्त चित्र, स्नानोंतरिता, गुलेर - लगभग 1780 ई0 का चित्र

3- ऋग्वेद 7 छं0 33 / 1 ; 3 छं0 10, 114; रामायण, 2 /93/13; वासुदेवशरण, अग्रवाल , पृ0 96

सटकारे बारनि के भार अंक लचकति ।[1]

<u>पुरूषों के प्रसाधन</u> : स्त्रियों की भाँति पुरूष भी प्रसाधन सामग्री का प्रयोग शरीर को स्वस्थ्य एवं सुन्दर बनाने के लिए करते थे ।

यद्यपि स्त्रियों की अपेक्षा पुरूष कम ~~प्रसाधन~~ सामग्री का प्रयोग करते थे किन्तु, कुछ प्रसाधनों का प्रयोग स्त्री पुरूष दोनों समान रूप से करते थे।

। उच्चवर्ग के पुरूष कुंकुम, चंदन, अगर आदि सुगंधित पदार्थों का प्रयोग अधिक करते थे :

औ नृप दिव्य सुगंध लगाए ।

कुंकुम चंदन अगर मिलाए ।।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास, पृ0 602 छं0 76; रसपीयूषनिधि, काले चिकने बाल पृ0 230 छं0 37; बोधा: विरहवागीश, काले चिकनेकेश पृ0 99 छं0 23; देव-शब्दरसायन, बड़े बड़े बार पृ0 96; अष्टयाम, बार बड़े पृ0 16 छं 4; राग रत्नाकर, चीकने केस, पृ0 3 छं0 10; आलम-आलमकेलि, कारे-कारे केस, पृ0 24 छं0 55; बडे बार, पृ0 124 छं0. 305; आलम: ग्रंथावली पृ0 28 छं0 55 तोष: सुधानिधि, पृ0 93 छं0 273; भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 103 छं0 59; मैन्डलो, पृ0 50,

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 744, छं0 31; पृ0 779 छं0 14; पृ0 622 छं0 37; सुजानविलास पृ0 764 छं0 18; सोमनाथ ग्रंथावली : द्वितीय खंड, पृ0 232 छं0 12; बोधा: विरह वागीश पृ0 37-38; मतिराम: ललितललाम, पृ0 58 छं0 89; तोष: सुधानिधि, पृ0 100, 256; आइन-ए-अकबरी भाग 2, पृ0 126 के0एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 157

इसके अलावा अरगजा[1] मदकुरंग[2] सुगंधित इत्र[3] केसर[4] आदि का भी प्रयोग भी पुरुष प्रसाधन के रूप में करते थे।

1- 'अरगजा': देव ग्रंथावली: अरगजा, पृ0 120 छं0 187; सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद विनोद, पृ0 670 छं0 30; पृ0 658 छं0 12; आईन, भाग 1, पृ0 81

2- "कस्तूरी या मदकुरंग" - आलम: आलमकेलि, पृ0 38 छं0 90; पृ0 39, छं0 91; देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग, पृ0 83 छं0 240; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 764 छं0 18; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181

3- जे राजनि को उचित हैं अंबर अरू भूषन।।
मुक्तमाल अरू अरगजा अरू अतर लगाये अदूषन ।।

- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 695 छं0 36; श्रृंगार विलास, 311; 69; पृ0 670 छं0 30; रसपीयूषनिधि, पृ0 104 छं0 75; देव: भवानी विलास, पृ0 103 छं0 12; भाव-विलास, सं0 लक्ष्मीनिधि चतुर्वेदी पृ0 24 छं0 48; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एंड कंडीशन आफ पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 181; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 17; मआसीर, ए-आलमगीरी, सरकार, पृ0 100; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक, इंडिया, पृ0 42

4- बोधा: विरहवागीश, पृ0 37-38; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 764 छं0 18; के0 एम0 अशरफ, पृ0 181

पुरूष माथे पर तिलक (टीका) लगाते थे :

भाल तिलक शोभावलि भाल में, केसर गंध सुहाई ।[1]

प्रसाधन के अन्य उपकरणों में आँखों को काला करने के लिए एक काले रंग का पदार्थ जिसे अंजन कहा गया , का प्रयोग करते थे :

देव दुख भंजनि लला के दृगा कंजनि अंजनि लीक
पीक पलक लकीर की ।"[2]

पान(तमोल) का प्रयोग भी पुरुष करते थे जिससे उनके अधर में अरूणिमा आ जाती थी जो एक प्रकार से ओष्ठ में लगाये जाने वाले प्रसाधन का कार्य करती थी :

मुख तमोल अधरन अरूनाई ....।[3]

1- बोधा: विरह-वागीश, पृ० 37-38; सोमनाथ ग्रंथावली: द्वितीय खंड, पृ० 132 छं० 12; सुजानविलास पृ० 790 छं० 19; श्रृंगारविलास, षष्ठोल्लास पृ० 297 छं 12; रसपीयूषनिधि, ग्यारहवाँ तरंग, पृ० 86 छं० 13; आलम आलमकेलि, पृ० 146 छं० 278 ; आलम ग्रंथावली : पृ० 18 छं० 22; मैन्डल्सो : पृ० 51; अर्ली ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ० 96

2- अंजन देव ग्रंथावली : सुखसागर तरंग पृ० 68 छं० 126; सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूष-निधि ग्यारहवाँ तरंग : पृ० 87 छं० 16; मतिराम ग्रंथावली : पृ० 64 छं० 104; (अंजन का प्रयोग पुरूष की अपेक्षा बच्चों के लिए अधिक होता है) जनरल आफ वेंकटेश्वर ओरियंटल इन्स्टीट्यूट, भाग 7, पृ० 1946, पृ० 25, 'आइन-ए-अकबरी भाग 1, पृ० 75

3- 'पान' बोधा: विरहवागीश, पृ० 68 छं० 16; सोमनाथ ग्रंथावली : रसपीयूषनिधि, चतुर्दश तरंग : पृ० 126 छं० 16; विंसतितम तरंग : पृ० 162 छं० 9; रसपीयूषनिधि, पृ० 34 छं० 16; मतिराम : रसराज, पृ० 67 छं० 114; भिखारीदास ग्रंथावली : द्वितीय खंड, पृ० 229 छं० 46; कैरी, पृ० 205-6; आइन-ए-अकबरी, पृ० 72

कंघी तथा दर्पण का प्रयोग भी पुरुष समान रूप से करते थे ।[1]

अवलोकित काल के पुरूष षोड्श श्रृंगार के अन्तर्गत आने वाले प्रथम कृत्य अर्थात् स्नान और उसके पूर्व का कृत्य उबटन की मालिश भी भली प्रकार से करते थे। स्वच्छता के इन्हीं रूपों को ध्यान में रखकर तत्कालीन विदेशी यात्री ने कहा कि सुगंधित जल से स्नान करने तथा उबटन आदि की मालिस के कारण {अर्थात् शारीरिक स्वच्छता पर ध्यान देने के कारण} ये मन मस्तिष्क से सदैव प्रसन्न रहते हैं ।[2]

उच्चवर्गीय पुरूषों के विपरीत निम्नवर्गीय पुरूष सुगंधित प्रसाधनो के नाम पर नारियल का तेल प्रयोग करते थे ।[3]

1- डेलावैली, पृ0 376; हेमिल्टन, भाग 1, पृ0 119

2- मर्दन कर उबटाइ तन आयौ न्हान नरेस
कंचन चौकी पै लस्यो मानौ उदैदिनसे ।
-सोमनाथ ग्रंथावली:सुजानविलास, पृ0 764 छं0 11; रसपीयूषनिधि, पृ0 94 छं040; ब्रजेंदविनोद, एकषष्टितमोध्याय: पृ0587 छं0 10; मतिराम: ललितललाम, पृ0 11 छं0 34; देव ग्रंथावली: शब्दरसायन, पृ0 45; ग्रोस 1, पृपृ0 113-14,

3- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 430

छठाँ अध्याय

खण्ड (क) खान-पान व आवास

खण्ड (ख) मनोरंजन के साधन

(ख) खान पान

आहार पेट भरने और उसके द्वारा जीवनी शक्ति को बनाए रखने के लिए मनुष्य और अन्य जीवधारियों के लिए सामान्य रूप से आवश्यक अवश्य है, किन्तु अपनी अन्य आवश्यकताओं की भाँति मनुष्य ने इसमें संस्करण, परिष्करण के प्रयास किये हैं। इस प्रकार किसी काल की सभ्यता एवं रहन-सहन के स्तर पर तत्कालीन खानपान से भी यथेष्ठ प्रकाश पड़ता है।

भारतीय आदर्श एवं परम्परा के अनुसार शाकाहारी भोजन सात्विक एवं उत्तम भोजन माना गया है। अवलोकित काल में भी लगभग उसी प्रकार के भोजन प्रचलित थे :

रोटी[1] दाल[2] तथा पके हुए चावल का उल्लेख मिलता है :
पक्के तंदुल ढेर कराए. ....।[3]

1- "रोटी" -सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 63। छं0 87; आईन; 1, पृ0 61। रोटी को चपाती कहा गया है, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री-, पृ0 37

2- "दाल" वही, छं0 84; शशिनाथ विनोद, पृ0524 छं0 3; मैन्डल्सो, पृ0 68; मांसरेट; कमेन्ट्री; पृ0 8; कैथी चैप्टर 1, 160,

3- "चावल" सोमनाथ ग्रंथावली" पृ0 63। छं0 85; घनानंद कवित्त, पृ0 26; देव; देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14; (देव के छंद में चावल को भात भी कहा गया है) मनूची; स्टोरिया दमोगोर, भाग3, पृ041; डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 183 तथा 272; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37; पी0एन0 ओझा; ग्लिम्पेसस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 2, ट्रेवेनियर, ट्रेवेल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ041।

कूरी का भी उल्लेख मिलता है।
पूरी में मोइन {अर्थात् घी या तेल डालकर मुलायम करना} डालकर बनाया जाता था -

> मीठी और सलोनी पूरी ।।
> धरीं भेट मोइनि की रूरीं ।।[1]

उच्चवर्गीय लोगों में घी[1] तथा दूध का प्रयोग बहुत किया जाता था :

> कनक कटोरा क्षीर पियायो । ....।[3]

1- सोमनाथ ब्रजेंदविनोद , पृ0 510 छं0 107; सुजानविलास, पृ0 631 छं0 86; चोपड़ा; 35

2- "घी" सोमनाथ ग्रंथावली; सुजानविलास, पृ0 631 छं088; घनानंद कवित्त, पृ0 26; आईना पृ0 61, बोधा पृ0 2; पृ0 435; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37; बहारिस्तान-ग़ै, पृ0 201; पी0 एन0 ओझा; ग्लिम्पसेज आॅफ सोशल लाइफ़ इन मुगल इंडिया, पृ0 2

3- "दूध"- बोधा, विरह वागीश, पृ0 140 छं0 15; देव; देवचरित्र पृ0 5 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली, सु0 विलास, पृ0 631 छं0 87; {मैदा से बनी रोटी में मैदे को दूध से साने ओन का वर्णन है} देव देवचरित्र पृ0 25 छं0 131; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 41; ओविंगटन, पृ0 303; मोंसरेट, कमेन्ट्री, पृ0 8; मैन्डेल्सो पृ0 68; मुहम्मदयासीन; ए सोशल -, पृ0 37 , ।

भोजन में मक्खन[1] का भी प्रयोग किया जाता था । दूध से बनी वस्तुओं में दही[2] तथा दही बड़े[3] का उल्लेख मिलता है :

अनगन वटक दही में बोरै, रासि लैं अधिक गोल अरू गोरे ।[3]

1- "मक्खन" , देवचरित पृ0 5 छं0 14; पृ0 25, 131; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 221 छं0 317 ; 156/1; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 272 ; मनूची, भाग3, स्टोरिया द मोगोर, पृ0 42; मैन्डल्सो, पृ0 68, ओविंगटन , पृ0 303; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37

2- "दही" , मतिराम ललितललाम पृ0 352 छं0 316; मतिराम रत्नावली, पृ0 43 छं0 63; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 50 छं0 53; देव' देवचरित, पृ05 छं0 14; पृ0 25 छं0 131; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 32छं0 220; आलम ग्रंथावली; विद्या निवास मिश्र, पृ0 12 छं0 4; मनूची भाग3, स्टोरिया द मोगोर , पृ042; ओविंगटन पृ0 303; मैन्डल्सो, पृ0 68; मुहम्मदयासीन; ए सोशल-, पृ0 37,

3- "दही-बड़ा"- सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ0 631; छं0 85; देव; देवचरित पृ 5 छं0 14; (बड़ा उडद या मूँग की दाल की गोलाकार टिकिया है जो तेल में छानी जाती है)। सोमनाथ ग्रंथावली; सु. वि. पृ0 631. छं087; देव चरित पृ0 5छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली, सु. वि. पृ0 631, छं085; निजार पृ0 143; कैरी, पृ0 160 ; ; पीएनओझा ग्लिपसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया पृ0 2

भोजन में विभिन्न प्रकार की सब्जियों[1] का प्रयोग किया जाता था। सब्जियों में कटहल[2], आलू[3] बैगन आदि का उल्लेख मिलता है :

घनी कचौरी बैगन तत्ते, मौहन भोग गुलगुला रत्ते।[4] श्रीफल[5] (कद्दू) का उल्लेख मिलता है।

भोजन में कचौरी[6] भी खायी जाती थी।

1- डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 188-189; मुहम्मद-यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 38

2- "कटहल"- सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 27; माधव विनोद, पृ0 337 छं0 31; सुजानविलास, पृ0 691, छं0 14; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 272, मनूची भाग 3, पृ0 180, 182; बर्नियर पृ0 438।

3- "आलू" सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ0 691, छं0 14; दीर्घनगर वर्णन प0 821 छं0 27।

4- "बैगन" वही, पृ0 631 छं0 80; इरफान हबीब: द सिस्टम ऑफ मुगल इंडिया, पृ0 91; आईन, 1, पृ0 391

5- "श्रीफल" सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 21; माधव-विनोद, पृ0 337 छं0 33, बोधा: विरह वागीश पृ0 5; आलम: अधर मालिका, पृ0 140 छं0 321।

6- बोधा: विरह वागीश, पृ0 2; सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 691, छं0 14;

उच्च वर्ग के लोग विभिन्न प्रकार के स्वादिष्ट फलों का भी सेवन करते
अनेक और फल मीठे खट्टे। षट्रस व्यंजन सकल भाँति के बने ख
फलों में सेब [2] फालसा [3] तथा अनार का उल्लेख मिलता
है :

नसिनाथ सुजान सभौ पहिचानि अनार घने रचि थार धरै ।। [4]

अन्य फलों में नासपाती[5] का उल्लेख मिलता है।

1- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद पृ0 524 छं04; सुजान विलास, 691/14; बोधा,161; मेमरात-ए-सिकन्दरी, अनु0 फरीदी, पृ0 68; आइन-ए-अकबरी, ब्लाखमैन, 1, पृ0 59; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37-38 ।

2- सोमनाथ ग्रंथावली; रसपीयूषनिधि, पृ0 84 छं0 4; सुजानविलास , पृ0 631 छं0 88; दीर्घ नगर वर्णन, पृ0 821 छ0 26; बर्नियर पृ0 18-19; अंसारी पृ0 34

3- "फालसा" -सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; दीर्घनगर, वर्णन, पृ0 821 छं0 28 ।

4- वही, रसपीयूषनिधि, पृ0 84 छं0 4; माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 29; अंसारी पृ0 34 ।

5- "नासपाती"- भूषण ग्रंथावली; शिवाबावनी, पृ0 14 छं0 9; अंसारी पृ0 34 बर्नियर की भारत यात्रा, पृ0 43 जाड़े की ऋतु में रुई की तह में लिपटे हुए नाशपाती के बिकने का उल्लेख किया है।

अंजीर [1] नारियल का भी वर्णन मिलता है :

नारियर अँचिलो दकुल खूर **बिलंद हैं** ।[2]

नींबू[3] इमली [4] खजूर का भी प्रयोग किया जाता था ।

1- "अंजीर" सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 पृ0 28; माधवविनोद, पृ0 337, छं0 31

2- "नारियल" सोमनाथ ग्रंथावली, माधव विनोद, पृ0 337 छं0 31; पी0 एन0ओझा; ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 3, आईन; I, ब्लाकमैन, पृ0 65-66

3- "नींबू" - वही,

4- "इमली" वही

5- खजूर

कुछ अन्य फलों में बडहर[1], करौंदा[2] आम[3] गूलर[4] चकोतरा[5] आदि का उल्लेख मिलता है ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; सुजानविलास पृ0 691 छं0 14

2- "करौंदा" : बोधा ग्रंथावली: पृ0 5; सोमनाथ ग्रंथावली , दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 29; माधवविनोद, पृ0 337 छं0 33

3- "आम" -सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 31; बोधा-ग्रंथावली: पृ0 5;

रुक्याते आलमगीरी: अब्दुर्रहमान, पृ0 4; अंसारी पृ0 35, आम भारत में सामान्य रूप से प्रचलित और बहुत पसंद किया जाता था। मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 177; पी0 चटर्जी, पृ0 85; ट्रेवर्नियर , ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 225-278

4- 'गूलर' वही, पृ0 337, छं0 33

5- 'चकोतरा' वही,

उच्च वर्ग विभिन्न प्रकार की मिठाइयों[1] का सेवन करते थे। मीठी वस्तुओं में हलुआ[2] बहुत पसंद किया जाता था शकरपारा भी अन्य प्रकार की मिठाइयों के साथ खाया जाता था:

सुंदर पैंठे पाग और खाजे अतिखासे।
ल्याचोदाने और सकरपारे परकासे।।[3]

1- बनी असरफी, रबड़ी, बरफी अरु पेरा।
मोदक मगद मलूक और मठ्ठे महँ सेरा।।
फेनी गूझा गजक भुरभुरे सेव सुहारे।
जोर जलेबी पुंज कंद सा नो पगे छुहारे।।
- सोमनाथ ग्रंथावली शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0।
उरद मूँग के मोदक मंडे, और मुम्हैडे पाग अखंडे।
-सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 561 छं0 83; देव-देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14; बोधा ग्रं0पृ
मीरजा नाथ, बहारिस्तानए- घैबी, अनुवादक, डॉ0एम0आई0 बोरा, I, पृ0 348;
सियार उल-मुत्तखरीन, सैयद गुलाम हुसैनखान, रेमण्डस इंग्लिश ट्रांसलेशन I,
पृ0 389; पी0एन0 ओझा, ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इनमुगल इंडिया, पृ0 2

2- हलुआ देवग्रंथावली, पृ0 149,
मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37; ओविंगटन
पृ0 235; डी लेट, पृ0 92; रो एण्ड फ्रायर पृ0 279,

3- 'सकरपारा'- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद पृ0 524 छं0 2; सैयद
गुलाम हुसैन खान, सियार-उल- मुत्तखरीन, रेमण्डस, इंग्लिश ट्रांसलेशन
I, पृ0 389; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0
37, बहारिस्तान ए घैबी, I, पृ0 348,

शादी विवाह के अवसर पर विभिन्न प्रकार के व्यंजन बनते थे ।[1]

उच्चवर्गीय आहार में मेवे [2] खाने का भी उल्लेख मिलता है:

मेवा भरी सु मिठासु । पिस्ते बादाम प्रकास ।[2]

मेवे में बादाम [3], चिरौंजी [4],

1- पूरी करी मिलैं कै हरदोंबारी लखि सुबरन की जरदी ।
घनी कचौ री बैगन तले, मोहनभोग, गुलगुला स्ते ।।
उरद मूँग की पिठो पोसि के लडुवा कीने ।
निकुती छोटी छाँटि मंजु मुतिलड्डू बनाए ।
सरस अमृती खुरमा सुन्दर बेस सजाए ।
अरू अनेक विधि अमलघरे बासन में भरिकें ।
हेज, डिक्शनरी ऑफ इस्लाम पृ0 319

2- सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 25; पृ0821 छं0 27; सुजानविलास: पृ0 691 छं0 14; पृ0 794 छं0 16; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 117; आईन-ए -अकबरी, 1, अनु0ब्लाकमैन पृ085; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37,

3- "बादाम" वही, सुजानविलास, पृ0 691 छं0 14; बोधा ग्रंथावली पृ0 5 पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन द मुगल इंडिया, पृ03, आईन 1, ब्लाखमैन, पृ0 65, बर्नियर पृ0 17; कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफइंडिया .... पृ0 208

4- चिरौंजी वही, माधवविनोद, पृ0 337 छं0 33

निम्न वर्ग के आहार - निम्न वर्ग भी पका चावल[1], मक्खन[2], तथा दही[3] का प्रयोग करते थे। सब्जियों में निम्न वर्ग साग खाते थे।

1- 'चावल' - ....।

- सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ0 63। छं0 85; तथा देव, देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 37; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 272; मनूची- स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 41; पी0एन0 ओझा गिलम्पसेज ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 2

2- मक्खन- देव देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 22। छं0 317; उपरोक्त, हेमिल्टन, 1, पृ 162; डीलेट पृ0 89।

3- "दही-" भिखारीदास ग्रंथावली रससारांश, पृ0 32 छं0 220; मतिराम-ग्रंथावली, ललितललाम, पृ0 352 छं0 316; मतिराम-रत्नावली, पृ0 43 छं0 63; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 50 छं0 53; दही को घोलकर पतला कर लिया जाता था उसमे चीनी खाण्ड आदि डालकर मीठा कर लिया जाता था उसको गोरस (लस्सी) कहा गया निम्न वर्ग गोरस तथा खाँड का भी प्रयोग करता था; भिखारीदास, काव्यनिर्णय पृ0 120 छं026; रससारांश, पृ0 32 छं0 220; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ022। छं0 320;

मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 42; निजार पृ0 143; कैरी पृ0 160; खाँड, गुड़, से बनता था, गुड़ का उल्लेख ट्रेवेनियर पृ0 133 में किया है

तत्कालीन समय में भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के मसालों यथा: कालीमिर्च, लौंग, नमक, जायफल आदि का प्रयोग किया जाता था :

और चंद से गोल दहे में बरा भिजोये

लौनँ मिरच अरू लौगं पीसि लीनि मधिनु संजोये ।।[1]

मांसाहारी भोजन में लोग जानवरों के बकरा, सुअर आदि के गोश्त (मांस) था कबाब जो गोश्त से ही बनता था और मछली आदि का सेवन करते थे।[2]

पेय पदार्थ तथा मुखशोधक वस्तुएें –

अट्ठारहवीं शताब्दी का काल श्रृंगार काल माना जाता है चूंकि तत्कालीन समय में सम्राट अत्यन्त बिलासी थे वे सदैव रासरंग में व्यस्त रहते थे। ऐसी परिस्थिति में मदिरा का सेवन कोई आश्चर्य की बात नहीं है। लगभग सभी लोग मदिरा का प्रयोग करते थे। नकेवल पुरूष बल्कि स्त्रियाँ भी समयानुसार मदिरा का प्रयोग करती थीं :

1– सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0 3; सुजानविलास, पृ0 338 छं0 34 ।;
कालीकिंकर दत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 1707–1813. पृ0 79,' 85, 80, 81, 83, 89,' 127'; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 44; डेलावेली, 2; पृ0 226,' मेन्डल्सो, पृ0 33,' पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्प्सेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0 8

2- मिरात-ए-सिकन्दरी, पृ0 42; मैन्डलसो, पृ0 58; डेलावैली, पृ0 435

आसव सेरू सिखाए सखीन के सुन्दरि मंदिर में सुखसौवै ।

सापने में बिछुरे हरि हेरि हरैंह हरै हरिनी दृग रोवै ।[1]

नशे को अन्य वस्तुओं में भाँग का उल्लेख कवि ने किया है :

खान पान की वस्तु करी जे जे अनमोली

तिनि में दई मिलाई भंग की करिके गोली ।[2]

यह सामान्य तौर पर गरीबों में प्रचलित थी,[3] तथा इसे किसी वस्तु के साथ मिलाकर खाया जाता था ।[4] उच्च वर्ग भी भाँगका सेवन करता था ।[5]

नशे की अन्य चीजों में तम्बाकू का भी प्रयोग होता था ।[6] मुख शोधक वस्तु में भोजन के उपरान्त पान खाया जाता था :

1- "मदिरा"- देव ग्रंथावली, भाव विलास, पृ0 32, छं0 22; यहाँ पर आसव का तात्पर्य शराब अथवा मदिरा से ही है, सोमनाथ ग्रंथावली, ब्रजेंदविनोद, पृ0 634 छं0 10; पृ0 620 छं0 22; पृ0 621 छं0 26; सोमनाथ ग्रंथावली, द्वितीय खण्ड, पृ0 87 छं0 11; तोष, सु0 नि0, पृ0 150; मासीर -ए- आलमगीरी पृ0 531; अब्दुररहमान, रूक्यात ए- आलमगीरी, पृ0 33; पेलसर्ट इंडिया, पृ0 65; थैवनॉट पृ0 33

2- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0 4;

2- ट्रेवेनिर्यर, ट्रवेल्स इन इंडिया, पृ0 165, लिन्सटन, भाग2, पृ0 115-16

3- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, पृ0 524 छं0 4,

4- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद पृ0 524, छं04; लिन्सटन भाग 2 पृ0 115-16

5- मैकालिफो । पृ0 120,

6- मनूची 'स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 175

भोजन करि द्विज बीरा लीन्हों । नमस्कार चूरामनि कीन्हो ।[1]

यद्यपि पान भोजन के उपरान्ततोखाया जाता था,किन्तुकवियों ने पान का अन्य कई दृष्टियों से उपयोग करने का उल्लेख किया है यथा- अतिथि सत्कार शादी विवाह के अवसर पर और प्रतिदिन पान खाने का उल्लेख है।[2]

1- "पान" बोधा विरह वारीश,पृ0137 छं0 47; देव, ग्रंथावली, पृ0 चतुर्थभाव विलास,पृ109 छं0 3; भासीर ए आलमगीरी, पृ0 262; डेलाविली, भाग2, पृ0 226; मैन्डल्सो,पृ0 33;पी0एन0 ओझा: ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया,पृ0 8; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स,कास्टम्स एण्ड सेरेमनोज,पृ0 183;मनूची,स्टोरिया द मोगोर,।,पृ0 63-64

2- देव:चतुर्थ भाव विलास, पृ0 113 छं0 5; पृ0 126 छं0 2; पृ0 109 छं0 3; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खण्ड,पृ 0 51, छं0 355; सोमनाथ ग्रंथावली, श्रृंगारविलास,पृ0 596 छं0 40; पृ:0 608 छं0 107; पृ0 285 छं0 56; पृ0 295 छं0 5; पृ0 493 छं0112; रसपीयूषनिधि,पृ0 116 छं0 21; पृ0 127 छं0 18; पृ0 132 छं010; सुजानविलास,पृ0 764 छं0 17; बोधा: विरह वारीश,पृ0 226 छं0 18;(पानकोबीड़ा या बीरो भी कहा गया है) मीरजा नाथ,बहारिस्तान-ए-घैबी, अनुवादक डॉ0 एम0 आई बोच,।पृ0 140; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया,पृ0 65; डुबाएस हिन्दू मैनर्स,कस्टम्स एण्ड सेरेमनोज, पृ0 226;ट्रेवेर्नियर,ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 116;थैवैनाट कैरी पृ0 13; बर्नियर ट्रेवेल्स,पृ0 13 ।

पान का उपयोग स्त्री, पुरूष दोनों करते थे :

पान खवाइ उन्हें पहिलैं तब, नाथ के हाथ के पाननि खैहौं ।[1]

लोगपान में तम्बाकू, लौंग इलायची, तथा कपूर का मिश्रण डालकर खाते थे:

लाइची लवंग करपूर पूरि पाननि में

अरविंद आनन में हँसि के खवाइहौं ।[2]

1– देव; भावविलास पृ0 109 छं0 3; पृ0 126 छं0 2; पृ0 113 छं0 5; भिखारीदास ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, पृ0 51 छं0 355; सोमनाथ ग्रंथावली, श्रृंगारविलास, पृ0 608 छं0 107; पृ0 285 छं0 56; पृ0 295 छं0 5; माधव विनोद: पृ0 493 छं0 112; रसपीयूषनिधि पृ0 41; पृ0 127, छं0 18; पृ0 132 छं0 10; पृ0 116 छं0 21; सुजान विलास पृ0 764 छं0 17; बोधा; विरह वागीश पृ0 137, छं0 47; पृ0 226 छं0 18; ट्रेवेर्नियर, ट्रेवल्स, भाग 1, पृ0 294; मैन्डल्सो, पृ0 33; पी0एन0 ओझा ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ08; डेलावैली भाग2, पृ0 226 ।

2– सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 132 छं0 10; पृ0 116छं0 21; श्रृंगारविलास, पृ0596 छं0 40; पृ0 608 छं0 107; मतिराम; रसराज, तमोल (तम्बाकू) पृ0 067 छं0 114; पृ0 24; 318; 358; तोष; सुधानिधि, पृ0102 छं0 300; पृ0 123 छं0 362; ट्रेवेर्नियर, ट्रेवल्स इन इंडिया, पृ0 149; डेलावैली, भाग2, पृ0 226; मैन्डल्सो, पृ0 33; पी0 एन0 ओझा: ग्लिम्पसेस ऑफ सोशल लाइफ़ इन मुगल इंडिया, पृ0 8; मनूची; स्टोरिया द मोगोर भाग2, अनुवादक इरविन, पृ0 175

इस प्रकार के पान में डालने वाले मसालों का प्रयोग संभवत: उच्च वर्ग ही करता था ।[1]

उच्चवर्गीय लोग पान के बीड़ा को रखने के लिए बहुमूल्य मणियों आदि से युक्त पानदान रखते थे :

पन्ननि के पानदान [2]

1- आइने-अकबरी, I, पृ० 72

2- देव: सुखसागरतरंग पृ० 78 छं० 186; बोधा ग्रंथावली पृ० 6; सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगारविलास, पृ० 5 94; छं० 29; रसपीयूषनिधि, पृ० 108 छं० 16; मिरातुल आलम, पृ० 365; मुहम्मदयासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 43

(खख)आवास तथा भवन-सज्जा

मानव जीवन की सम्पूर्ण कलात्मकता पहले आवश्यकता के रूप में अवतरित हुई है, वस्तुत: कला भी उसके लिए अनिवार्य ही है। मकान रक्षा के लिए बनाये जाते थे सुरक्षा के साथ धीरे-धीरे वे सौन्दर्य सृष्टि भी करने लगे। आवश्यकता अविष्कार की जननी तो है सौन्दर्य की परिचारिका भी है, फलत: मकान मजबूत ही नहीं सुन्दर भी बनाये जाने लगे। साज सज्जा के समान भी रखे गये।

तत्कालीन समाज का उच्च वर्ग यथा: सुल्तान सामंत आदि के भवन पूर्णरूप से सुरक्षित तथा सौन्दर्य से परिपूर्ण होते थे। भवन के चारों ओर गहरी खांई होती थी तथा अत्यन्त ऊँची दीवारें बनी होती थीं जिस पर मणि जैसे लाल पत्थर से कंगूरे आदि बने रहते थे :

> चहुं ओर विराजति दीरघ खाई। सुभ देव तरंगिनि सी फिरि आई।
> अति दीरघ कंचनकोटि बिराजै। मणि लाल कंगूरन की रूचि राजै।[1]

उच्च वर्ग बड़ी-बड़ी हवेलियों में रहते थे[2] जिसमे कई खण्ड होते थे कवि ने

1- देव ग्रंथावली: पृ0 2 छं0 26

2- " बड़े बाजार बिलंद हवेली। फुहरति धुजा बछलनि मेली-
- सोमनाथ ग्रंथावली पृ0 794छं0 17

मतिराम ग्रंथावली: पृ0 362 छं0 437, पृ0 363 छं0 438, देवदर्शन पृ0120 बोधा: विरह वागीश पृ0 95 छं0 39, सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 206 छं0 185

तिमंजले पर बैठी नायिका जो पतंग उड़ने का खेल देख रही है, का वर्णन, इस प्रकार किया है :

रावरी तिमहले की बैठि छविवारी बाल ।
देखति तमासो गुड़ी अलिनि उड़ायो है ।[1]

सम्पन्न वर्ग प्रारम्भ मे ही अपने महलों की विशालता तथा सुन्दरता के प्रति पूर्णरूप से जागृत थे । सम्भ्रांत लोगों के भवन का एक उल्लेख इस प्रकार मिलता है ।

यद्यपि वे भूमि के विभिन्न टुकड़ों पर सुनियोजित रूप से बने नहीं है तथापि अद्वितीय सुन्दर हैं । वे पूर्णतया काटे हुए पत्थर के बने हैं । महल अधिक उन्नत तथा भव्यहै। महल की दीवार का एक भाग पूर्व की ओर है और इसका यह हिस्सा अन्य भागों की अपेक्षा अधिक सुसज्जित है। इसकी ऊँचाई लगभग चालीस या पचासगज है तथा पूर्णरूपेण कटे हुए पत्थर का बना है। इसके अग्र-भाग पर श्वेत सिमेंट का प्लास्टर है। अनेक स्थानों में महल चार मंजिला जितना ऊँचा है। प्रथम की दो मंजिलें बहुत अंधेरी हैं, किन्तु उनमें कुछ समय बैठने के पश्चात् आप भली-भाँति देख सकते हैं । इस महल के एक भाग में एक ऐसा भवनहैजिसमे पाँच गुम्बद है और उनके चारों ओर अनेक छोटे-छोटे गुम्बद हैं और ~~भारतीय परम्परा के अनुसार एक बड़े गुम्बद के दोनो के ओर~~

1- तोष:सुधानिधि पृ0 174 छं0 206; देव-देवदर्शन पृ0 120; मतिराम ग्रंथावली: पृ0 363 छं0 438; भूषण ग्रंथावली, पृ0 70 छं0 245; पर्सी ब्राउन, दि इंडियन आर्किटेक्चर, पृ0 131 ।

भारतीय परम्परा के अनुसार एक बड़े गुम्बद के दोनों ओर एक-एक छोटे गुम्बद हैं । बड़े गुम्बद ताँबे के पत्तरों से मढ़े हुए हैं । दीवार के बाह्य भाग को उन्होंने हरे रंग से रंगे हुए खपड़े से जड़ दिया है। सम्पूर्ण दीवारको उन्होंने केले के वृक्ष के चित्र से मढ़ा है जो कि रंगे हुए खपड़े काहै। पूर्वी भाग के स्तम्भ पर हातीपुल है। वे हाथी को "हाती" तथा द्वार को " पुल कहते हैं । इस द्वार के बाह्य-भाग पर हाथी का एक चित्र है जिस पर दो महावत बैठे हैं । यह बिल्कुल एकहाथी की भाँति का बना है । फलत: यह हातीपुल कहलाता है। महल की सबसे निचली मंजिल (जो कि ऊँचाई में चार मंजिला जितनी है) में एक खिड़की है जो हाथी के इस चित्र की ओर खुलती है। इसकी ऊपरी मंजिल पर भी इसी प्रकार के गुम्बद हैं । दूसरी मंजिल में बैठक है .....। [1]

सम्पन्न वर्ग का भवन इस प्रकार निर्मित होता था कि चारों ओर से भली-भाँति प्रकाश और हवा अन्दर आ सके ।[2]

1- मेमॉयर्स ऑफ बाबर, भाग2, (किंग) पृ0 337, प्रस्तुत उद्धहरण में बाबर ने अपने (आत्म चरित बाबरनामा) में ग्वालियर के राजा मानसिंह के महल के वर्णन किया है ।

2- देव-देवदर्शन पृ0 120; सोमनाथ ग्रंथावली: पृ0 819 छं0 7; सुजान विनोद पृ0 746 छं0 17; मआसीर-ए आलमगीरी, (उर्दू) अनुवादक मुहम्मद फिदा अली, पृ0 100; बर्नियर पृ0 247

कवि ने सुनियोजित गृह व्यवस्था स्थापित किये जाने का उल्लेख किया है :

> रच्यो गृह पूरब न्हान निमित्त। रसोइनि को दिसि अग्नि उचित।
> कियौ गृह पश्चिम भोजन अर्थ। समीर दिसा हित अन्न समर्थ।
> दिसा पुनि उत्तर गेह भँडार। सुरालय ईस दिसा अधिकार।[1]

भवन मे आँगन भी होता था :

> ऊजरी उज्यारी ऐसी गूजरी न देखी कोऊ
> आँगन में सहज देवंगना सी ठाढ़ी है।[2]

भवन में अनेक कमरे यथा बैठक, शयनकक्ष आदि हुआ करते थे।[3]

महलों के ऊपर कंचन के कलश बने रहते जिनकी ऊँचाई और पीत आभा के कारण गगन पीला सा लगता था:

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ0 520 छं0 55-56।

2- आलम ग्रंथावली: संपा0 श्री विद्यानिवास मिश्र, पृ0 128, छं0 106; पृ0 313 छं0 66; पृ0 34 छं0 74; पृ0 66 छं0 174; आलम, अक्षर मलिका: वही, पृ0 123 छं0 4; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 91 छं0 31; पृ0 95 छं0 43।

3- सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819 छं0 8, घनानंद ग्रंथावली, पृ0 323, मतिराम ग्रंथावली: पृ0 363 छं0 436, निभोन्होफस वोमाज पृ0 221। पर्सी ब्राउन, द इंडियन आर्किटेक्चर, पृ0 3

महलनि उपर जँह बने कंचनकलश अनूप ।

निज प्रमानि मों करत है गगन पोत अनुरूप ।[1]

महलों में बाग तथा तालाब की भी व्यवस्था रहती थी :

नृप आवास के अग्रसीं बाग असोक नवीन ।

निकट तड़ाग महेसमठ तहाँ अमन द्विज कीन ।[2]

गर्मी में जब तालाब का पानी सूख जाता था तब कुएं से पाइप के माध्यम से तालाब में पानी भरा जाता था ।[3] बाग में विभिन्न प्रकार फलों के वृक्ष मौसम के अनुसार लगाये जाते थे :

अरू बिहीसेव सुदाख । पुंजवैं सु उर अभिलाख ।

नौजे छुहारे बेरि । कमररव्य दुरव्य निबेरि ।

आलू मधुर खुबानि । नारँगी अरू सुखदानि ।

कठहरी कटहर जाल । अरु आँवरे सु बिसाल ।।[4]

क्रमशः

1- मतिराम ग्रंथावली :पृ0 362छं0 435 ;सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819 छं08 ।

2- बोधा: विरह वागीश ,पृ0 137 छ0 49; पृ0 194 छं0 6; सोमनाथ ग्रंथावली; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819 छं0 15; पृ0820 छं0 22; माधव विनोद पृ0 336/21; 336/25; आलम ग्रंथावली; पृ0 151, मैन्डस्लो, पृ0 54

3- पेलसर्ट, जहाँगीरस इंडिया, पृ0 67

4-

श्रीफल करौंदा नूत । मिठ्ठा चिरौंजिय नूत ।

अरू फालसे अंजीर । खिरनी बकुल जंभीर ।।

अरू बीजपूर अनार । गोंदी कपित्थ उदार ।

× ×

अरू और बहु विधि वृक्ष। ते सोभियै परतक्ष । [1]

फलों के वृक्ष के अलावा विभिन्न प्रकार के पुष्पों के भी वृक्ष बागों में लगे होते थे तथा भवन के द्वार पर दरवाजे लगे होते थे :

अरू गढ़ दुबार । सोहहिं प्रकार

बड्डे कपाट । जुत लोह ठाट ।। [2]

कुलीनों का भवन इतना बड़ा होता था कि इनके महलों में जानवरों को रखने के लिए भी अलग से प्रबन्ध होता था ।

हरिन हरमखाने सिंध है सुतुरखाने

पीलखाने पाठी है करंजखाने कीस हैं।

खड्गी खखाने खरगोश सिलबत खाने,

खीसैं खीले खसखाने खूंसत सबीस हैं। [3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0370छं0 42; छं043; पृ0338छं035;पृ0338 छं0 36; दीर्घनगर वर्णन, पृ0820छं022-24;रूक्यातए आलमगीरी. अनुवादक नजीब अशरफ, पृ04

2- सोमनाथ ग्रंथावली दीर्घनगर वर्णन, पृ0 819छं013; आलम अक्षरमालिका, पृ0 123छं04; पद्मी भाउन, पृ0 133

3- भूषण ग्रंथावली, पृ0 102 छं0 36। राजकमल बोरा पृ0 27, सुतुरखाने से तात्पर्य, (ऊँटो का बाडा), पीलखाने का तात्पर्यहाथियो का स्थान अर्थात् जहाँ हाथी बाँधे जाते थे(करंजखाने(मुर्गो कास्थान(आदि की व्यवस्था कुलीनो के भवनों में होती थी ।

महल की सज्जा का वर्णन कवि ने इस प्रकार किया है :

चांदनी महल में फब्वारे लगेहैं जिनसे दुग्धाधोज्ज्वल निकल रहा है चंदोवा और मणि-मणिक्य की झालरें लटक रहीहैं

छुटत छुहारे, वैविमल जल, झलकत,
चमकै चंदोवा मनि-मानिक महालरैं ,[1]

फर्श श्वेत संगमरमर का बना होता था जिस पर रोशनी पड़ती थी तो वह सफेद दूधिया सा दिखाई पड़ता था और भवन में बना मंदिर भी श्वेत स्फटिक से निर्मित होने के कारणदधि के सागर की भाँति प्रतीत होता है,

फटिक सिलानि सोसुधारयौ सुधा-मंदिर
उदधि दधि को सो अधिकाइ उमगै अनंद
बाहर तें भीतर लौं भीति न दिखाई देत
छीर कैसे फेन फैलो आंगन फरसबंद ।[2]

भवन में बने सरोवर का सौन्दर्य दर्शनीय है:

अरू पक्को निकट सरोवर तामै निरमल नीर बिराजै ।
बहु जाकी तरल तरंगै दरसै सुख सरसै बृजराजै ।

क्रमशः

1- देव देवसुधा , पृ0 35 छं0 42 (यहाँ पर फब्बारे को छुहारे कहा गया है), बोधा: विरह वारीश पृ0 94 छं0 37,' मैन्डल्सो, पृ0 54 ।

2- डॉ0 नगेन्द्र , देव और उनकी कविता, पृ0 186

पुनि दिन अरबिंद रैनि इंदीबर फूले रहत सुहाए ।
नित हित मकरंद बुंद के सौरभ भ्रमत अलिंद सुहाए ।
उर कपट तजे जल कुक्कुट बिहरैं चक्रवास रस भीगे ।[1]

निम्न वर्ग के आवास – निम्न वर्ग के लोग एक साधारण सी झोंपड़ी बनाकर रहते थे जिसकी दीवारें मिट्टी की बनी होती थीं ।[2]

झोंपड़ी को घास-फूस की चटाई सी बनाकर बांस के सहारे से ढ़क देते थे ।[3] उच्च वर्ग के विपरीत निम्नवर्ग के घरों मे प्राय: एक ही दरवाजा होता था तथा खिड़की का भी अभाव होता था परिणामत: रोशनी और हवा समुचित रूप से नहीं मिल पाती थी ।[4]

फिर भी गरीब लोग अपने घर को लीप-पोतकर (गोबर मिट्टी से) साफ रखते थे :

आंगन लिपाय दिवाल पुताई। जरक समै बरवरी छवि बारी ।[5]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 82। छं0 31-32, बोधा विरह वागीश, पृ0 95 छं0 39; बर्नियर, पृ. 247; सरकार, मासीर-ए-आलमगीरी, पृ. 100
2- बर्नियर पृ0 252
3- पेलसर्ट, पृ0 67; आइ न-ए-अकबरी, अनु0 जैरेट भाग 2, पृ0 122; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 211 ।
4- ट्रेवेर्नियर भाग 1, पृ0 100
5- बोधा: विरह वागीश पृ0 152 छं0 203; जॉन फ्रायर तथा टॉमस रो पृ0 451

(ख) मनोरंजन के साधन

विविधता ही जीवन जगत का आधार है । सुख और दुःख हर्ष तथा विषाद कर्म एवं विश्रांति के युग्मों में से किसी एक की संस्थिति पर्याप्त नहीं है । संतुलन के लिए दोनों अपेक्षित हैं । कर्म की गंभीरता और गुरूता से मन और शरीर दोनों थक जाते हैं । इस थकान को कम करने, दूर करने और पुनः नवीन चेतना एवं उत्साह के सहित कार्यरत होने के लिए ही मनोरंजन की उपयोगिता है, यही इसका साध्य और प्रयोजन है यद्यपि यह स्पष्ट है कि मनोरंजन अपने आपमें पूर्ण नहीं है, फिर भी इसकी आवश्यकता को नकारा नहीं जा सकता ।

मध्ययुग में चित्रित सामाजिक वातावरण में भौतिक संपन्नता और उन्नति का अभाव नहीं है इसलिए मनोरंजन की व्यवस्था स्वभावतः सुलभ हो जाती है । सामन्त सरदार तथा संपन्न वर्गों में शान-शौकत की अतिशयता थी अतः उसी के अनुरूप अनेक मनोंरजन के साधनों का प्रचलन हो गया था।

मनोरंजन के साधन गृह-वाह्य दो भागों में विभाजित किया जा सकता है
गृह-मनोरंजन – गृह मनोरंजन में शतरंज[1] सबसे अधिक प्रिय खेल था ।

1- डॉ0 मोहन अवस्थी: हिन्दी रीतिकविता और उर्दू काव्य, पृ0 94; मआसीर-ए-आलमगीरी; मुहम्मद खान साकी, अनुवादक (उर्दू) मुहम्मद फिदा अली तलब, पृ0 811-12; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 460; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 118; बहारिस्तान-ए-गैबी, अनु0 एम0 आई0 बोच, भाग2, पृ0 637

शतरंज स्त्री पुरूष दोनों खेलते थे ।[1] कवि ने एक ऐसी नायिका को चित्रित किया है जो शतरंज खेल रही थी कि नायक ने जाकर उसके हाथ में फरजी दिया :

पहले हम जाय दियो कर मैं तिय खेलति ही घर में फरजी ।[2]

चौपड़ – यह कपड़े की बिसात पर कौड़ियों से खेला जाता था [3], जो सम्पूर्ण मुगल काल में खेला जाता रहा,[4] विलास की अन्य सामग्रियों में मुख्य खेल माना जाता था ।[5]

1- बहारिस्तान ए- गैबी, अनुवादक एम0आई0 बोच, भाग2, पृ0 637; ओविंगटन, पृ0 267; आइन-ए-अकबरी, ब्लाकमैनन, भाग 1, पृ0 308; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 118; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 670; कानून-ए-इस्लाम, कुक, पृ0 23।

2- तोष; डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 94; तथा, वही ।(फरजी का तात्पर्य पत्र से है)

3- जाफर शरीफ, कानून-ए- इस्लाम, अनुवादक जी. ए. हरक्लार्ट्स पृ033।; चौपड़, का विशद विवरण इस पुस्तक में है।

4- मैकालिफी भाग 1, पृ0 162; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, सरकार, पृ0 328

5- एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 228; जाफर शरीफ, कानून-ए इस्लाम, अनुवादक जी0 ए0 हरक्लार्ट्स, पृ0 33। ।

शतरंज की भांति चौपड़ भी स्त्री-पुरुष दोनों ही खेलते थे :

संग प्यारे के चौपड़ खेलौ, हसौ, सकुचो न कहूँ सखियाँजन सों ।[1]

स्वतंत्र रूप से चौपड़ में किसी को हराया जा सकता था ।

इनकों चौपरि माहि हरइयै ।।

खेलन के हित इहा बुलइयै ।।[2]

द्यूत या जुआ : जुआँ खेलने का व्यसन बादशाहों, सांमतों तथा समाज के उच्च वर्ग में बुरी तरहव्याप्त था।[3] कवियों ने जुआ खेले जाने का उल्लेख किया है :

1- कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 77 छं0 48; पृ0 23 छं0 30; सोमनाथ ग्रंथावली; ब्रजेंदविनोद, पृ0 535 छं0 7; पृ0 584 छं0 86; पृ0 589 छं0 29; पृ0 589 छं0 30; रामचरित्र रत्नाकर: द्वितीय खण्ड, पृ0 380 छं0 5; सुजानविलास: पृ0 716 छं0 31; श्रीमती मीर हसन अली, आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ0 250; यदुनाथ सरकार: स्टडीज इन द मुगल इंडिया, पृ0 82; आइन-ए-अकबरी, I, पृ0 316; अंसारी, सोशल लाइफ आफ द मुगल इम्परर्स, पृ0 177

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 589 छं0 29; पृ0 584 छं0 86; फ्रायर‍्यंरी, पृ0 333 ,

3- डॉ0 मोहन अवस्थी: हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 95 ।

खैले मिलि जुआ पैज पूरे दांव आवहीं ।

हारहिं उतारि जीते मीत धन लच्छन सों ।[1]

<u>चौगान</u> – चौगाँन [2] जिसे पोलो भी कहा गया यह खेद गेंद के माध्यम से खेला जाता था । यह धनी वर्ग का खेल था :

आलमगीर के मीर वजीर फिरै चउगान बटान से मारे ।[3]

<u>शिकार</u> – (बाह्य मनोरंजन) शिकार खेलना प्रारम्भ से ही मुगल बादशाहों, उच्चवर्गीय सामंतों आ

1- घनानंद, घनानंद कवित्त, पृ0 16, छं0 6; पृ0 46; सोमनाथ ग्रंथावली, सुजान विलास, पृ0 786 छं0 31; पृ0 786 छं0 32; पृ0 786 छं0 33; ब्रजेंदविनोद: पृ0 630 छं0 48; आईन; 1, पृ0 321; एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया, पृ0 282

2- के एम अशरफ, लाइफ--, पृ0 287, अंसारी, पृ0 171; आइन-ए-अकबरी, 1, पृ0 214-215

3- भूषण: राजकमल बोरा, पृ0 27छं0 469; बोधा, इश्कनामा, पृ0 200 छं0 13; डॉ0 मोहन अवस्थी हिन्दी रीतिकविता तथा समकालीन उर्दू, काव्य, पृ0 98; अंसारी; सोशल लाइफ आफ द मुगल इम्परर्स, पृ0 171; आइन-ए- अकबरी भाग 1, पृ0 214-215; के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन आफ पोपुल्स आफ हिन्दुस्तान, पृ0 287 ।

का प्रिय खेल रहा ।

कवियों ने शिकार खेलने का उल्लेख किया है :

एक समै सजि कै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधारा ।[1]

अधिकांशत: लोग घोड़े पर सवार होकर जंगली जानवर हिरन, चीता आदि का शिकार करते थे ।[2] इन जंगली जानवरों को शिकार के हेतु सुरक्षित रखने के लिए बहुत धन व्यय किया जाता था ।[3]

1- भूषण ग्रंथावली: पृ0 30 छं0 90 ; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 221 छं0 318; पृ0 42 छं0 11; पृ0 156 छं0 3; पृ0 222 छं0 332; पृ0 38/43; माधव विनोद, पृ0 320 छं0 18; सोमनाथ ग्रंथावली; द्वि0 खं0, रामचरित्र रत्नाकर पृ0 126 छं0 8; दीर्घनगर वर्णन, 823 छं0 2; सुजानविलास, पृ0 645 छं0 132; ब्रजेंदविनोद, पृ0 537 छं0 22; वही [शिकार के लिए आखेट शब्द का भी प्रयोग हुआ है]

2- चल्लयौ सिकार, हुव हय सवार।

- सोमनाथ ग्रंथावली, सु0 विलास, पृ0 645 छं0 132;

पीछे कुरंग के बल उदार "-

" रामचरित्र रत्नाकर, द्वि0ख0, पृ0 126 छं0 8

रसपीयूषनिधि, पृ0 320 छं0 18; पृ0 222 छं0 332; दीर्घनगर0 पृ0 823, छं0 2; सुजानविलास पृ0 645 छं0 139; पृ0 650 छं0 193; ब्रजेंदविनोद पृ0 537 छं0 22; मिरात-ए-आलमगीरी, पृ0 522-23; 489; ट्रेवर्नियर; पृ0 125; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग4, पृ0 255,

3- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग4, पृ0 255

<u>कबूतरबाजी</u> – तत्कालीन समाज में लोगों को कबूतर पालने तथा उन्हें उड़ाने का व्यसन था[1] कवि ने कबूतर बाजी (इश्क-बाजी) का उल्लेख किया है :

गिराबाज लोट लोटन कबूतरी को
कंदला तिया पै एती तरलाई वारी है ।[2]

<u>पतंग</u> – अट्ठारहवीं शती में पतंग[3] उड़ाने का आम रिवाज था । कवि ने एक ऐसी नायिका का चित्रण किया है जो उड़ती हुयी पतंग को देखकर प्रसन्न हो रही है :

रावरी तिमहले को बैठि छविवारी बाल ।
देखति तमासो गुडी, अलिनि उड़ायो है ।[4]

1- श्रीमती मीरहसन अली, ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ0 217-218; आइन-ए-अकबरी, I, ब्लाकमैनन, पृ0 318; डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीति कविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 96

2- बोधा:विरह वागीश पृ0 105 छं0 44, लोटन, कबूतर भी एक जाति बतायी गयी है डॉ0 अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 96, आइन-ए-अकबरी, I, , पृ० 318, मीर हसन अली ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, पृ० 217-218

3- आनन्दराम मुखलिस, सफरनामा, पृ0 54; मीरहसन अली, ऑब्जरवेशन्स, ऑन द मुसलमान्स, पृ0 217

4- तोष:सुधानिधि, पृ0 174, छं0 102; यहाँ पतंग को गुडी कहा गया : आलम ग्रंथावली, पृ0 109 छं0 345; पृ0 118 छं0 394;

नट – नट लोग विभिन्न प्रकारके वेश बनाकर तरह-तरह के तमाशे दिखाते थे :

कै कै कला अनेक नटवा चढ़ि बांस फैला तोड़त खतरातन ।[1]

आँख मिहोचनी या चोरमिहोचनी – अन्य मनोरंजन के साधनों में कवियों मे चोरमिहोचनी का उल्लेख किया है, जिसमें एक व्यक्ति को जो चोर बनता था उसकी आँख बन्द कर दी जाती थी फिर वह अन्य लोगों को ढूँढता था चोर व्यक्ति जिसे पकड़ लेता था वह व्यक्ति फिर चोर बनता था :

छुवत परसपर हेरिकै राधा नंदकिसोर ।
सबमें द्वै ही होत हैंचोर मिहोचनी चोर ।[2]

1- बोधा‍पृ0 69; देवग्रंथावली पृ0 191; सोमनाथ ग्रंथावली, सुजान विलास, पृ0 800, छं0 30; पृ0 800 छं0 41; पृ0 800 छं0 42; पृ0 800 छं0 43; तथा छं0 44; ब्रजेंद विनोद 844/6/88/74; नौरीस, एम्बेसी टू औरंगजेब, पृ0 166-67; डीलेट, पृ0 82; आइन-ए-अकबरी, भाग 3, पृ0 258,

2- मतिराम ग्रंथावली, मतिराम सतसई, पृ0 378 छं0 117; पृ0 386 छं0218; पृ0 373 छं0 56; पृ0 373 छं0 55; रसराज, पृ0 204 छं0 19; पृ0 279 छं0 346; ललितललाम, पृ0 329 छं0 181; पृ0 335 छं0 216; मतिराम रत्नावली, पृ0 109 छं0 15; पृ0 102 छं0180; पृ0 59 छं0 94; देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0239 छं0 40; बंगाल इन सिक्सटीन्थ सेन्चुरी पृ0 186; यह खेल अट्ठारहवी शती से पूर्व भी विद्यमान था ।

इन सबके अलावा गेंद[1] खेलना कबड्डी, - - - तथा अन्य छोटे -मोटे खेलों का उल्लेख मिलता है ।

संगीत - मनोरंजन के साधनों में संगीत [2] का अपना विशेष स्थान होता है ।

संगीत एक ऐसी कला है जो व्यक्ति के मनोभावों को व्यक्त करने में सहायक होती है। [3] प्रारम्भिक मुगल काल मे ही शासकों ने संगीत में रूचि ली और संगीतज्ञों को प्रश्रय प्रदान किया। अकेले औरंगजेब को छोड़कर[3]। तत्कालीन समय में विभिन्न प्रकार के वाद्य यंत्र प्रचलित थे तथा वाद्य यंत्रों के साथ गीत गाने का क्रमपूर्ववत चलता रहा :

महलन मांहि कलोलनि करें ॥ गेंद आदि खेलन विसतरें ॥

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद, पृ0 843 छ0 2; सोमनाथ ग्रंथावली, माधव-विनोद पृ0 400 छं0 30; तथा देवकृत देवचरित्र, पृ013 छं0 59 ।

2- मैन्डल्सो पृ0 310

3- अंसारी पृ0 174

4- तारीख-ए-रशीदी, मीर्जा मुहम्मद हैदर, अनुवादक ई0 डेनीसन रोस पृ0 174; पृ0 174 हुमायुनामा, अनुवादक बेवरिज पृ0 98; हुमायूँ ने सोमवार तथा बुधवार संगीत सुनने का दिन तय कर रखा था। आइन-एअकबरी : ब्लाकमैन पृ0 611 -12; तुजुक-ए-जहाँगीरी, रोगर्स एण्ड बेवरिज, I, पृ0 331, 292; इकबालनामा-ए- जहाँगीरी पृ0 308; कजवीनी, बादशाहनामा, पृ0 160; मिरातए-आलमगीरी, इलियट एण्ड डाउसन, खण्ड7, पृ0 156; मआसीर-ए-आलमगीरी, पृ0 71-81; इरविन लेटर मुगल्स, I, पृ0 192 , 93 ।

प्यारे लिये कर बीन बजावत, तान नवीनतहाँ उपजाई,

प्यारी अलापि के राग यहै, मधुरी धुंनि बीन तें बानि सुनाई[1]

जहाँदार के उत्तराधिकारियों को भी संगीत में अत्यधिक रुचि थी। मुहम्मदशाह का युग तो राग-रंग का ही युग था तथा वह स्वयं रंगीला के नाम से प्रसिद्ध था। उसके दरबार में 22 नर्तकियां तथा 24 गवैये सेवारत थे। [2]

नृत्य - संगीत और नृत्य एक दूसरे के पूरक हैं :

सांगीतक नाचत त्रिया गावत गीत रसाल[3]

अवलोकित काल में दरबार तथा सभाओं में स्त्रियाँ नृत्य करती थीं :

1- कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 92 छं0 102; पृ0 96 छं0 116; पृ0 96 छं0 117; पृ0 47 छं0 49; मतिराम: रत्नावली, पृ0 55 छं0 87; 116/84; रसराज, पृ0 267 छं0 285; पृ0 213 छं0 60; पृ0 220 छं0 92; देव: देवचरित्र, पृ0 12 छं0 53; पृ0 16 छं0 76; पृ0 17, छं0 80; पृ0 22 छं0 111; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 200 छं0 135; पृ0 226 छं0 12; पृ0 237 छं0 85; ब्रजेंदविनोद, 843/6; विरह बागीश, पृ0 85 छं2; पृ0 104 छं043; 21 मआसीर ए-आलमगीरी, उर्दू अनुवादक /अनु. मु. फिदा अली, पृ0 806; आईन, भाग II, पृ0 211; TII, 378

2- डा0 मुहम्मद उमर, मीर का अहद, पृ0 250, तारीखे शाकिर खानी पृ0 114, के संदर्भ से।

3- बोधा: विरह वागीश, पृ0 99 छं0 21; 85 छं0 2; 104 छं0 43

पुनि परदा कौ टारि तहँ आई हैरी दोइ ।

नृत्य कियौ तिनकौ निरखि रहे सबै सुख भोई ।[1]

प्रसन्नता के अवसर यथा विवाह, जन्मदिन तथा तीज-त्यौहारों पर भी नृत्य और संगीत के माध्यम से मनोरंजन किया जाता है ।[2]

हिंडोरा- अवलोकित काल में मनोरंजन का एक अन्य साधन हिंडोरा या झूला झूलना भी था । स्त्री-पुरुष दोनों ही हिंडोरे में झूलने का आनन्द लेते थे :

दंपति मिलहि हिंडोरा झूलहिं ......।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, माधव विनोद, पृ0 351 छं0 1; बोधा:विरह-वागीश, पृ0 89 छं0 21; एस. सी. रायचौधरी, सोशल कल्चरल एण्ड एकोनॉमिक हिस्ट्री ऑफ इंडिया, पृ0 117; मनूची:स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0 9, थैवनॉट 3 चैप्टर, XXXII, पृ0 55

2- हुमायूँनामा, अकबर के जन्म दिन पर पृ0 160; पीटर मुंडी, 2, पृ0 217

3- बोधा, विरह वागीश, पृ0 138; पृ0 94 छं0 30; कुमारमणि, रसिक रसाल, पृ0 82 छं0 65; देव:सुखसागर तरंग, पृ0 55 छं0 162; मुहम्मदयासीन:ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 181

बगीचों को सैर करना - बगीचों में घूमना बैठना आदि तत्कालीन समाज के लोगों का एक अन्य शौक था। बगीचो में जाकर लोग अपना मन बहलाते थे अधिकांशतः उच्च वर्ग के लोग बगीचों में जाकर बैठते थे यथा राजा सामंतादि,

पुनि नृप खनबाग में आयो। हवा देखि बहुतईसुख पायो ।[1]

बगीचो में तरह-तरह के फल-फूलों के वृक्ष लगे रहते थे ।[2]

निष्कर्ष -

उपरोक्त विवरण से विदित होता है कि कवियों की दृष्टि मनोरंजन के विविध साधनों पर पड़ी । उन्होंने तत्कालीन समाज में प्रचलित मनोरंजनों के साधनों पर जिस प्रकार अपनी कविता के माध्यम से दिया है वह अत्यन्त रोचक है। तत्कालीन समाज के लोगों की विभिन्न मनोरंजनों में रूचि यह स्पष्ट करती है कि वाह्य आक्रमणों व आन्तरिक विप्लवों का कोई भी स्थायी प्रभाव तत्कालीन जनता की मानसिक स्थिति पर नहीं पड़ा । ~~अकस्मात् जनता की मानसिक स्थिति पर नहीं पड़ा~~। अकस्मात् निकल जाने पर

1- बोधा: विरह वारीश, पृ0 194 छं0 6; सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 336 छं0 25; अर्ली ट्रैवेल्स इन इंडिया, विलियम फास्टर, पृ0 303

2- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 337 छं0 30; पृ0 337, छं0 31; पृ0 337 छं0 33; दीर्घनगर वर्णन, पृ0 821 छं0 27; पृ0 821 छं0 28; पृ0 821 छं0 29; पृ0 820, छं0 22 ; पृ0 820 छं0 23; बोधा: विरह वारीश, पृ0 95 छं0 39; रूक्यात-ए-आलमगीरी, नजीब अशरफ, पृ0 4; अंसारी पृ0 61

मनोरंजन के मध्य दु:ख एवं विषाद के बादल भी छट जाते थे। आर्थिक कठिनाइयों एवं विषमताओं के मध्य समाज का प्रत्येक वर्ग यह भली भाँति जानता था कि किन किन साधनों से दु:खों को कम किया जा सकता है। मुगल सम्राटों ने अपना दु:ख उद्यानों के सैर-सपाटों, आखेट- नृत्य व संगीत की महफिले, पशु एवं पक्षी

आदि के द्वारा, मध्यवर्गीय समाज के लोगों ने भी विभिन्न पक्षियो की बाजियों, पतंग बाजियों, संगीत नृत्य, शतरंज, चौपड़ तथा घर में खेले जाने वाले खेलों के द्वारा नादिरशाह एवं अहमदशाह की लूटों, मराठों, रूहेलों के निरन्तर उपद्रवों को भुलाने की चेष्टाकी तथा उनकी ओर से अपना ध्यान हटाकर अधिक सेअधिक दिल बहलाने का निरन्तर प्रयास किया था, इस युग में मदिरागोष्ठियां समाज के विभिन्न वर्ग के लोगों के लिए आकर्षक बनगये। अट्ठारहवीं शताब्दी के मनोरंजन के साधन एवं उसमें विविध वर्गों की रूचि तत्कालीन सभ्यता को स्पष्ट करते हैं। इस संबंध में प्राप्त विवरण एक ओर तो स्वतन्त्र उन्मुक्त समाज का बोध कराते हैं तो दूसरी ओर समाज की पतोन्मुख स्थिति को स्पष्ट करते हैं कि ऐसे कठिन समयमें जबकि देश के समक्ष असंख्य आन्तरिक एवं वाह्य समस्याएं थी तत्कालीन समाज किस प्रकार दैनिक जीवन मे ऐशो आराम की घड़ियों से आनन्दित हो रहा था। यदि तत्कालीन कवि समाज को इस प्रवृत्ति में सुधार का प्रयत्न करते तो शायद समाज सुसुप्तावस्था से जागृत होकर विभिन्न बाजियों एवं खेल तमाशों की ओर से अपना ध्यान हटाकर अपने दायित्व का बोध करता तथा आन्तरिक एवं वाह्य चुनौतियो का मुकाबला कर विघटन की प्रक्रिया को रोक सकता।

सातवाँ अध्याय

धार्मिक अवस्था

पर्वोत्सव, आस्थाएं तथा संस्कार

धार्मिक-अवस्था

किसी भी समाज के धार्मिक जीवन और उसकी विचार-परम्परा तथा जीवन के आदर्शों में घनिष्ठ संबंध होता है। भारतवर्ष में यह बात और भी विशेष रूप से लागू होती है, क्योंकि यहाँ धार्मिक जीवन और सामाजिक जीवन के बीच विभाजन रेखा खींचना अत्यन्त कठिन है।[1]

यद्यपि अवलोकित काल के धर्म में उदात्त-भावों का लोप, मानसिक एवं हार्दिक अधःपतन के लक्षण उसमें दिखाई देते थे।[2] आलोच्य काल का धर्म ऐसे पंडों, पुरोहितों द्वारा चालित था जो शास्त्र, धर्म एवं आध्यात्म तत्व से स्वतः अनभिज्ञ थे फिर भला ये जनता का मार्ग-दर्शन क्या करते अतः धर्म का बेहतर ह्रास हुआ। धर्म के मामले में त्याज्य बातों का ग्रहण और ग्रहणीय बातों का त्याग हुआ।

समस्त धार्मिक कार्य संस्कार, विवाह आदि ब्राह्मण द्वारा संचालित होते थे।[3] इस समय में एक विशेष बात यह हुयी कि तत्कालीन समाज का सम्पन्न वर्ग धर्म के प्रस्तुत स्वरूप को बनाए रखने में पूरा विश्वास रखता था क्योंकि ऐसे अंध धर्म की बदौलत ही उसका धन-वैभव और भोग-विलास सुरक्षित रह सकता था, जो सिखलाता है कि प्राणिमात्र का सुख-दुख, सम्पन्नता-दरिद्रता उसके अपने ही कर्मों का भोग है।[4]

1- डॉ० लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय: आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ० 90

2- डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा: रीतियुगीन काव्य, पृ० 43

3- डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ० 582 डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य, पृ० 41

4- उपरोक्त, पृ० 577, तथा 43

इस प्रकार इस युग में धर्म का कोई उदात्त रूप सामने नहीं लाया जा सका क्योंकि यह भोग-विलास तथा शोषण और दमन का युग था । जो भी हो अवलोकित काल में लोग विभिन्न प्रकार के देवी-देवताओं तथा धार्मिक कर्मकांडों में विश्वास रखते थे ।

तत्कालीन समाज में प्रचलित धर्म का स्वरूप निम्न प्रकार से था :

<u>शैव धर्म</u> :- उस समय शैव धर्म तथा वैष्णव धर्म इन दो धर्मों को प्रमुखता मिली जिसमें शैव धर्म के अन्तर्गत भगवान शिव की आराधना की जाती थी । भगवान शिव के रूप का चित्रण कवि ने इस प्रकार किया है जो नित्य, अनंत, भयरहित तथा आनंद से पूर्ण है जिसके सिर पर जटाजूट तथा चन्द्रमा सुशोभित हो रहा है और भाल पर त्रिनेत्र शोभायमान है । हाथ में डमरू तथा त्रिशूल है और अंग पर व्याघ्र के खाल का वस्त्र धारण किये हुए हैं । सारे अंग में भभूत लगा रखा है । ऐसे संकट हरने वाले, विघ्नविनाशक मंगलदायक भगवान शिव की जयकार की जाती रही है ।[1]

अद्वय अभय अनंत नित्य आनंद उमंडित ।
जटाजूट ससि भाल तीनि लोचन दुति मंडित ।।
कर त्रिशूल अरू डमरू व्याल भूषन अवखंडित ।
नृत्य प्रिय सितरंग अंग भभूति धमंडित ।।
अरधंग बाम कुंदन वरन विकट कोटि संकट हरन
जय किति उजागर गंगधर सोमनाथ मंगलकरन ।।

– सोमनाथ ग्रंथावली: माधव विनोद , पृ0 321 छं0 ।

श्रृंगारविलास, पृ0 279 छं0 1, शशिनाथ विनोद 509/46, , 510/47-48-49-50 मतिराम ग्रंथावली: रसराज, पृ0 101 छं0 1, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 111,

शैव धर्म को मानने वाले लोग बहुत कठोरता से तपस्या, पूजन आदि करते थे । ऐसे लोग सम्पूर्ण अंग में भस्म लगाते थे, अग्नि में तपने, वर्षा झेलने और शरीर को प्राकृतिक स्थिति के साथ अनुकूल रखकर तपस्या करने में विश्वास रखते थे ।

शिव का रूप लिंग के रूप में भी माना जाताहै अतः लिंगपूजा भी प्रचलित थी ।[2] संभवतः इसीलिए शैवधर्म के अनुयायियों को लिंगधारी कहा गया ।[3] शैव-धर्म के अनुयायी शिवरात्रि जो §माघ§ फरवरी के महीने में मनायी जाती थी बहुत धूम से मानते हैं ।[4]

<u>वैष्णव धर्म</u> :- शैव धर्म के विपरीत वैष्णव-धर्म अधिक लचीला होने के कारण इसका काफी प्रसार हुआ । विशेष रूप से द्वारिका मथुरा, जोधपुर, उदयपुर कोटा आदि में ।[4] वैष्णव धर्म के अन्तर्गत विष्णु तथा कृष्ण इन दो रूपों की आराधना की गयी है ।[6] कृष्ण भक्ति के द्वारा न केवल वैयक्तिक जीवन में सामान्य

1- ट्रेवर्नियर: कलेक्शन आफ ट्रवैल्स, भाग1, पृ0 102

2- जी0एन0 शर्मा: सोशल लाइफइनमेडीवल राजस्थान, पृ0 183-84

3- डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज, पृ0 111

4- तुजुक-ए-जहाँगीरी, अनुवादक आर. एण्ड बी. पृ0 361, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 270, आइन-ए- अकबरी, भाग1, पृ0 210

5- जी. एन. शर्मा: सोशल लाइफ इन मेडीवल राजस्थानपृ0 194-200 डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज , पृ0 624

6- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ. 581 छं. 22 सु. वि. पृ0 760 छं07, रसपीयूषनिधि, 22/28 पृ0 581 छं022, देव:भावविलास पृ03छं01, कुमारमणि:रसिक रसाल पृ01, मतिराम: सतसई सप्तक §मतिराम-सतसई§ सं0 श्याम सुन्दरदास, पृ0 117, मनूची:स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 333, डुबाएस;हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड, सेरेमनीज, पृ0553

भोगों का पश्चाताप करके अपने मन को भक्ति की उन्मुख करने का प्रयास किया है अपितु उसे मनुष्य-मात्र कोएक अनिवार्य भावना के रूप में भी स्वीकार किया है। यही कारण है कि आध्यात्मिक विचारों के प्रति उदासीन मनुष्यों की निंदा की गयी है :

राधा मोहन-लाल कौ जाहि न भावत नेह ।

परियौ मुठी हजार दस ताकी आंखिनि खेह ।।[1]

कृष्ण की उपासना राधा के साथ की गयी है, जबकि अन्य देवता अपनी पत्नी के साथ पूजे जाते हैं ।

राधाकृष्ण किसोर जुग, पग बंदौं जगबंद ।

मूरति रति श्रृंगार की, शुद्ध सच्चिदानन्द ।।[2]

शैव धर्म और वैष्णव धर्म के देवता के रूप भी भिन्न माने गये हैं । कवि ने वैष्णव-धर्म के अन्तर्गत आने वाले भगवान विष्णु के रूप सौन्दर्य का चित्रण इस प्रकार किया है- सांवले शरीर वाले भगवान विष्णु के नेत्र अंबर के समान लाल और बड़े हैं । उन्होंनें श्वेत वस्त्र धारण कियाहै तथा माथे पर मुकुट और भुजाओं में भुजबंद सुशोभित हो रहे हैं । विष्णु के हाथ में गदा और हृदय पर हार तथा कानों में सुन्दर कुण्डल शोभायमान हो रहे हैं ऐसे विष्णु के नाम लेने के लिए सिर झुकाकर उठकर हाथजोड़कर नमन करताहूँ ।[3]

1- मतिराम-मतिराम सतसई, पृ0 117

2- देव: भावविलास, पृ0 3, छं0 1, मतिराम: मतिराम-सतसई, पृ0117

3- अरू स्यामल गात अरून अंबर से नैन बड़े अनियारे ।
अति उज्जवल बसन मुकुट माथे पर सरसें भुजमूल बंदनि
कर लोनें गदा हार हिय श्रवननि कुंडल जोति अमंदनि ।
× × ×
उठि ठाढ़ौ है कर जोरि विष्णु के नामहि लै सिरनायौ।
- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, पृ0 581छ022

शक्ति पूजा : प्राचीन काल से ही शक्ति की पूजा प्रचलित थी ।[1] शक्ति की आराधनाशौर्य, क्रोध और दया की भावना से जुड़ी है, अतएव शक्ति को मातृदेवी , दुर्गा, काली, भवानी, राधिका आदि विभिन्न रूपों के प्रति श्रद्धा रखी जाती थी तथा आराधना की जाती थी। चूँकि मध्ययुगीन जीवन भय और युद्ध से अधिक जुड़ा हुआ था । अतः शक्ति के विभिन्न रूपों में शौर्य और क्रोध की भावना को अधिक बल दिया जाता था । कवि ने युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए जिस शक्ति(देवी) की उपासना की है वह इस प्रकार है :

जै जयंति जै आदि सकति जै कालि कपर्दिनी ।
जै मधुकैटभ छलनि जै महिष विमर्दिनी ।।
जै चमुंड जै चंड, मुंड भंडासुर खंडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज बिड्डाल बिहंडिनी ।।
जै जै निसुंभ सुंभछलनि भनि भूषन जै जै भननि ।
सरजा समत्थ शिवराज कहँ देहि बिजै जै जग- जननि ।

अर्थात् हे जयन्ती (दुर्गा का एक नाम) तुम्हारी जय हो । हे आदि शक्ति तुम्हारी जय हो । हे काली, हे कपर्दिनी, अर्थात् जटाजूट धारण करने वाली, तुम्हारी जय हो । हे मधुकैटभ को छल करने वाली, हे महिषासुर का मर्दन करने वाली, तुम्हारी जय हो । हे चामुण्डा हे चंड, और मुंड के नाम असुरों को

1- डॉ० एम० पी० श्रीवास्तव: प्राचीन भारत का सामाजिक, आर्थिक , धार्मिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृ० 30 , इलाहाबाद, 1988

मारने वाली , तुम्हारी जय हो । हे रक्तवर्ण वाली, रक्तबीज और बिड़ाल नाम के असुरों का विनाश करने वाली ,तुम्हारी जय हो । अन्ततः कवि कहते हैं कि हे निशुंभ और शुंभ नामके दानवों का दलन करने वाली, तुम्हारी जय हो, जय हो और आप समर्थ शिवराज को हे जगज्जननी, विजय दो ।[1]

अन्य देवियों में राधा की स्तुति की गयी है :

> दूजो नहिं देव, देव पूजों राधिका के पद,
> पलक न लाऊँ धरि लाऊँ पलकनि पै ।[2]

राधा के अतिरिक्त सरस्वती देवी की भी पूजा की जाती थी :

> तुही त्रिलोक्य माइ है । समुद्रजा सुभाई है।
> गुबिंद बृक्ष वासिनी । सरस्वती सुहासिनी ।।[3]

1- भूषण ग्रंथावली: पृ0 1-2 छं0 2, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, {सप्तम कथा},पृ0 685 छं0 30, पृ0 685 छं0 31, ,पृ0685 छं0 26, मतिराम ग्रंथावली पृ0 437 डुबाएस:हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 629 पृ0 114 कालीकिंकरदत्त, ... सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी ,पृ0 25

2- देव: देवसुधा पृ05 छं08, सुखसागर तरंग ,पृ0 50 छं0 20, देव दीपशिखा तृतीय भाग पृ0 66 छं0 120;कालीकिंकर दत्त: ...सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी,पृ0 25-26

3- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास,पृ0 808 छं0 22; मतिराम ,मतिराम रत्नावली, पृ0 120 छं0 117, देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 49, छं011; डुबाएस:हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज,पृ0 207,224, 613, 636 ।

इसी प्रकार जानकी (सीता) तथा रुक्मिणी के प्रति भी लोग श्रद्धा का भाव रखते थे ।[1]

इस प्रकार देवी को लोग अन्तर्जामिनी तीनों लोकों चल और अचल सभी जगह चौदहों भुवन में निवास करने वाली तथा भूत, भविष्य और वर्तमान सबकी ज्ञाता है इस रूप में देवी की वंदना की जाती थी :

श्री देवि देव समूह, सज्जन जूह, जीवन मूरि जू ।
चल अचल चौदह भुवन मै तुमही रही भरिपूरि जू ।
त्रैलोक अंतरजामिनी, जग-स्वामिनी, जस भूरि जू ।
अनुभूत भव सब भूत -भावी वर्तमान न दूरि जू ।।[2]

स्त्रियाँ गौरी-पूजन अपने इच्छित फल की प्राप्ति के लिए करती थी :

सासु ने बोलि बहू सों कहौ हित सों अपने अभिलाषनिपूरनि ।
है ससिनाथ यौं आजु को नेम अकेलियै पूजियौ गौरि की मूरति ।[3]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 50 छं0 19, पृ0 50 छं0 17; ट्रेवेर्नियर ट्रेवेल्स इन इंडिया, भाग 2, पृ0 150; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 224, 619; कालीकिंकर, वही, पृ0 64 छं0 66

2- देव ग्रंथावली: देवमायाप्रपंच, पृ0 215 छं0 15,

3- सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार विलास (चतुर्थ उल्लास) पृ0 288 छं0 11; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ049 छं0 14, रसविलास, पृ0 172 छं019; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 568

देवी-देवताओं के पूजन के लिए लोग मन्दिर जाते थे :

> दुर्गा के दरसन रस भीनौं । मंदर मांझ गयो परवीनौं ।
>
> गंध पुहुप अच्छित अनखंडित । तिनसौं पूजी हित सौं मंडित ।
>
> धूप आरती सजी नवीनी । बालभोग धरि बिनती कीनी ।।[1]

इन देवी- देवताओं के अलावा हिन्दू- संस्कृति में गणेश- पूजा के प्रचलन का भी उल्लेख मिलता है :

> सुमिरत पद, विपद हरत, पूजत सुर मुनि जनेस ।
>
> उलहत सुख सिद्धि, कहत जय जय जय गनेस ।[2]

सूर्य पूजा प्राचीन काल से ही प्रचलित थी ।[3] तत्कालीन समाज में भी सूर्य-पूजा का उल्लेख मिलता है।

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास पृ0 734 छं020-21, पृ0 655 छं0 39,; रसपीयूषनिधि, पृ0 81 छं0 6; सरकार, हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब पृ0 320, मनूची: स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 134

2- देव ग्रंथावली: देवमायाप्रपंच, पृ0 193 छं05, भूषण (राजमल बोरा), पृ0 13 छं0 2, भूषण ग्रंथावली: शिवराज-भूषण, पृ0 1 छं0 1,; सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, प्रथमोल्लास: पृ0 501 छं0 1,; मतिराम: मतिराम-सतसई, पृ0 401 छं0 391,; ललितलाम छं01, पृ0 299 छं02,; कालीकिंकरदत्त. ... सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 25, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 162, 631

3- डॉ0 रमेशचन्द्र मजूमदार, प्राचीन भारत, हिन्दी, अनुवाद पृ0 13

कवि ने सूर्य को प्रणाम किये जाने का उल्लेख किया है :

बाहिर कढ़िकर जोरिकै, रबि को करौ प्रनाम ।

मन इच्छित फल पाइकै, तब जैबो निजधाम ।[1]

आलोच्यकाल में कवियों ने अवतारवाद में विश्वास दिखाया है :

या कवि में अवतार लियौ तऊ तेइ सुभाय सिवाजीबली के ।

आइ धरयौ हरि तें नररूप पै काज करै सिगरे हरि ही के ।[2]

ये अवतार व्यक्ति के गुणों के आधार (अर्थात् सद्गुणों के होने पर देव-स्वरूप और खराब गुण होने पर असुर रूप) पर होता है ।

तत्कालीन समाज में लोगों को ऐसी धारणा थी कि तीर्थ-स्थानों की यात्रा करने से सारे पापों का नाश हो जाता है फलत: लोग तीर्थ यात्रा पर जाते थे तथा वस्त्र- आभूषण आदि अनेक वस्तुएं दान करते थे :

1- भिखारीदास ग्रंथावली: काव्यनिर्णय, पृ0 58 छं0 63; भूषण ग्रंथावली पृ0 2 छं0 3; राजमल बोरा: भूषण और उनका साहित्य, पृ0 14 छं0 3

2- भूषण ग्रंथावली: शिवराजभूषण, पृ0 46 छं0 282, पृ0 49 छं0 307, पृ0 36 छं0 313, पृ0 57 छं0 350, शिवाबवानी, पृ0 27, छं0 21 जगदीश गुप्त: रीतिकाव्य संग्रह , पृ0 53 छं0 14, राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य पृ0 20, सोमनाथ ग्रंथावली: अथरामकलाधर बालकांड, द्वितीय खंड, पृ0 441, छं01; कुमारमणि: रसिकरसाल, पृ0 1 छं0 2; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स, एण्ड सेरेमनीज, पृ0 616 ।

यौं बिचारि कैं धन्य न्हाइकै तीरथ सगरे ।
आयौं निज पुर मद्धि छाँडि पापनि के झगरे ।
ब्रह भोज करवाइ वस्त्र आभरन अनेकनि ।
दिए हिए मैं हर्षि सच्चिकैं परम बिबेकनि ।।[1]

अवलोकित काल में यज्ञ {होम} प्राचीन काल की भाँति प्रचलित थे :

राजसूय हयमेघ जइ करि नैंम सौं ।
जानैं कीनौं तृप्ति हुतासन प्रेम सौं ।।
द्विजनि दक्षिणा दई सहस्रनि गाय हैं ।
तप करि पालो धरनि सत्य अपनाय हैं ।।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ० 685 छं० 22, पृ० 720 छं० 10; देव ग्रंथावली, देव मायाप्रपंच, पृ० 217 छं० 37

3- सोमनाथ ग्रंथावली: राचचरित्र रत्नाकर{चतुर्थ सर्ग} पृ० 666 छं०30, दशमसर्ग, पृ० 898 छं० 87, नवति: सर्ग: पृ० 381 छं० 13, ब्रजेंदविनोद, पृ० 718 छं० 8, पृ० 788 छं० 80, सुजानविलास, पृ० 736 छं० 36, देव ग्रंथावली:देवमायाप्रपंच, पृ० 217 छं० 37, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 151

ईश्वर के प्रति आस्था धार्मिक नैतिकता का प्रमुख आधार है । ईश्वर के प्रति भय एवं प्रेम जैसे भाव उत्पन्न करके हो मनुष्य को भक्ति के क्षेत्र में प्रवेश कराया जा सकता है ।[1]

कवि ने ईश्वर के साथ होने वालो प्रोति को श्रेष्ठ माना है। ईश्वर के नाम-स्मरण का उपदेश देते हुए कवि ने कहा है :

हरि भजि लै मन मेरे भाई ।

हरि भजि निरमल भए बिकारी अब तेरी हूँ बारी आई ।[2]

ईश्वर भक्ति के मार्ग में आने वालो कुछ बाधक वस्तुओं के त्याग का उपदेश कवि ने दिया है । यथा धन-संग्रह वृत्ति की निंदा: धन-संपति को रक्षा एवं उसकी संवृद्धि के मोह- पाश में फंसा व्यक्ति पाप को ओर उन्मुख होता है अत: भारतोय धार्मिक नैतिक परम्पराओं में धन को क्षणिक कहकर व्यक्ति को अनैतिक कार्यों से बचने का उपदेश दिया गया है । क्योंकि धन-धाम इत्यादि के आकर्षण में लिप्त व्यक्ति इन भौतिक ऐश्वर्य को वस्तुओं का भोग करने के पश्चात् इस संसार से रिक्त हाथ चला जाता है । समस्त भौतिक वस्तुएं यहीं रह जातो हैं । इसीलिए कवि ने धन के प्रति आसक्ति न रखने का उपदेश दिया है :

1- घनानंद-ग्रंथावलो (प्रेम पत्रिका) सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं० 13, सोमनाथ: युक्तितरंगिणी- छं० 526

2- घनानंद ग्रंथावलो: (पदावलो), छं० 91

भोग भुलाइ संजोग डुलाइ के जोग लै लै सुनिलोग लरेई ।

भूपति यों धन भार भंडार गए गड़ि दाम सुधाम धरेई ।

देव कहैं दिन चारि के ख्याल मैं खेलि गए खल खोइ खरेई ।

काहू के संग कहू न गयो सब सेंत मरे अकसेत मरेई ।।[1]

अर्थ- संबंधी नैतिकता का प्रतिपादन करने वाले प्राचीन विचारकों का कथन है कि प्राप्त किये गये धन का दान करना ही उचित है, उसे भोग अथवा संग्रह में व्यय करना अनुचित है ।[2]

आध्यात्म -मार्ग में अन्य बाधा कवियों ने नारी-साहचर्य को माना है । इसलिए इन्होंने मनुष्य को नारी के प्रति विमुख होने का उपदेश दिया है :

मूरख तूं तरूनी-तन को भवसागर को तरनी अनुमान्यो ।

ऐसो डस्यो हरिनाम के पाठहि काठहि को हरि को जिय जान्यो ।।

इसके साथ ही मांस-मदिरा तथा रजस् एवं तमस् गुण से दूर रहने को कहा गया क्योंकि उपर्युक्त चीजें धर्म क्षेत्र में बाधक होती हैं ।[4]

1- देव ग्रंथावली: सुमिलविनोद, सं. लक्ष्मीधर मालवीय, पृ0 8 छं0 4

2- महाभारत (शान्ति पर्व) पंचम खण्ड, अनुवादक पण्डित राजनारायणदत्त शास्त्री, 26/28

3- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, रससारांश, छं0 479, सोमनाथ, ग्रंथावली, प्रथम खण्ड, रसपीयूषनिधि, पृ0 22 छं0 28

4- डॉ0 शकुन्तला अरोरा: रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 205 तथा 206

धर्म नैतिकता की स्थापना के लिए मन के कपटपूर्ण विचारों को दूर रखना चाहिए क्योंकि मन में निहितकपट ग्रंथियों को त्याग कर ही मनुष्य आत्मा को आवाज को सुन सकता है :

> तो मैं जो उठत बोलि ताहि क्यों न मिलै डोलि,
>
> खोलिए हिये में दिए कपट-कपाट है ।[1]

कपट के अतिरिक्त कपटी की संगति भी वर्जनीय बतायी गयी है क्योंकि वह कदापि अपना नहीं हो सकता फलत: उसके गलत साथ से भी धर्म के कार्य में बाधाआसकती है :

> दिनराज उदै न प्रतीची करै अहिराज तजै विष के तपने
>
> नहि काग निरामिष होत कबौं रहिराज मिलै न मिलै सपने ।
>
> कहि तोष करै अविवेकी बिबेक नहीं विषई हरि के जपने ।
>
> सखि मे जब होय तौ होंय कदापि पै होहिं नहीं कपटी अपने ।।[2]

मानव मन में विषयों की तृषा-रूप, रस, गंध, स्पर्शादि अनेक रूपों में हो सकती है। समस्त विषय सुखकर होते हुए भी अंतत: व्यक्ति के नाश का कारण होने के कारण निदंनीय है । इस प्रकार इस काल के कवि के शब्दों में रूप सौंदर्यादि विषयों में फंसा हुआ मन धर्मच्युत होकर इधर-उधर भटकता रहता है :

1- डॉ० नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ० 120

2- डॉ० सुरेन्द्र माथुर: कवि तोष और उनका सुधानिधि, छं० 57

रूप को रसिकु रसलंपट परस लोभी

राग हो सौं रँग्यो बसै बासु लै अड़ाइतो,

मारयो नहीं जातु बिनु मारे न डेरातु धरी

काम करे खैंटे छोटे बड़े सों बड़ाइतो ।

होइ जो हमारो कोई हितू हितकारी या सों

कहै समुझाय देव कुमति छड़ाइतो,

मानै न अनेरो मनु मेरो बहुतेरो कह्यो,

पूतु ज्यों कपूतु लरिकाई को लड़ाइतो ।।[1]

अवलोकित काल में तरह-तरह के अंधविश्वास तथा कर्मकांड प्रचलित थे जिसको व्यर्थ बताते हुए कवि ने कहा कि ईश्वर को विभिन्न कर्मकांडों से नहीं, अपितु भक्ति से ही प्राप्त ~~सेहो प्राप्त~~ किया जा सकता है :

कथा मैं न, कंथा मैं न, तीरथ, के पंथा मैंन

पोथी मैं, न पाथ मैं, न साथ की बसीति मैं

जटा मैं न, मुंडन न, तिलक त्रिपुंडन न,

नदी-कूप, कुंडन अन्हान दान- रीति मैं ।

पैठ- मठ-मंडल न, कुंडल कमंडल न

माला दण्ड मैं न देव देहरे की भीति मैं,

आपु ही अपार पारावार प्रभु पूरि रह्यो

पाइए प्रकट परमेसुर प्रतीति मैं ।।[2]

1- देव: देवसुधा, छं0 184

2- देव: देवसुधा, छं017, सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 658छं0 58 .

श्राद्ध जैसे धार्मिक आडम्बर के प्रति भी कवि ने खेद प्रकट किया है जिसमें मृत व्यक्ति के लिए व्यक्ति भोजन की सामग्री देता है किन्तु जीवन काल में व्रत आदि करके शरीर को दुर्बल बनाता है। जीवित शरीर की उपेक्षा करना और मृत होकर मिट्टी में मिले शरीर के लिए भोजन की व्यवस्था करना अगर दुर्बुद्धि नहीं तो क्या है ?

मूढ़ कहैं मरिकै फिरि पाइए, ऍाँ जु लुटाइये भौन-भरे को,
ते खल खोय खिस्यात खरे, अवतारू सुन्यो कहुँ छार परे को।
जीवत तौ व्रत भूख सुखौत, सरीर महा सुर-रूस हरे को,
ऐसो असाधु असाधुन की बुद्धि, साधन देत सराध मरे को।[1]

इस प्रकार वाह्याडंबर और मन में निहित कपट-ग्रंथियों का त्याग कर ही मनुष्य आत्मा की आवाज को सुन सकता है और ईश्वर के निकट पहुँच सकता है।[2]

दार्शनिक दृष्टि से सत्य एक सत्तात्मक तत्व है। विश्व की समग्र सत्ताओं का आधार सत्य माना जाता है। सामाजिक दृष्टि से सत्य से अभिप्राय निष्कपट व्यवहार से है जिसमें किसी प्रकार का विकार (दोष) नहीं होता।

1- देव हिन्दी नवरत्न, मिश्रबन्धु, पृ० 22।

2- डॉ० नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ० 120

इस लिए कवि ने यह शिक्षा दी कि धर्म के मार्ग पर चलने के लिए सत्य का अनुकरण करना चाहिए क्योंकि यह एक ऐसा शाश्वत तत्त्व है जो कभी नष्ट नहीं होता और सत्य ही चिरंतन वस्तु है, उसके अतिरिक्त सब शून्य है:

एक तैं अनेक कै परारधि लौं पूरि करि,

लेखौ करि देखो एक सांचो और सून है ।[1]

धर्म के मार्ग या अन्य किसी भी कार्य में उचित मार्ग-दर्शन केलिए एक पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता होती है जिसके लिए कवि ने गुरू के महत्त्व को स्वीकार करते हुए यह कहा है कि गुरू के बिना जीवन में दृढ़ता एवं विवेक नहीं आ सकता :

गुरूजन जावन मिल्यौ न भयौ दृढ़ दधि,

मथ्यौ न विवेक-रई "देव" जो बनायगो ।[2]

<u>दार्शनिक विचार</u> :- तत्कालीन कवियों ने दार्शनिक विचार भी व्यक्त किये हैं ।कवि का कहना है कि एक मात्र ईश्वर (ब्रह्म) सत्य है बाकी सारा जगत अर्थात् संसार झूठा है :

जग झूठौ प्रभु सत्य है यों निरबेदु बिचार ।

तन मन दुख तें छीनता होति सु ग्लानि अपार ।।[3]

एक मात्र ईश्वर ही सत्य है बाकी संसार झूठा है इस सर्वमान्य सत्य को जानते

1- डॉ० नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ० 130

2- मिश्रबन्धु, (देव) हिन्दी- नवरत्न, पृ० 222

3- सोमनाथ ग्रंथावली: श्रृंगार (प्रथमोल्लास)पृ०271 छं० 20, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज , पृ० 609

हुए भी मनुष्य सांसारिक माया-मोह में बंधा रहता है और इसी अज्ञानता के कारण वह ईश्वर के स्वरूपको नहीं समझ सकता । कवि ने माया में फंसे हुए मनुष्य को जो चित्रण किया है वह अतुलनीय है: मनुष्य- शरीर की रचना बड़ी बारीकी से बिने हुए जरतारी के झीने वस्त्र की भाँति विधाता ने की है। इसकी समता मकड़ी के जाले से की जा सकती है । ओस के हार सा मकड़ी के समान यह शरीर है। माया-रूपी मकड़ी जरतारें यानी झीने रंगों को धागों और ओस-बिन्दुओं, जैसे क्षण-भंगुर ताने-बाने से बुनती है। वही माया मनुष्य को भी ऐसी चक्कर में डाल देती है कि वह घोर वृष्टि में कागज की छतरी लगाकर पत्थर की नाव में बैठकर वर्षा की उफनती नदी पार करना चाहता है यही उसका मोह है, अज्ञान है, मिथ्या भ्रम है, वह अज्ञानी ऐसे अवसर पर राम रूपी नौका और सत्य की छतरी का उपयोग न कर उपर्युक्त मायाजन्य अज्ञान में ग्रस्त हो विनाश के पथ पर अग्रसर होता चला जाता है । वह कैसा मूर्ख है कि पतिंगों के पंखों को अगल-बगल खोंसकर उड़कर आकाश में सूर्य का साथी बनना चाहताहै। वाह्याडम्बरों के तुच्छातितुच्छ साधनों से सर्वोच्च परम पद पाने का प्रयास करने की चेष्टा करता है । वह यह भी नहीं जान पाता कि उसका नश्वर शरीर मोम के बने घर जैसा है जिसमें मन रूपी मक्खन को मुनि काम-क्रोधादि के आग्नेय अर्थात् अग्नि निर्मित आसन पर विराजमान हो इस मोम के शरीर को इधर-उधर घुमाता फिरता है उसकी स्थिति कितने क्षणों की हो सकती है, वह इसे भूला हुआ है। नवनीत-सदृश जीवन कोकाम-क्रोध के तपते हुए आसन पर आसीन कराकर सुख-शान्ति और शीतलता की अनुभूति कोई कैसे कर सकताहै। इस प्रकार माया-जनित मिथ्या [illegible] को सत्य मानने

को भूल में पड़े मानव को इस रूपक द्वारा कवि ने बड़ी मार्मिक चेतावनी दी है ।[1]

> बाढ्यौ बन्यौ जरतार को तामहिं, ओस कौ हार तन्यो मकरी ने ।
> पानी में पाहन पोत चल्यौ चढ़ि, कागद की छतुरी सिरदीने ।।
> काँख में बांधिके पाँख पतंग के, देव ससुंग पतंग को लीने ।
> मोम के मंदिर माखन कौ मुनि बैठ्यौ हुतासन आसन दीने ।।

इस प्रकार अज्ञानता (माया के मोह) में फँसा व्यक्ति किसी भी प्रकार से अंधकार से बाहर नहीं निकल पाता और वह मकड़ी के जाले के समान उसी में उलझता जाता है:

> पै अपने ही गुन बँधे, माया को उपजाइ ।
> ज्यों मकरी अपने गुननि, उरझि उरझि मुरझाइ ।[2]

कर्मों के अनुसार पुर्नजन्म को माना गया है ।[3]

कवियों ने मनुष्य को दुर्गुणों से बचाने और धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझाने का प्रयास किया है किन्तु विलासिता और कमशिक्षा होने

1- –देव: दीपशिखा, तृतीय भाग, पृ0 65, छं0 101, देव: देवसुधा पृ09 छं0 19, देवग्रथावली: देव मायाप्रपंच, पृ0 199 छं0 61, पृ0 205 छं037, पृ0 207 छं0 48, पृ0 210 छं0 69; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 403

2- देव ग्रंथावली: देवमाया प्रपंच, पृ0216 छं0 25; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 403-407

3- देव ग्रंथावली; देव मायाप्रपंच पृ0 221 छं0 65

होने के कारण लोग अंधविश्वासी होते जा रहे थे । धर्म का क्रूर और सबसे बिगड़ा स्वरूप तो हमें बलि - प्रथा के रूप में दिखाई देती है जिसमें न केवल पशु- बल्कि मनुष्य को भी बलि दी जाती रही है :

इहाँ होतु बलिदान, नर-पसु पुंजनि के सदा ।[1]

धर्म का ह्रास इस कदर होने लगा कि एक बार तो ऐसा महसूस किया जाने लगा कि जैसे समाज में बढ़ती अनीति और दुराचार के कारण देवता भी चुप होकर बैठ गये :

गौरा गनपति आप औरंग को देखि ताप,
आपने मुकाम सब भाजि गए दबको ।[2]

धर्म के मार्ग से विचलित जनता शांति पाने के लिए साधु फकीरों की ओर बढ़ने लगी ।[3] परिणाम यह हुआ कि अधिक से अधिक लोग साधु बनने लगे । साधुता उनके लिए आसान बात हो गयी "मुई नारि घर संपति नासी, मूँड मुंड़ाय भये सन्यासी वाली बात तत्कालीन युग में और भी सार्थक सिद्ध हुयी ।[4]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : माधव विनोद, पृ0 401 छं0 44, पृ0 401 छं0 46, सुजान विलास, पृ0 638 छं0 45, पृ0 638 छं0 46, ब्रजेंद विनोद, पृ0654 छं0 58; डुबाएस ।

2- राजमल बोरा : भूषण और उनका साहित्य- पृ0 20

3- राजमल बोरा : भूषण और उनका साहित्य , पृ0 20

4- डॉ0 कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य, पृ0 39

संक्रान्ति - युग में बेकार व्यक्तियों का साधु जीवन व्यतीत करना समाज को अन्य प्रकार की अशान्तियों से उन्हें बचाता था। साथ ही साधु- जीवन व्यतीत करने में कोई धार्मिक बाधा भी नहीं थी, कोई भी व्यक्तिसाधु होकर जनता पर अपना आध्यात्मिक प्रभुत्व स्थापित कर सकता था। अतः हिन्दुओं केलिए बैरागी और गोसाईं और मुसलमानों केलिए फकीर हो जाना आसान बात थी क्योंकि इस रूप में उन्हें कम से कम खाना तो मिल ही जाता था।[1]

भारत धार्मिक सम्प्रदायों के प्रगति एवं धार्मिक सम्प्रदायों के मतभेद का विशाल क्षेत्र रहा है।[2]

सूफी शब्द अरबी के सूफ शब्द से निकला है, जिसका अर्थ है "ऊन"।[3] अरब देश में पैगम्बर मुहम्मद साहब तथा अन्य सन्त सात्विकता का प्रतीक ऊन धारण करते थे फलतः ईरान में इन रहस्यवादी साधकों को पशमीनापूश (ऊन पहनने वाला) कहा जाता था।[4]

सूफीवाद का सिद्धान्त : नवीं सदी में जब सूफी मत का धर्म में रूप में आविर्भाव हुआ तो इसके लिए कुछ नियमों तथा सिद्धान्तों का

1- मेजर स्लीमैन: रैम्बिल्स एण्ड रिकलेक्शन्स, पृ0 370 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय: आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ0 97 डॉ0 कृष्ण चन्द्र वर्मा, रीतियुगीन काव्य पृ0 4।

2- मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 7।

3- रामपूजन तिवारी, सूफी मत, साधना और साहित्य, पृ0 169

4- ई0 जी0 ब्राउन, लिट्रेरी हिस्ट्री ऑफ पर्शिया, पृ0 417

प्रतिपादन किया गया जिसमें तत्व-चिंतकों और दार्शनिकों ने सूफी सिद्धान्त की विवेचना की तथा सूफी दर्शन को एक रूप दिया जिसमें परमात्मा आत्मा तथा सृष्टि आदि की विवेचना की तथा सूफियों के चरम लक्ष्य और गुरू के महत्व की व्याख्या निम्न प्रकार से की है।

परमात्मा सनातनपंथी इस्लाम के अनुसार एक है जो अपने आपमें पूर्ण है, सर्वज्ञाता, सर्वशक्ति तथा सर्वव्यापी है ।[1] उसका ज्ञान कर्म तथा स्वभाव जीव से बिल्कुल भिन्न है तथा परमात्मा आकाश और पृथ्वी की ज्योति(नूर) है ।[2] आले में रखे हुए दीपक के की तरह प्रकाश है, परमात्मा जिसे चाहता है उसे प्रकाश की ओरअग्रसित करता है ।[3] आत्मा को सूफी साधकों ने ईश्वरीय अंश स्वीकार करते हुए कहा कि वह सत्य-प्रकाश का अभिन्न अंग है, परन्तु मनुष्य के शरीर में अपने अस्तित्व को खो बैठता है ।[4] अतः उसका सतत् प्रयास अपने उद्गम स्थान में मिल जाना है इसलिए सूफी का मुख्य कर्तव्य है कि वह दानिया (परमात्मा के एकत्व का ध्यान) जिक्र (परमात्मा का स्मरण) तरीका (सूफीमार्ग) में लगा रहे, तभी परमात्मा के साथ एकमेव होना सम्भव है ।[5] जगत के संबंध में सूफी साधकों का मत हिन्दू सन्तों के विपरीत है सूफी साधक जगत को माया से पूर्ण नहीं देखते थे ।[6] मनुष्य के विषय में

1- रामपूजन तिवारी: सूफी मत साधना और साहित्य, पृ० 169
2- के०ए० निजामी: रिलिजन एण्ड पालिटिक्स इन थर्टीयथ सेन्चुरी पृ० 50
3- ताराचंद: इनफ्लुयेन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ० 72
4- वही, पृ० 76
5- रामपूजन तिवारी: सूफी मत साधना और साहित्य, पृ० 255
6- ताराचंद: इनफ्लुयेन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ० 76

सूफी साधकों का विचार है कि मनुष्य परमात्मा के सभी गुणों को अभिव्यक्त करता है ।[1] इस प्रकार परमात्मा के सभी गुण मनुष्य को हृदय को जानना है ।[2] हिन्दू संतों की भाँति सूफी संतों की भी यही धारणा है कि बिना आध्यात्मिक गुरू के सूफी साधक कुछ भी नहीं प्राप्त कर सकता है ।[3]आध्यात्मिक गुरू पीर अथवा शेख पर ही सारा सूफी सिद्धान्त आधारित है ।[4] सूफी साधक परमात्मा में पूर्ण लय हो जाने जिसमें साधक जागतिक प्रपंचों से अलग होकर अपने अस्तित्व को लय कर देना ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति मानते हैं ।[5]

भारतीय परिपार्श्व में सूफीमत ने थोड़े समय में ही ख्याति प्राप्त की और सूफी सिलसिला तथा खनकाह का विस्तार मुल्तान से लखनौती तथा पंजाब से देवगिरी तक हो गया ।[6]

भारत वर्ष में सबसे लोकप्रिय चिश्ती सिलसिला के प्रवर्तक ख्वाजा इसहाक शामी चिश्ती माने जाते हैं[7] जो एशिया से आकार खुरासान के चिश्त नामक स्थान पर बस गये इस लिए यह चिश्ती कहलाया ।[8] चिश्ती सम्प्रदाय के

1- ताराचंद: इनफ्लुयेन्स ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर, पृ0 76
2- वही,
3- आर0 ए0 निकोल्सन: आइडिया ऑफ पर्सनाल्टी इन सूफिज्म पृ0 388
4- ताराचन्द्र पृ0 81
5- रामपूजन तिवारी, सूफी मत साधना और साहित्य पृ0 297
6- निजामी: रिलिजन एण्ड पॉलिटिक्स इन थर्टीयथ सेन्चुरी पृ0 50
7- जे0ए0 सुभान: सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ0 175 , तिवारी वही, पृ0 543 ।
8- जे0ए0 सुभान: वही, पृ0 175

अजमेर के मुइनुद्दीन चिश्ती इतिहास में सुप्रसिद्ध सूफी संत हुए ।[1] अट्ठारहवीं शताब्दी के प्रमुख सूफी संत जिनके जन्म के बारे में पता नहीं है किन्तु मृत्यु और स्थान का उल्लेख मिलता है, यह निम्न प्रकार से हैं शाह अबुल मुवाली 1704 सहारनपुर, अब्दुर रशीद, 1709 जालन्धर, सैय्यद मुहम्मद सईद मीरान भीख, 1729 कोहरम कलीमुल्लाह 1729 दिल्ली, शेख निजामुद्दीन 1730 औरंगाबाद, शेख मुहम्मद सलीम सवोरी 1739 लाहौर, शाह ~~थी:~~ बरकी 1757 जालन्धर, शेख अलाउद्दीन 1759 अमरोहा, शाह लतफुल्लाह, 1773, जालन्धर, मौलाना फखरूदीन 1785 दिल्ली: सैय्यद अलीमुल्लाह 1786 जालन्धर, शेख नूर मुहम्मद 1791 भावालपुर स्टेट, शेख मुहम्मद सईद शारापुरी 1799 लाहौर ।[2]

चिश्ती सम्प्रदाय के सूफी साधक फकीरी जीवन पर जोर देते थे जबकि सुहरावर्दी (जो चिश्ती सिलसिला के बाद आया) के सूफी साधक सुखमय जीवन पर बल देते थे । ये उपवास तथा भूखे रहकर आध्यात्मिक साधना को अनावश्यक बताते हैं ।[3]

सुहरावर्दी सिलसिला के प्रवर्कक शेख बहाउद्दीन जकारिया थे ।[4] सुहरावर्दी सिलसिला की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इनमें उत्तराधिकार का नियम वंशानुगत था ।[5]

1- जे०ए० सुभान, वही पृ० 176

2- जे०ए० सुभान: सूफी सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ० 356

3- निजामी: रिलिजन एण्ड पॉलिटिक्स इन थर्टीयथ सेन्चुरी पृ०222

4- वही, पृ० 221

5- वही, पृ० 224

अट्ठारहवीं शताब्दी में कुछ प्रमुख संत सुहरावर्दी सिलसिला के हुए जिनके नाम इस प्रकार है :

शेख अब्दुर रहीम 1703 काश्मीर, शेख जान मुहम्मद 1708 लाहौर, शेख हमीद 1752 लाहौर, शेख करमुल्लाह कुरेशी 1758 शाहजहाँपुर, शेख सिकन्दर कुरेशी 1799 लाहौर।[1]

इसके बाद कादिरी सिलसिला लोकप्रिय हुआ भारत मे इसके प्रवर्तक मुहम्मद गौस थे।[2]

कादिरी सिलसिला के सूफी साधकों में शेख दाउद किरमानी तथा शेख अबुल मा अली के नाम विशेष उल्लेखनीय है।[3] अट्ठारहवीं शताब्दी के कादिरी सम्प्रदाय के जो प्रमुख सन्त हुए उनके नाम मृत्यु तिथि तथा स्थान इस प्रकारहै: सैय्द मुहम्मद फरीदी 1701, लाहौर, शेख रहीम दाद 1703, मीलवाल, शाह रीढ़ा 1706, लाहौर, शाह कंत 1707 लाहौर, शेख सदउद्दीन 1708 लाहौर, शाह दरगाही 1710 लाहौर, शेख ताज महमूद 1711 मीलोवाल, शेख, अब्दुल हमीद नवाशाही 1713 मीलोवाल, सैय्यद नूर मुहम्मद 1714 हुजरा, शेख कामीश . 1715 -चानीशाईनपाल ; - , हाफिज बरर्बुरदार नवाशाही 1718, चानीशाईनपाल, शेख फतह मुहम्मद गयासुद्दीन 1718 किराना, सैय्यद अब्दुल बहाव, 1719 लाहौर, ख्वाजा हाशिम दरियादिल नवाशी 1721 -चानी· सैय्यद अहमद शमाकुल हिन्दी जिलानी 1722 कोटला, शाह शराफ, 1723 लाहौर, शेख

1- जे०ए० सुभान, सूफी सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ० 36।

2- तिवारी: सूफी मत, साधना और साहित्य, पृ० 479

3- यूसुफ हुसैन ग्लिम्पसेज ऑफ मेडिवल इण्डियन कल्चर, पृ० 54

इसमातुल्लाह नवशाही 1725 लाहौर, शेख अहमदबेग नवशाही 1727 सियालकोट, शाह इनायत 1728 लाहौर, शेख जामलउल्लाह नवशाही, 1729 शाह, मुहम्मद गौथ जिलानी 1739 लाहौर, शेख अब्दुरहमान ... 1740 तेरी सैयद अब्दुल कादिरशाह गादा, 1741 लाहौर, शेख फरीद नवशाही, 1745 लाहौर सैयद शाह हुसैन, 1749 हुजरा, मियाँ रहमतउल्ला, 1753 हुजरा, शेख नसरतउल्ला नवशाही 1756 हुजरा, मीर अली, शाह, 1757 कुसूर, शेख सादुल्ला नवशाही, 1761 कुसूर, शेख मुहम्मद अजीम 1767 लाहौर, 1770 शेख मसाहिब खान, 1776 लाहौर, शेख जान मुहम्मद 1791 वकावल (लाहौर) शेख अब्दुल्ला बिलोची 1797 लाहौर ।[1]

कादिरी सम्प्रदाय के लोग अपनी टोपी में गुलाब का फूल लगाते थे ।[2] क्योंकि गुलाब का फूल पैगम्बर का प्रतीक माना जाता था ।[3]

भारत में नक्शबंदी सिलसिला का प्रमुख स्थान है जिसके प्रवर्तक ख्वाजा बहाउद्दीन माने जाते हैं ।[4]बहाउद्दीन तरह-तरह के नक्शे आध्यात्मिक तत्वों के संबंध में बनाते थे और अनेक रंगों से भरते थे इसी लिए उनके अनुयायी नक्शबंदी कहलाये ।[5]

1- जे0 ए0 सुभान: सेन्ट एण्ड श्राइन्स, पृ0 366 से 369

2- जे0 ए0 सुभान सूफी सेन्ट एण्ड श्राइन्स पृ0 181

3- तिवारी, सूफी मत साधना और साहित्य, पृ0 480-81

4- सुभान, पृ0 187

5- सुभान, पृ0 187, तिवारी, 492-93

भारत में नक्शबंदी सिलसिला का प्रचार शेख अहमद फारूकी सरहिन्दी ने किया।[1] इस सम्प्रदाय के अट्ठारहवीं शताब्दी में हुए प्रमुख संत की मृत्यु तिथि नाम और स्थान इस प्रकार है: मखदूम हाफिज अब्दुला गाफूर 1701 काश्मीर ,शेख मुहम्मद मुराद 1718 कश्मीर, सैयद नूर मुहम्मद 1723 बदायूँ ख्वाजा मुहम्मद सादिक 1724 सरहिंद ख्वाजा अब्दुल्ला बल्खी 1726 काश्मीर ख्वाजा अब्दुल्ला बुखारी 1728 काश्मीर, वाजानिस्टूर रहमत 1729 सरहिंद शेख मुहम्मद फारूख, 1731 सरहिंद, हाजी मुहम्मद अफदल 1733 सरहिंद, हाजी मुहम्मद मुशान, 1734 दिल्ली, शेख मुहम्मद कादिल 1739पटियाला ख्वाजा हाफिज सइदुल्ला 1740 शाहजहानाबाद, शाह गुल्शन, 1742 दिल्ली, नूरूइदीन मुहम्मद आफताब 1743 काश्मीर , शेख हाजी मुहम्मद सईद, 1752 लाहौर, ख्वाजा अब्दुस सलीम 1758 काश्मीर ख्वाजा मुहम्मद आजम दीमारी, 1771 काश्मीर, ख्वाजा कमलुइदीन 1774 काश्मीर, ... जान ए जाना मजहर 1780 दिल्ली, मौलवी अहमदउल्ला, 1783 पानीपत, शेख मुहम्मद ईशान, 1791 दिल्ली, मौलवी अली मुल्लाह, 1796 गंगोह, मौलवी, सनाउल्लाह, 1797 पानीपत ।[2]

सूफी संतों ने अपने शिष्यों में समाज सेवा सद्व्यवहार और क्षमा आदि गुणों पर जोर दिया ।[3]

मुसलमान भी हिन्दुओं की भाँति तीर्थ आदि करने में विश्वास रखते थे जिसे हज़ कहते है। इनका तीर्थ स्थान पवित्र मक्का है ।[4]

1- तिवारी, पृ0 495

2- जे0ए0 सुभान, पृ0 371-372

3- ए रशीद: सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मीडिवल इंडिया पृ0180

4- पी0 थॉमस: फेस्टेवल एण्ड हॉलीडेज आफ इंडिया, पृ0 46

तत्कालीन समय में कुछ धर्म सुधारक संत हुए यथा रामचरणदास जी । धर्म की स्थिति संतोषजनक नहीं थी । व्रत, उपवास, तीर्थ, पूजा प्रतिष्ठा आदि के नाम पर धर्म भीरू जनता को ठगा जाता था या डराया जाता था । ऐसे आंतक के विक्षुब्ध वातावरण को शुद्ध करने के लिए ऐसी विभूति की आवश्यकता थी जो युग की आवश्यकता को समझे और पथ भ्रष्टों को सच्चा मार्ग दिखाये ।[1]

भाग्यवश 1718 ई0 में जयपुर राज्य के अन्तर्गत सोड़ा (सूरसेन) नामक गाँव में एक बीजावर्गी वैश्य कुल में राम चरण जी का जन्म हुआ । इनके पिता का नाम बखतराम तथा माता देउजी थीं । इनके नक्षत्रों से ज्योतिषियों ने यह बताया कि नवजात बालक या तो सम्राट होगा या महान योगी ।[2]

रामचरण जी के गुरू के नाम कृपाराम था ।[3] एक समय रामचरण जी का अपने गुरू कृपारामजी की साथ गलता के मेले में जाने काअवसर मिला। वहाँ सहस्रों साधु एकत्रित थे जिनकी भीड़-भाड़ को देखकर रामचरण जी का मन घबराया, परन्तु गुरू के द्वारा राम-स्मरण का उपदेश सुन इन्हें शांति हुयी । यहाँ से वे विरक्त वेश में वृन्दावन गये, परन्तु एक साधु ने उन्हें फिर मेवाड़ लौटजाने की सलाह दी और आदेश दिया कि लोक कल्याण में लगकर साधारण

1- गोपीनाथ शर्मा: राजस्थान का इतिहास, पृ0 518

2- स्वामी लालदास, रामचरण जी परची, गुरू लीला विलास पद्य 44, रामचरणजी परची, पद्य 30-32 (गोपीनाथ शर्मा: वही)

3- ब्रह्म समाधि लीन जोग, पद्य 33-34 श्री राम स्नेही सम्प्रदाय संपा0 केवल स्वामी पृ0 8-11 (गोपीनाथ शर्मा वही, पृ0 519) ।

जनता का उद्धार करना वास्तविक धर्म है । इस प्रकार का निर्देशन प्राप्त कर वे भीलवाडा पहुँचे । यहाँ लोग मूर्तिपूजक थे तथा सगुणोपासना में विश्वास करते थे । स्वामी जी ने निर्गुण उपासना तथा सभी के प्रति प्रेम भावना का उपदेश देना शुरू किया । अनेक नर-नारी उनके उपदेशों को सुनकर मुग्ध हो गये और उनकी एक शिष्य मण्डली बन गयी । यहाँ दस वर्ष रहकर स्वामी जी ने साधना की और उसका लाभ अपने शिष्यों को भी दिया । किन्तु सगुणोपासना में विश्वास करने वाले व्यक्ति स्वामीजी के विरोधी बन गये और उनकी हत्या के षडयंत्र रचने लगे । फलत: विरोधियों को प्रसन्न रखने केलिए स्वामी जी ने भीलवाड़ा छोड़ दिया और वहाँ से ढाई मील दूर कुहाड़े गाँव गये जहाँ "रामधुन" की ध्वनि ने सहस्रों की संख्या में लोगों को आकर्षित किया। थोड़े समय के बाद शाहपुरा से निमंत्रण आने पर वे वहाँ चले गये जहाँ रामस्नेही सम्प्रदाय तथा मठ की स्थापना की तथा अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों को "अणर्भवाणी" के रूपमें रूप में अवतरित किया। सहस्रों अनुयायियों के कल्याण मार्ग के सृजन के बाद स्वामी का देहावसन 1798 ई0 में हो गया ।[1] इस प्रकार रामचरण जी ने घूम घूमकर जनता को सद्मार्ग दिखाने मे तथा धर्म के वास्तविक स्वरूप को समझाने में मदद की ।

1- रामचरण जी परची छ0 51-53, अणर्भवाणी, पृ0 997-98 श्रीरामस्नेही सम्प्रदाय वैद्य केवल स्वामी आदि द्वारा संपादित पृ0 12-26 ﴾ गोपी वही﴿ ।

बाबा किनाराम :- बाबा किनाराम का जन्म वर्तमान वाराणसी जिले की चंदौली नामक तहसील के रामगढ़ नामक गाँव के एक रघुवंशी क्षत्रिय- कुल में किसी नामक व्यक्ति के घर सन् 1740 ई0 में हुआ था ।[1] और इनका देहान्त सन् 1787 ई0 में हुआ था । बाबा किनाराम ने देश-विदेश का भ्रमण किया और जनता के कल्याण में अपना जीवन लगा लिया । बाबा किनाराम ने सवंत् 1818 मेंबाबाकालूराम से दीक्षा ली ।[2]

बाबा किनाराम की जो रचनाएं उपलब्ध हैं उनमें " विवेक सार" सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त गीतावली तथा रामगीता नामक छोटे-छोटे संग्रह ग्रंथ भी है जिसमें बाबा राम जी के अघोर पंथ के अनुयायी होने का संकेत मिलता है । अन्य ग्रन्थ "रामरसाल" रामचपेटा, तथा राम मंगल नामक तीन छोटे-छोटे ग्रन्थों से इनके वैष्णव मत का परिचय मिलता है ।[3]

बाबा किनाराम से ग्रंथों को देखने से पता चलता है कि इसकी रचना सं01812 में उज्जैन नगर के निकट प्रवाहित होने वाली शिप्रा नदी के तट पर किसी मंगलवार के दिन और अभिजित नक्षत्र में हुई थी । इसमें साधु प्रसाद का फलस्वरूप अपना अनुभव दिया गया है ।[4]

बाबा किनाराम ने "अनुभव" की परिभाषा देते हुए कहा है " अनुभव वही है जो सद् विचार व भावना में परिणत हो गया जान पड़े और जिसके

1- दैनिक आज , वाराणसी , 26 नवम्बर सन् 1953 ई0

2- आचार्य परशुराम चतुर्वेदी: उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 690

3- वहीं, पृ0 694

4- बाबा किनारामकृत, विवेक सार, पृ0334

अनुसार "सत्यशब्द" को ग्रहण करके संसार के पार जाया जा सके ।[1]

किनाराम को आध्यात्मिक अनुभव, क्रमश: "वैष्णव मत" तथा अवधूत मत का सार ग्रहण करता हुआ अन्त में "अघोरपंथ" को विशिष्ट विचार-धारा द्वारा पुष्टि प्राप्त कर चुका था और वह इन सभी के समन्वय पर आधारित था ।[2] बाबा किनाराम घूम-घूम कर लोगों को सेवा- सुश्रुषा करते रहे और लोगों को अध्यात्मक का ज्ञान बाँटते रहे । बाबा किनाराम ने बताया कि विश्व केआत्ममय होने तथा आत्म- स्थिति के रक्षार्थ दया, विवेक, विचार तथा सत्संग के द्वारा जीवन यापन को चार विधियां बतलायी गयी हैं ।[3]

दीन- दरवेश

संत दीनदरवेश उन लोगों में थे जो परिस्थिति के आ पड़ने पर अपने जीवन में कायापलट ला दिया करते हैं । इनका जन्म उदयपुर में गुडबी नामक गाँव में बताया गया जहाँ सं0 1810 में ये उत्पन्न हुये ।[4]

1- बाबा किनाराम कृत, गीतावली, पृ0 12

2- परशुराम चतुर्वेदी, उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 695

3- वही, पृ0 694

4- परशुराम चतुर्वेदी : उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 750

ये "ईस्ट इंडिया कम्पनी" की सेना में मिस्त्री के काम करते थे। वहाँ पर इन्हें गोला लगने से इनकी एक बांह कट गयी जिससे ये निकाल दिये गये फलत: ये साधु-फकीरों की के साथ सत्संग करने की ओर उन्मुख हुए।[1] इनकी रचनाओं में भजन, भड़ाका, तत्वसार"भ्रमतोड़ " ध्यान परचे और चेतावाणीसर" के नाम दिये गये मिलते हैं।[2]

संत दीनदरवेश की रचनाओं को देखने से पता चलता है कि उनके भी वर्ण्य विषय प्राय: वे ही है जो अन्य संतों की कृतियों में पाये जाते हैं। उन्हें सरल स्वच्छन्द जीवन, विश्व-प्रेम ईश्वर भक्ति, परोपकार करना पसंद था। साथ ही इन्होंने हिन्दू तथा मुस्लिम धर्मों के अनुयायियों के पारस्परिक विद्वेष और झगड़ों की व्यर्थता पर भी कहा है और बतलाया कि वास्तव में ये दोनो एक समान ठहराये जा सकते है :

हिन्दू कहें सो हम बड़े, मुसलमान कहे हम्म:
एक मुंग दो झाड़ हैं, कुण जादा कुणकम्म।
कुण ज्यादा कुल कम्म, कबो करना नीट कजिया
एक भजत हो राम, दूजो रहिमन से रजिया
कहे दीन दरवेश दोय सरिता मिल सिंधू
सबका साहेब एक,एक हीमुस्लिम हिन्दू।

1- ब्रजरत्नदास: खड़ी बोली हिन्दी साहित्य काइतिहास काशी सं0 1995, पृ0 161

2- शोध पत्रिका साहित्य संस्थान उदयपुर, अप्रैल, 1963 ई0पृ0 119,

3- अनवर आगेवान, सॉई दीन दरवेश, अहमाबाद सं0 2009 पृ0 15

इन्होंने इसी शैली (कुंडलियां) में सर्व साधारण को जीवन की क्षण भंगुरता के प्रति सचेत किया है, कर्मवाद का महत्व दिखलाया है तथा कहा कि जो कुछ भी होता है वह करतार के किये से होता है। इनकी प्रेरणा के बिना एक साधारण पत्ता तक भी नहीं हिलता।[1]

इनकी मृत्यु चंबल नदी में स्नान करते समय सं0 1890 में इसी नदी में डूबकर हुयी। इनका समय अट्ठारवीं शताब्दी से लेकर उन्नीसवीं तक माना गया।[2]

<u>संत बुल्लेशाह तथा मियाँ मीर</u> – संत बुल्लेशाह के मूल निवास स्थान के विषय में मतभेद है फिर भी एक मत के अनुसार इनका जन्म कुस्तुन्तुनियाँ में सन् 1703 में हुआ ये जाति के सैयद मुसलमान थे।[3] अपनी किशोरावस्था में ही आध्यात्मिक जिज्ञासा ने इन्हे देश विदेश भ्रमण के लिए प्रवृत्त किया और इनकी भेंट इनायतशाह सूफी से हो गयी और कई हिन्दू साधकों के भी सम्पर्क में आकर इन्होंने सत्संग किये तथा अन्त में कुसूर जाकर बस गये।[4]

इनकी रचनाओं में दोहरे" "काफी" सीहर्फी "अठवारा" "बारामासा" आदि प्रसिद्ध हैं।[5]

1- वही, पृ0 4

2- डा0 मोतीलाल मेनारिया, राजस्थान का पिंगल साहित्य, पृ0 213

3- परशुराम चतुर्वेदी उत्तरी भारत की संत परम्परा पृ0 754

4- क्षिति मोहन सेन: मिडीवल मिस्टिसिज्म ऑफ इंडिया लंदन पृ0 156

5- डॉ0 मोहन सिंह, हिस्ट्री ऑफ दि पंजाबी लिटरेचर लाहौर, पृ0 24

संत बुल्लेशाह का कादरी शत्तारी सम्प्रदाय के साथ संबंध था। उन पर कबीर साहब के सिद्धान्तों की छाप स्पष्ट लक्षित होती है साथ ही ये वेदांत सिद्धान्तों द्वारा भी बहुत प्रभावित थे।[1]

इन्होंने वाह्याडंबर का खण्डन करते हुए कहा कि, मंदिर, ठाकुर द्वारा व मसजिद सभी चोरों और डाकुओं के अड्डों के समान हैं। उनमें प्रेमरूपी परमात्मा का निवास स्थान कभी नहीं हो सकता। मैं तो जो कुछ भी अपने सीधे-साधे यत्नों द्वारा आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त कर पाता हूँ वह इन स्थानों के आचार्यों के संपर्क में आ जाने पर भ्रमात्मक बन जाता है। मक्के जाने से तब तक उद्धार नहीं हो सकता, जब तक हम अपने हृदय से अहंता कात्याग न कर दें न इसी प्रकार गंगा में सैकड़ो डुबकियाँ लगाने से ही कुछ संभव है।[2]

अपना उदाहरण देते हुए मीर ने कहा कि मैंने तो अल्ला का अनुभव अपने भीतर किया है करके सदा के लिए विशुद्ध आनन्द तथा शांति को उपलब्ध किया है। इसलिए ईश्वर के प्रेम में सदा मस्त बने रहो। तुम्हें इसकेलिए सैकड़ों हजारों विरोधों का सामना करना पड़ेगा, किन्तु इसकी परवाह न करो।[3] अपने उपदेश में बुल्लेशाह ने कहा कि .. वह मेरा प्रियतम परमात्मा नितांत निरूपाधि तथा नित्य आनंद स्वरूप है और जिसने उसे एक बार भी देख लिया वह चकित हो गया। तुम शास्त्रादि का अध्ययन करते हो तथा

1- परशुराम चतुर्वेदी: उत्तरी भारत की संत परम्परा, पृ0 755

2- क्षिती मोहन सेन: मिडीवल मिस्टिसिज्म ऑफ इंडिया, पृ0 156-7

3- वही,

व्यर्थ ही उल्टा सीधा लड़ते हो । यदि द्वैत की भावना को दूर करके देखो तो हिन्दू तथा मुसलमान में कोई अन्तर ही नहीं है, सभी एक समान साधु जान पड़ते हैं और सबके भीतर वही एक व्याप्त समझ पड़ता है मैं न तो मुल्ला हूँ, न काजी हूँ और न अपने को कभी सुन्नी और हाजी मानने को तैयार हूँ । अब तो उसके साथ आत्मीयता की बाजी मार ली है और अनाहत शब्द बजाता हुआ आनंद में विभोर हूँ ।[1]

अंतत : यह कहा जा सकता है कि तत्कालीन समाज में अवनत होती हुयी धार्मिक दशा को सुधारने में संतों ने समय-समय पर जनता का मार्ग दर्शन किया किन्तु जनता पर इसका असर कितना रहा यह कह पाना मुश्किल है ।

1- बुल्लाशाह की सीहर्फी: श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बंबई, पृ0 6

पर्वोत्सव

पर्वोत्सव मानवीय मनोभावों को क्रियात्मक रूप देते हैं । वे मानव जाति के सांस्कृतिक दर्पण हैं, क्योंकि युगों-युगों के संस्कार उन पर्वोत्सवों में संचित रहते हैं । यद्यपि काल प्रवाह पर्वोत्सवों के वाह्य रूप में परिवर्तन करता रहता है, लेकिन उनसे सम्बद्ध विश्वासों, रीति-रिवाजों एवं संस्कारों में अनुस्यूत चेतना-सूत्र का रंग अपेक्षाकृत बहुत कम परिवर्तित होता है । अतः किसी जाति या देश के पर्वोत्सवों का अध्ययन वहाँ की संस्कृति के ज्ञान में बहुत अधिक सहायता पहुँचाता है ।

तत्कालीन समाज में हिन्दू एवं मुसलमानों के व्यक्तिगत जीवन पर धार्मिक प्रभाव इतना अधिक था कि वे अपने -अपने धर्मों के सिद्धान्तों काअनुकरण करते हुए उनके अन्तर्गत प्रतिपादित सैकड़ों वर्ष से चली आ रही परिपाटियों की उपेक्षा नहीं कर सकते थे । उन परिपाटियों का पालन करना पुनीत कर्त्तव्य, धार्मिक निष्ठा एवं धर्म परायणता समझा जाता था । समाज में रहकर कोई भी व्यक्ति उसकी मान्यताओंसेपरे रहने की न तो इच्छा करता था और न ही चेष्टा ।

हिन्दुओं के प्रमुख त्यौहार -

होली - होली हिन्दुओं का प्राचीन और प्रमुख त्यौह

1- फेथ फेयर्स एण्ड फेस्टवल्स, पृ0 85-86; हिन्दू हॉलीडेज पी0 थॉमस, पृ0 88; हिन्दू मुहम्मडन फीट्स, पृ0 38; आईन भाग2, पृ0 173;आईन भाग 3, पृ0 32।

वस्तुत: भारतीय त्यौहारों मेंहोली ही एक ऐसा पर्व है, जिसमें हमारे सांस्कृतिक जीवन की सच्ची झलक मिलती है तथा अन्य पुनीत पर्वों की तुलना में होली के अवसर पर हमारे हृदय के अनाविल उल्लास और प्रेम की जैसी दिव्य प्रभा प्रस्फुटित होती है, वैसी प्रभा अन्य अवसरों पर बहुत कम देखने को मिलती है ।[1]

वर्ण व्यवस्था के आधार पर होली शूद्रों से संबद्ध है।[2] यह उन्मुक्ति का पर्व है जिसमें सभी सामाजिक मर्यादाएं शिथिल हो जाती हैं छोटे-बड़े का भेद मिट जाता है और सभी एक से हो जाते हैं । होलिका की भस्म का बंदन किया जाता है ।[3]

होली इस समयकेवल सामाजिक उत्सव के रूप के न होकर राष्ट्रीय त्यौहार के रूप में मनाया जाने लगा था जिसमें मुस्लिम शासक औरमुस्लिम जनता भी भाग लिया करती थी।[4]

1- डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0415
2- गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति पृ 288
3- वही ।

4- भीमसेन, नुस्खा-ए-दिलखुशा, पृ0 64; मुहम्मदयासीन-ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 52;कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ़ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 24 ।

स्त्री पुरूष सभी एक साथ रसरिक्त होकर फाग {होली} खेलते हैं तथा एक दूसरे पर रंग, गुलाल आदि डालते हैं :

खेलत फाग खिलार खरे अनुराग भरे बड़भाग कन्हाई।

× × ×

लाल गुलाल सों लीनो मुठी भरि बाल के भाल के ओर चलाई ।[1]

चूँकि यह प्रसन्नता का त्यौहार है अतः इस दिन लोग खूब गाना-बजाना तथा नाच करते हैं, तरह-तरह के वाद्ययंत्रो के साथ गीत गाते है :

1- देव ग्रंथावली: तृतीय भाव विलास, पृ0104, छं0 60; पृ0111 छं0 100; रस विलास, पृ0 236 छं020; देवसुधा, पृ043छं080; सुखसागरतरंग, पृ0 60, छं0 79; पृ0 67 छं0 119; पृ0 68 छं0 123; पृ0 67 छं0122; पृ0 68, छं0 128; पृ068 छं0 124; पृ0 69 छं0 130; पृ 68 छं0129; पृ0 67 छं0 122; भिखारीदास ग्रंथावली; काव्यनिर्णय, पृ010 छं0 30; रससारांशपृ0 48, छं0 328; पृ0 37, छं0 252; सोमनाथ ग्रंथावली, रसपीयूषनिधि, पृ0 107, छं0 13; पृ0 164 छं0 23; पृ0 107 छं07; पृ0 ~~164 छं0 23~~; पृ0 170, छं0 7; पृ0 149 छं019; तोष सुधानिधि, पृ0101; मतिराम ग्रंथावली; पृ0490; घनानंद, पद रचना, पृ0 139 छं0 5; पृ0 140, छं06; बोधा: विरह वारीश, सं0 213 छं0 36; मनूची; स्टोरिया द मोगोर, भाग2, पृ0 154; नुस्खा-ए-दिलखुशा, भीमसेन, पृ0 64; हेमिल्टन, भाग1, पृ0 128-129; डेलावैली, भाग1, पृ0 122-23; कांगडा पेंटिंग ऐट्टीन्थ, सेन्चुरी चित्र सं0 482, पी0 थामस: फेस्टिवल्स एण्ड हालीडेज आफइंडिया, पृ0 7

घर घर दंपति सुरंग वसननि साजि,

बिलसै बिलास, लखि फागु चहूँ ओरी है।

सोमनाथ कहै मंजु बाजत मृदंग डफ

नारि नर नाँचत सुलाज गुन तोरी है ।[1]

बसंत पंचमी :

होली की धूम का प्रारम्भ बसन्त पंचमी से माना गया है । [2] बसन्त पंचमी को हिन्दू-मुसलमान दोनों बड़ी धूमधाम से मनाते थे ।[3] आसमान में गुलाल उड़ रहा है, दिशाएं मृगमद फुलेल से पूरित हैं, कुंकुम गुलाल घनसार तथा अबीर के घने बादल छाए हैं। ~~बसन्त का उत्सव उत्साह पूर्वक मनाया जाता था।~~ कवि का कहना है कि इस अवसर पर नाचे बिना नहीं रह जा सकता । इस प्रकार

1- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि पृ0 107 छं0 13; पृ0 170, छं0 7; बोधा पृ0 144; घनानंद, पद रचना, पृ0 318; घनानंद पृ0 454; पद रचना पृ0 140; छं0 7; 58; छं0 79; तोष: सुधानिधि, पृ0 101; देव ग्रंथावली, सुखसागर तरंग, पृ0 60 छं0 79; पृ0 67 छं0 122; तथा वही, खाफी खाँ, मुन्त उल-लुबाब पृ0 291 । (इ.ए.ज.)

2- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 124, देव सुखसागर तरंग, संपा0 बालादत्त मिश्र, पृ0 26 ।

3- श्रीमती मीर हसन·ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, जिल्द 2 पृ0 287; डॉ0 मो0 उमर, हिन्दुस्तानी तहजीब का मुसलमानों पर असर, पृ0 19; पी थॉमस, फेस्टिवल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया, चैप्टर, 1, पृ0 12

बसन्त का उत्सव बहुत उत्साह पूर्वक मनाया जाता था;

आवोरी मिलकर गाओ बसन्त पंचमी आई है । [1]

<u>दीपावली</u> – दीपावली कार्तिक मास में मनाया जाता है ।[2] वर्णक्रमानुसार दीपावली वैश्यों का प्रधान पर्व है । [3] दीपावली के दिन घर को दीपमालाओं से सुसज्जित करते हैं तथा स्त्रियाँ वस्त्राभूषण से सुसज्जित हो दीपकराग गाती हैं, :

देवै दिया आकास को गृह बारि दीपक पूरि ।

गावैं सुदीपक राग बाला सजे भूषन भूरि ।[4]

1– मतिराम ग्रंथावली, पृ0 382; देव:सुखसागर तरंग, पृ0 26; मोहन अवस्थी पृ0 124 ४ देव सुधा पृ0 57 ; पृ0 60 छं0 74; पृ0 59, छं0 72; पृ060, छं077; घनानंद:पद रचना,पृ0 139छं0 4; पृ0 80 छं0 193; 127/410; देव रीति-काव्य संग्रह जगदीश गुप्त, पृ0 78 छं0 63; पृ0 78 छं0 65 देव:श्रृंगार-सुधाकर, पृ0 287 छं0 18; देव सुधा पृ0 96; सोमनाथ ग्रंथावली: सु0 विलास, पृ0 678 छं0 9; पृ0 678 छं0 15; रसपीयूषनिधि, पृ0210 छं0 219; कुमारमणि, रसिक रसाल पृ0 49, छं0 59; बोधा: वि0 वा0 162/19; हिन्दू मुहम्डन फीट्स, पृ0 77 ; पी·थॉमस: फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडि[illegible]

2– पी थॉमस:फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया, पृ0 3; डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 517; हिन्दू डॉलीडेज पृ042; हिन्दू मुहम्मडन फीट्स पृ0 18; आईन· 1, पृ0 216 ,

3– गिरिधर शर्मा, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ0 223

4– बोधा, विरह वागीश पृ0 221 छं0 11; सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ0 832 छं0 4; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 52; डुबाएस, हिन्द मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 517

कवि ने दीपावली के त्यौहार को हिन्दुओं की भाँति मुसलमान के द्वारा भी मनाये जाने का वर्णन किया है।[1] दीपावली में घर की सफाई होती है तरह-तरह के पकवान बनते हैं तथा लक्ष्मी गणेश की पूजा होती है।[2]

दीपावली के त्यौहार पर मुख्याकर्षण द्यूत क्रीडा़ (जुआ खेलना) का होता था। इस दिन लोग जुआ खेलते थे :

आई है दिवारी जोते काजनि जिवारी प्यारी,

खैले मिलि जुआँ पैज पूरे दाँव आबहीं।[3]

जुआ के अतिरिक्त टोना-टोटका भी होता था ~~तथा मंत्र जगाया जाता था~~।
दीपावली के दिन मंत्र जगाने का उल्लेख भी कवि ने किया है :

कान्ह दीवारी की राति चल्यौ बरसाने मनोज कौ मंत्र जगावन।[4]

1- सोमनाथ ग्रंथावली : नवाबोल्लास, पृ० 832 छं० 4; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ०52; अकबर के समय मे यह राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाया जाता था। अकबरनामा, ब्रेवरिज भाग3 पृ० 958

2- पी० थॉमस फेस्टवेल्स एण्ड हाडीलेज ऑफ इंडिया, पृ० 4

3- रसखान और घनानंद; संकलनकर्ता स्व० बाबू अमीर सिंह कवित्त, पृ०86, छं० 23। घनानंद ग्रंथावली, पृ०16, बोधा ग्रंथावली, विरह वागीश पृ०21। छं० 12; मुहम्मदयासीन; ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ० 108, तुजुके जहाँगीरी, रोगर्स एण्ड ब्रेवरीज, 1, पृ० 268; आईन; 1, पृ०321; एडवर्ड एण्ड गैरेट, मुगल रूल इन इंडिया पृ० 0282

4- सोमनाथ ग्रंथावली : पृ० 99 छं० 59,

गोवर्धन पूजा : दीपावली के बाद अन्नकूट अथवा गोवर्धन पूजा का उत्सव मनाया जाता है ।[1] सामान्यत: इस त्यौहार का प्रचलन समस्त भारत में है, किन्तु ब्रज में, विशेषकर, गोवर्द्धन ग्राम में यह बड़े समारोह के साथ मनाया जाता है क्योंकि यहाँ पर ऐसी मान्यता है कि इसी कार्तिक शुक्ल की प्रतिपदा को श्रीकृष्ण ने गोप एवं ग्वाल बालों से गोवर्धन की पूजा करायी थी । जिसमें स्त्रियाँ गोबर से गोवर्धन की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करती है।[2] गोवर्धन पूजा का उल्लेख कवियों ने किया है :

> गिरी गोधन पूजन को दिन आयो,
> ब्रजवासिन को मन अति भायो ।।[3]

1- आईन॰ 1, पृ0 216; पी थॉमस फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज ऑफ इंडिया, पृ0 4

2- शशि प्रभा कुशवाहा: रीतिकालीन कवियों द्वारा समाज चित्रण, पृ0 310 (शोध प्रबन्ध इ॰वि॰व॰)

3- घनानंद पृ0 247; बोधा, विरह वारीश, पृ0 211 छं0 12; पृ0 142

दशहरा - दशहरा क्षत्रियों का त्योहार माना गया है ।[1] इस दिन "आयुध-पूजा" ﴾अस्त्र शस्त्र की ﴿ की जाती थी ।[2] दशहरे को महानवमी [3] तथा विजयादशमी [4] के नाम से भी माना जाता है। महानवमी में शक्ति की पूजा होती है ।[5] शक्ति के भी सौम्य क्रूर आदि नाना रूप हैं ।[6] अपनी इच्छा के अनुसार ही रूपों की उपासना होती है ।[7] सत्व, रज, और तम का श्वेत, रक्त और कृष्ण﴾ काला﴿ रूप शास्त्र में माना गया है।[8] स्वच्छता, सयंत्र और आवरण का बोधन कराने के लिए ही इन रूपों की कल्पनाहै। उन्हीं के गुणों के रूपमें महाकाली, महालक्ष्मी महासरस्वती की उपासना होती है [9]

1- डुबाएस, हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 569; आईन; भाग3, पृ0 319 ।

2- डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 570

3- वही; इलियट एण्ड डाउसन, भाग, IV पृ0 117-18

4- इलियट एण्ड डाउसन भागIV पृ0 117-18,
भाग 2, पृ0 372-380

5- दशरत्थ जू के राम नै चँडी है धुमण्डि अरू ...।
भूषण ग्रंथावली, शिवराजभूषण पृ0 9 छं0 61;
सोमनाथ ग्रंथावली: सुजान विलास, पृ0 685 छं0 30, 685 छं0 31,
पृ0 734छं0 20; तुजुके जहाँगीरी: रोगर्स एण्ड ब्रेवरिज, 1, पृ0 224-25;
पोथॉमस: फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज ऑफ इंडिया, पृ0 4

6- गिरिधर शर्मा, वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति, पृ0 223, पो, थॉमस, फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडियापृ0 4-5

7- गिरिधर शर्मा- वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति पृ0223

8- वही

9- देव सुखसागर तरंग पृ0 49 छं0 11; मतिराम रत्नावली पृ0 120 छं0 117, वही ।

तथा गुणों के अनुकूल होउनके हाथों में आयुध भी रखे जाते हैं । इनकी उपासना से अपने अपने कार्य में सबको विजय प्राप्त होती है । यही विजयादशमी का लक्ष्य है ।[1] दशहरे का त्यौहार मुस्लिम भी बड़े ठाठ बाटसेमनाते थे कवि ने इसका उल्लेख किया है :

सोहै आज सरस सभा में दसहरा मान,

आजम खाँ आप पुरहूत सो प्रबोनौ है।

× × ×

× × ×

सोमनाथ बरनत दसहरा सुप्रसन्न है के,

ठाठ बार देखि के अतीव मन चीनौ है ।[2]

रक्षा - बंधन - रक्षा बंधन[3] ब्राह्मणों का महत्वपूर्ण त्यौहार है जो श्रावण(जुलाई अगस्त) मे मनाया जाता है। कतिपय प्रान्तों में रक्षाबंधन लड़कियों का मुख्य त्यौहार[4] माना जाने लगा । रक्षाबंधन का अभिप्राय यह हैकि भाई इसे जब बहन के द्वारा अपनी कलाई पर बंधवाता है तो वह बहन के सम्मान और जीवन सुरक्षा के बंधन लिए बचन बद्ध हो जाता है :

1- गिरिधर शर्मा, वैदिक विज्ञान .....पृ0 223

2- सोमनाथ ग्रंथावली: नवाबोल्लास, पृ0 831, छं0 3; आलमगीरनामा, पृ0 914 ; हिन्दू हॉलीडेज, पृ0 185-88; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया , पृ0 51

3- हिन्दू पर्व प्रकाश, पृ0 25; हिन्दू हॉलीडेज, पृ0 178

4- हिन्दू पर्व प्रकाश, पृ025

द्रुपत सुता को लाज राखो महाराज तुम ।

ऐसो यहो राखो मैं तिहारे हाथ राखो है ।[1]

अट्ठारहवीं शती से पूर्व भी राखो का त्यौहार मुगल दरबार में मनाया जाता था ।[2]

गनगौर - गनगौर पर्व वस्तुत: कुमारी लड़कियों सेअधिक सम्बद्ध है, क्योंकि अभीष्ट वर को प्राप्ति की कामना से प्रेरित होकर कुमारियाँ इस व्रत को रखती हैं ।[3] गनगौर का प्रचलन राजस्थानमें अधिक है ।[4] गनगौर के दिन गणेश और गौरी की पूजा होती है :

प्रातहि गनपति पूजिहौ निशा अकेलो जाय[5]

1- घनानंद ग्रंथावली; पृ0 326; आईन; भाग 3, पृ0 317-21; तुजुके जहाँगीरी, आर-बी0 1, पृ0 244; पी थामस: फेस्टवेल्स एण्ड हालीडेज आफ इंडिया, पृ0 1;

2- आईन., 3, पृ0 319; आर0 एण्ड बी, तुजुके जहाँगीरी, 1 पृ0 246

3- डॉ0 किशोरी लाल, रीतिकवियों को मौलिक देन, पृ0412

4- वही

5- कुमारमणि, ग्रंथावली, पृ05;

" गौरि थाप मायँ सब साजो । करै श्रृंगार नारिरत राजी,

बोधा वि0 वा0 पृ0 223 छं0 29;

तोष-सुधानिधि, पृ0 78; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 568

गृहण – किसी भी धार्मिक पर्व अथवा त्यौहार के दिन गंगा, यमुना अथवा किसी नदी में स्नान-दान करने की परिपाटी अट्ठारहवीं शती में यथावत् विद्यमान रही :

दुरित दावागन दूर करन को जाको पावन पानी ।

हरिचंद रति गति मति अति दाइनि कीरत विशद बरवानी ।[1]

हिंडोला वर्णन – जिस प्रकार बसन्त के अन्तर्गत फाग का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार वर्षा के अन्तर्गत हिंडोला[2] का कथन हुआ है । कवियों ने हिंडोला उत्सव बड़े उल्लास के साथ मनाने का वर्णन किया है जिसमें हिंडोला झूलते समय सभी लोग गीत गाते हैं :

सु गावैं हिंडोरा सबै देत टेरे ।[3]

1- घनानंद, पृ0 469; बदायूँनी, पृ0 95; तुज़ुके-जहाँगीरी, आर0 एण्ड बी, 1, पृ0 160; 183, 281; पी0 एन0 ओझा, ग्लिम्पसेज आफ सोशल लाइफ़ इन मुगल इंडिया पृ0 31; ट्रेवर्नियर, ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 192

2- 'हिंडोला' डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 404; मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 181

3- बोधा, विरह वारीश, पृ0 202 छं0 32; पृ0 120 छं0 11; पृ0 207 छं0 60; देव: सुखसागर तरंग, पृ0 55 छं0 162; तोष: ब्रजभाषा साहित्य का सौन्दर्य, सं0 प्रभुदयाल मीतल, पृ0 119; वही पृ0 120; (तोष के) दोनों छन्दों में हिंडोला झूलती हुयी स्त्रियों के विभिन्न अवयवों के हिलने तथा वस्त्रों आदि के उड़ने का चित्रण हुआ है ।

मुस्लिम त्यौहार - मुसलमानों के त्योहारों में ईद मुख्य माना गया जो मुख्य रूप से रोजा तोड़ने के उपलक्ष्य में[1] मनाया जाता है। ईद को ईद-उल-फितर[2] कहा जाता है। मुगल काल में यह बड़े उत्साह से मनाया जाता था औरंगजेब के काल में ईद का त्यौहार बहुत धूम-धाम से मनाया जाता था।[3] ~~मुस्लिम ईद के दिन ईदगाह जाते थे[4] से मिलते जुलते उन्हें बुलाते, स्वयं~~ ईद के दिन सभी मुसलमान ईदगाह जाते थे[5] तथा एक दूसरे के यहाँ जाकर उन्हें बधाई देते थे।[6]

1- "ईद" इस्लामी त्यौहार पृ0 72-78 आउटलाईंस ऑफ इस्लामिक कल्चर,, पृ0 704; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक कल्चर पृ055; पी थामस, चैप्टर 5, मुस्लिम फेस्टिवल एण्ड हालीडेज पृ0 44

2- वही, हिन्दू मुहम्मडन फीद्स, पृ0 102; बादशाहनामा पृ0 235, 36; ओविंगटन पृ0 243; आसीर ए आलमगीरी (उर्दू) पृ0 28; तबकाते-अकबरी 2, पृ0 605।

3- आसीर-ए- आलमगीरी, अनु. सरकार, पृ0 18, 25, 36; तथा आलमगीरी (उर्दू) पृ0 28; तथा मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 55

4- डेला वैली, पृ0 429; हिन्दू मुहम्मडन फीद्स, पृ0 102; तुजुके जहाँगीरी II पृ0 37

5- पेलसर्ट: इंडिया पृ0 73; रो एण्ड फ्रायर, पृ0 304; मुहम्मद यासीन, ए सोशल पृ0 55।

ईद के अवसर पर सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि इस्लाम में वैसे तो संगीत (नाच-गाना) निषिद्ध माना गया किन्तु उल्लास एवं हर्ष के इस अवसर पर ईद के दिन बाद तक संगीत नृत्यादि चलता रहता था :

कंत अवनी कौ गुनवंत गाजी आजम खाँ,
ईद मान इंद्र कौ बिलास परसत है
बाजत मृदंग बीन मधुर मधुर मंजु,
तान की तरंगन सो रंग दरसात है ।
कुंदन लता सो खासो काम कंदला सो बात,
नृत्यत अनंत अंग रूप सरसत है ।[1]

ईद के अवसर पर (बादशाह द्वारा नजरें तथा बख्सीस आदि दिये जाते थे :

नजर बिलंद सौ गयंद बकसत रीझि,
करन सौ कंचन कौमिह बरसत है ।[2]

ईद एक प्रकार का धार्मिक त्यौहार माना गया है ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ0 831 छं01, मनूची: स्टोरियाद मोगोर, भाग4, पृ0 235 अकबरनामा, ब्रेवरिज, भाग3, पृ0614-615
2- वही, मिसेज मीर हसन अली" आब्जरवेशन्स आन द मुसलमान्स, लाहौरी बादशाहनामा, । पृ0 259 ।
3- इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जुलाई 1961, पृ0 194, ईदस ।

बकरीद : बकरीद जिसे ईद-उल अजहा[1] कहा गया मुसलमानों का अन्य महत्वपूर्ण त्यौहार[2] रहा है। बकरीद के त्यौहार में कुर्बानी[3] दी जाती है तथा इसे भी ईद की तरह प्रसन्नता से मनाते हैं :

नृत्यत अनेक नृत्य कारक अनंत गति,
गावत सुधर सम किन्नर सुभेस के ।।
सोमनाथ कहत मुबारकी चहूँधा चारू,
चायन सो चतुर नरेस देस देस के ।
आज खाँ गाजी को विलोक बकरीद आज,
फीके होत सुधर समाज अमरेस के ।। [4]

1- "ईद उल- अजहा" इस्लामी त्यौहार, पृ0 78-88, फेथ फेयर्स एण्ड फेस्टवेल्स, पृ0 20। श्रीमती मीर हसन अली: आब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान आफ इंडिया, ।पृ0 259, हिन्दू मुहम्मडन फीट्स पृ0 102-3, आईन भाग 2, पृ0 31, तुजुके-जहाँगीरी आर. एण्ड बी. । पृ0 189, पी. थामस. चैप्टर 5, मुस्लिम फेस्टवल एण्ड हालीडेज पृ0 43 ।

2- मुहम्मद यासीन:ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 53 ।

3- मुहम्मद यासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 54, अकबरनामा, ब्रेवरिज, भाग2, पृ0 51, तथा तुजुके-जहाँगीरी, आर, एण्ड बी0 1, पृ0 189, पीटरमुंडी, 2 पृ0 51

4- सोमनाथ ग्रंथावली, नवाबोल्लास, पृ0 83। छं0 2, वही ।

मुसलमानों का अन्य त्योहार नौरोज था पर यह त्योहार मुख्यरूप से मुसलमानों के उच्च वर्गों तक ही, जो सुल्तान के साथ घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित थे, सीमित था ।[1]

मुसलमानों का दूसरा महत्वपूर्ण त्योहार शबे-बारात" था जो शा-बान महीने की चौदहवीं रात को मनाया जाता था ।[2]

मुहर्रम यानी शोक का पर्व भी मुसलमानों के बीच लोकप्रिय था जो खास कर शियों, कट्टर धार्मिक विचारों के मुसलमानों द्वारा मनाया जाता था ।[3]

1- डॉ0 ई0डी0 रॉस, हिन्दू मुसलमान फिस्ट्स, पृ0 100, के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन्स ऑफ पीपुल्स ऑफ हिन्दुस्तान पृ0 204

2- के0 एम0 अशरफ, पृ0 205, रॉस, पृ0 111-12

3- के0 एम0 अशरफ, लाइफ एण्ड कंडीशन ऑफ दि हिन्दुस्तान" पृ0 206-207 ।

निष्कर्ष -

इस प्रकार अवलोकित काल में राजनीतिक पराजय और सांस्कृतिक पराभव ने भी भारत के लोक जीवन की परम्पराओं को विशृंखलित नहीं किया था। लोक जीवन में त्यौहारों का अत्यन्त व्यापक महत्व था और वे जीवन के प्राय: प्रत्येक क्षेत्र का स्पर्श करते थे। होली केवल इसलिए महत्वपूर्ण नहीं है कि उस समय कुछ मनचले लोगों को सुंदरियों के साथ अबीर गुलाल खेलने का अवसर मिल जाता था, कोई गोरी किसी "लला" को फगुहारों की भीड़ से खींचकर भीतर ले जाकर मनमानी कर लेती थी वरन् इसलिए अधिक महत्वपूर्ण था कि वहत्यौहार स्त्री, पुरूष, छोटे, बड़े हीन और समर्थ सभी प्रकार के कृत्रिम भेदों को मिटाकर समानता और उन्मुक्ति का वातावरण प्रस्तुत करता था। उसमें कृत्रिम वर्जनाओं और नियमों-विनियमों का अस्तित्व समाप्त हो जाता था। इसी प्रकार वसन्तोत्सव नायक-नायिका के काम की अभिव्यक्ति का ही अवसर नहीं था, उस समय समस्त प्रकृति जीर्णशीर्ण और पुरातन को त्यागकर नया जीवन धारण करती थी। चैत की फसल कटकर घर पहुँचती थी, लोक समृद्धि और सम्पन्नता का उल्लास रहता था। रक्षा बंधन या ईद जैसे त्यौहार हिन्दू मुसलमानों को एक दूसरे के त्यौहारों में भाग लेने का अवसर प्रदान कर सांस्कृतिक समन्वय की प्रक्रिया में ठोस योगदान भी करते थे।

आस्थाएं

सर्व साधारण में अशिक्षा और अज्ञान के कारण अंधविश्वास की जड़ें गहरी हो गयी थीं । तरह-तरह के जादू-टोने, ज्योतिष में विश्वास, भूत-प्रेतों आदि में विश्वास होने के कारण लोगों का जीवन रूढ़ियों और अंधविश्वासों [1] से ग्रस्त था ।

ज्योतिष - परलोक तथा परमात्मा में विश्वास एवं कर्म-फल सिद्धान्त के कारण लोग भाग्यवादी बन गये थे ।[2] कवियों ने ज्योतिष में विश्वास करने का उल्लेख किया है, नायिका ज्योतिषी से प्रियतम के आने की शुभ घड़ी पूछती है तो कोई ज्योतिषी से शुभ मुहूर्त निकलवाता है ।[3]

1- डॉ० कृष्ण चन्द्र वर्मा- रीतियुगीन काव्य, पृ० 38-39 । डुबाएस: हिन्दू मैनर्स .... पृ० 216

2- डॉ० मोहन अवस्थी: हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ० 112, एडवर्ड एण्ड गैरेट: मुगल रूल इन इंडिया, पृ० 225

"ज्योतिष"
3- ज्योतिषी हौ तो चलौ घर में पिय आवन की जुधरी सुम देहौ ।
आलम आगे घने बनहैं घन के उनए ते घने दुख पैहौ ।।

- (आलम: श्रृंगार संग्रह , सं. सरकार कवि, पृ० 54 छं० 11)

डॉ० किशोरी लाल रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 389

सोमनाथ ग्रंथावली, सुजानविलास, पृ० 803 छं०6 ~~625छं0 26~~, तथा सोमनाथ ग्रंथावली, पृ० 625 छं० 26, डॉ० मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता, और समकालीन उर्दू काव्य, पृ० 113, मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ० 93, मनूची: स्टोरिया द मोगोर 1, पृ० 213-डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 221-22

लोक विश्वास: ज्योतिष के अतिरिक्त सगुन असगुन देखकर भी कर्त्तव्याकर्तव्य का निर्णय होता था।[1] काग का मुँडेरा पर आकर बोलना, फिर उड़ जाना, किसी के आने का सूचक माना गया है।[2] ऐसी परिस्थिति आने पर नायिकाएं कौए को काफी खातिरदारी करती दिखाई गयी हैं :

कंचन कटोरे खीर खाँड भरि-भरि तेरे-
हेत उठि भोर ही अटान पर धारिहौं।
आपने ही गरे तें निकारि नीको मोतिन कंठ
भूषन सँवारि नीको तेरे गले डारिहौं।
ए रे कारे काग तेरे सगुन सुभाय आज
जौ मैं इन अँखियन प्रीतम निहारियौं।।[3]

1- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता तथा समकालीन उर्दू - काव्य पृ0 115

2- वही; डॉ0किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ0 390

3- भिखारी दास ग्रंथावली; 1, रससारांश, पृ0 22 छं0 143; देव; भाव-विलास, पृ0 सं0, पृ0 36; देव, रीतिकाव्य संग्रह, जगदीश गुप्त, पृ0 73छं0 41; भूषण; स्फुट काव्य, जगदीश गुप्त, रीतिकाव्य संग्रह, पृ0 59 छं0 34; तोष; सुधानिधि, छं0 183 (डॉ0 किशोरी लाल पृ0 390)

प्रियतम से भेंट न होने पर नायिका सारे दिन काग उड़ाती रहती है कि शायद भेंट हो ही जाय ।[1] सगुन साधकर, देखकर, फिर लोग {बाहर} परदेश जाते थे ।[2]

असगुन – असगुन का अर्थ ही है शुभ गुण रहित । सगुन शुभ सूचक हैं तो असगुन अशुभ सूचक ।[3] तत्कालीन समाज में लोगों का ऐसा विश्वास था कि यदि रास्ते में रिक्त गागर दिखाई पड़ जाये तो गन्तव्य से रीति हाथ ही वापस आना पड़ता है। इस कारण लोग ऐसी स्थिति में प्राय: प्रस्थान नहीं करते थे :

> नागरि नवेली रूप आगरि अकेली रीति
>
> गागरि लै ठाढ़ी भई बाट ही के घाट मैं ।[4]

इस प्रकार असगुनों में एक असगुन है रीति गागर देखना ।

रीति गागर की तरह ही छींक[5] को भी बुरा मानते थे धारणा बन

1– देव भाव विलास पृ0 36

2– सोमनाथ ग्रंथावली रसपीयूषनिधि, पृ0 163 छं0 17, इसमें सगुन साधने का तात्पर्य इससे है कि प्रियतम के परदेश जाने के लिए सभी शुभ घड़ी देखकर तब नायिका बिदा करती है ।

3– डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य पृ0 116

4– मतिराम ग्रंथावली, रसराज पृ0 119 छं0 212 वही, डॉ0 किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन पृ0 390

5– आलम, मोहनअवस्थी पृ0 117 ।

गयी थी कि यदि चलते समय छींक हो तो कार्य सिद्ध नहीं होगा । इसके अतिरिक्त आफत आ जाना भी असंभाव्य नहीं था विशेषकर विदेश {बाहर} जाते समय । नायक मोह छोड़कर जैसे ही प्रस्थान करने वाला था कि ,

एते में काहू अचानक छींकों ।[1]

अत: नायक को उस दिन रूकना पड़ा ।

टोना - टोटका -

सगुन असगुन अपने शरीर अथवा दूसरे के शरीर की चेष्टाओं से मन में कल्पित मंगल या अमंगल की सृष्टि करते हैं, लेकिन टोटके मनमें उठी आशंका के निवारणार्थ कियेजाते हैं ।[2] टोटका करने में यह उद्देश्य निहित रहता है कि विघ्न बाधाएं समाप्त हो जाएँगी ।[3] कवियों ने श्रृंगारिक परिवेश में गोरे अंगो के नजर लगने के भय से "राई नोन बारने का स्पष्ट संकेत किया है :

गात की गोराई पर सहज भोराई पर।
सारी सुंदराई पर राई- लोन वारती ।[4]

1- देव, मोहन अवस्थी, पृ0 117, आलम;आलमकेलि, संपादक लाला भगवानदीन, पृ0 62

2- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी-रीतिकविता और समकालीन उर्दू काव्य, पृ0 118 ।

3- वही

4- भिखारीदास ग्रंथावली; 1 ,पृ0 33छं0 227; देवग्रंथावली; सुखसागरतरंग, पृ0 89 छं0 252 ;सुमिल विनोद,पृ0 9 छं0 15; घनानंद ग्रंथावली; पृ0 537

राई लोन उतारने के अलावा पानी बारने का भी उल्लेख कवि ने किया है,

तिल है अमोल लोल नैनी के कपोल गोल

बोलत अमोल जन वारि फेरियत है ।[1]

पानी बारने का अर्थ है पानी को किसी बर्तन में लेकर अपने इष्ट व्यक्ति के सर के चारों तरफ घुमाना (फिराना)[2] उपर्युक्त छंद में यह भाव व्यक्त किया गया कि तेलिन केगाल का अमोल तिल उसके अमोल बोल ये दोनों ग़ज़ब के हैं । लोग उस चंचलनयना को कुदृष्टि से बचाने केलिए बारम्बार पानी फेरते हैं ।

इसी प्रकार तृण तोड़कर फेंकने से भी नजर से बचा जा सकता था:

जिन जिन ओर चित चोर चितवति ज्यों ही,

तिन तिनओर तिन तोरति फिरति है ।[3]

<u>तंत्र-मंत्र</u> - लोगों में अंधविश्वास बढ़ जाने के कारण तंत्र मंत्र[4] का भी प्रचार था

तम: प्रधान प्रवृत्ति से संबंधित प्रयोजन दृष्टि में रखकर जो क्रियाएं की जाती हैं वे तंत्र है तथा उन क्रियाओं के साथ जो मंत्र जपे जाते हैं उनसे क्रिया फलवती होती है ।[5] चूँकि ऐसे मंत्र जप घोर अंधकार में किये जाते हैं अत: दीवाल

1- देव ग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 268; देव:देवसुधा, पृ0 145 छं0 273

2- डॉ0अवस्थी, हिन्दी-रीतिकविताऔर समकालीन उर्दू काव्य, पृ0119

3- देव, सुखसागर तरंग, पृ0 89 छं0 252; सुमिलविनोद, पृ0 9 छं0 15

4- डॉ0 मोहन अवस्थी, हिन्दी रीतिकविता .... पृ0 121।

5- वही, सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 47 छं0 187

को रात मंत्र जगाने के लिए उपयुक्त मानी गयी है:

कान्ह दिवारी को रैनि चलै बरसाने मनोज कौ मंत्र जगावन ।[1]

भूत-प्रेत – मध्ययुगीन समाज में भूत-प्रेत[2] विषयक मान्यताएँ भी प्रचलित थीं । भूत-प्रेत संबंधी झाड़ फूंक भी किये जाते थे ।[3] भूत प्रेत का भय स्वभावत: अंधेरे में सांझ और रात में अधिक रहता है :

भूत परेत को सांझ समौ, यह देखो धरीक धौं होत कहा है ।[4]

ताबीज : अमंगल निवारण के लिए लोग ताबीज [5] पहनते थे जो व्याघ्रनख आदि

1- वही, सोमनाथ , सोमनाथ रत्नावली , पृ0 90

2- बोधा, विरह-वागीश, पृ0 67 छं0 6; सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद, पृ0 400 छं0 36

3- सोमनाथ ग्रंथावली, माधवविनोद पृ0 400 छं0 36; ~~देव: देव माया प्रपंच, पृ.2~~ डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 644-45

4- कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 15 वही ।

5- तोष-तोष, सुधानिधि, पृ0 64 छं0 184; भिखारीदास ग्रंथावली: 1, पृ0 85; छं0 283; पृ0 211 छं0 583; भिखारीदास ग्रंथावली: 2, बधनहा, पृ0 102, छं0 36; जाफरशरीफ, कानून ए इस्लाम,- इस्लाम इन इंडिया, अनु0 जी0 ए0 हरक्लाट्स पृ0 247-82 ।

का बना होता था । ताबीज को एक प्रकार से रक्षा-यंत्र[1] माना गया है।

दिठौना - दिठौना काजल की बिन्दी को कहते हैं, जो इस दृष्टिकोण से लगाया जाता है कि किसी को कुदृष्टि न पड़े । दिठौना[2] लगाये जाने का उल्लेख मिलता है इसे संरक्षात्मक प्रसाधन बताया गया ।

निठुर दिठौना दीन्हे नीठि निकसन कहै,
डीठि लागिबे के डर पीठि दै गिरति है ।

निष्कर्ष रूपमें यह कहा जा सकता है कि जनता पूर्ण रूप से अंध-विश्वासों से घिरी थी फलत: उसके निवारण के लिए वह हर संभव प्रयास करती थी जैसा कि उपरोक्त विवरण में दिखाया गया है। अंधविश्वास बहुत कुछ समाज में व्याप्त अज्ञानता के कारण भी व्याप्त थी ।

1- दिठौना" भिखारीदास ग्रंथावली:पृ0 33 छं0 227; भिखारीदास ग्रंथावली, 2, पृ0 158 छं0 6; देव:सुखसागर तरंग पृ0 86 छं0 251; देव, सुमिलविनोद, पृ0 9 छं0 15; मतिराम;मतिराम सतसई , पृ0 380, छं0 148

2- देव, सुमिलविनोद पृ0 9 छं0 15; भिखारीदास ग्रंथावली, पृ0 33 छं0 227

संस्कार

संस्कार हिन्दू धर्म के महत्वपूर्ण अंग हैं, संस्कार का उदय सुदूर अतीत में हुआ था और काल प्रवाह के साथ अनेक परिवर्तनों सहित वे आज भी जीवित हैं। संस्कार शब्द का उपर्युक्त अंग्रेजी पर्याय" सैक्रामेन्ट[2] शब्द है, जिसका तात्पर्य धार्मिक विधि - विधान या कृत्य से है जो आंतरिक तथा आत्मिक सौन्दर्य का वाह्य तथा दृश्य प्रतीक माना जाता है। यह शब्द अन्य धार्मिक क्षेत्रों को भी व्याप्त कर लेताहै जो संस्कृत साहित्य में शुद्धि, प्रायश्चित व्रत आदि शब्दों के अन्तर्गत आते हैं।[3]

हिन्दुओं में संस्कार जन्म के पूर्व से ही प्रारम्भ हो जाते हैं।[4]

1- डा० राजबली पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ० 18

2- वही।

3- आर बी पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ० 79-104; पी० थामस, हिन्दू रिलेजन कस्टम्स एण्ड मैनर्स, पृ० 87; तथा जी० पी० मजूमदार, सम आस्पेक्ट्स ऑफ इंडियन सिविलाइजेशन, पृ० 30। यथा {गर्भाधान पुंसवन आदि}

सैद्धान्तिक रूप से सोलह प्रकार के संस्कार माने गये हैं[1] किन्तु, भारतीय मनीषियों ने एक व्यक्ति के लिए छह प्रकार के संस्कार को महत्वपूर्ण माना है[2] जातकर्म (जन्म संस्कार), नामकरण संस्कार, चूणाकर्म (मुंडन संस्कार), उपनयन संस्कार, विवाह तथा अन्त्येष्टि संस्कार ।[3] तत्कालीन समाज में प्रचलित कुछ संस्कार निम्न प्रकार से हैं ।

सीमंत संस्कार : सीमंत संस्कार प्राग्जन्म संस्कारों में से एक है ।[4] सीमंत संस्कार में गर्भिणी के केशों को ऊपर उठाया जाता है[5] एवं मातृत्व की गरिमा से सम्पन्न होने के लिए उसे बधाइयाँ एवं आशीर्वाद दिये जाते हैं। स्त्री अपने पति के साथ पूजन स्थल पर गाँठ जोड़कर बैठती है :

कंत चौक सीमंत की बैठी गाठि जुराय ।[6]

1- विस्तृत विवरण के लिए देखिए, आर0बी0 पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 79-480; पी0 थॉमस, पृ0 87-96; ए जे0 ए0 डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एंड सेरेमनीज (आक्सफोर्ड) पृ0 155-72 ।

2- आर0 बी0 पाण्डेय, पृ0 105-15, 146-50, 151-56

3- विस्तृत विवरण के लिए देखिए जी0पी0 मजूमदार, पम-, पृ0 367-408; तथा आर0बी0 पाण्डेय, पृ0407-80 ।

4- ए0 जे0 ए0 डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एँड सेरेमनीज, पृ0 151

5- वही, तथा आर0बी0 पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 105-15

6- मतिराम ग्रंथावली, पृ0 285

जातकर्म संस्कार :- जातकर्म संस्कार प्रसव के उपरान्त होता है ।[1] इस संस्कार में जैसे ही नवजात शिशु का जन्म होता है, तत्काल ही शिशु के जन्म से संबंधित बातें यथा§ जन्म समय, दिन, तारीख आदि§ लिख लिया जाता है और पुरोहित को बुलाकर शिशु के जन्म और मुहूर्त आदि पर विचार किया जाता है ।[2] जातकर्म संस्कार के अन्तर्गत शिशु के जन्म के उपरान्त मागध, सूद एवं बन्दीगण विरूदावली गाते हैं और हर्षित होकर नेग के लिए लड़ते हैं ।[3] मुसलमान शिशु के जन्म के बाद नवजात शिशु के कान में अजान§प्रार्थना§ करते है ।[4]

छठी समारोह : शिशु के जन्म के छठें दिन जो उत्सव मनाया जाता है उसे छठी के नाम से जाना जाता है ।[5] इस दिन शिशु के जन्म के उपलक्ष में विविध वाद्ययंत्रो के साथ § एक विशेष प्रकार का§ गीत गाया जाता है जिसे सोहर या सोलहें कहा गया , नृत्य आदि के माध्यम से प्रसन्नता व्यक्त की जात

1- डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ0 155

2- ताही समै आये ग्यानसागर गर्ग मुनि, गुन के निधानयोगीजोतिषविसेष है
 × × ×
 जनम मुहूरत सुमूरत मंगल देव मनोरथ पूरत, विचारि अवरेरवहो ।
 देव कृत देवचरित्र, पृ0 5 छं0 12; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम एंन्ड, सेरेमनीज, पृ0 151 ।

3- घनाआनंद, पृ0 231

4- कानून-ए-इस्लाम, पृ0 24; मुहम्मद यासीन:ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 63

5- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 150; कानून-ए- इस्लाम, पृ0 35-37; मिसेज मीर हसन अली, आब्जरवेशन्स.....पृ0 212 तथा मुहम्मद यासीन:ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया पृ0 63,

घौंसा घुघक ढोल ढमकारति । इत नट नचनिपुलकि किलकारति ।

गायक विविध मोल्लि गावत । .... ।

छठीं का उत्सव हिन्दू तथा मुसलमान दोनों ही मनाते हैं ।[2]

<u>नामकरण संस्कार</u> :- जैसा कि इस संस्कार के नाम से ही स्पष्ट है कि इस संस्कार के अन्तर्गत नवजात शिशु को एक नाम दिया जाता है इसे ही नामकरण संस्कार के नाम से सम्बोधित किया गया।[4] यह संस्कार कब सम्पन्न किया जाता है इस पर मतभेद दिखाई पड़ता है। कोई इसे जन्म के दस दिन बाद तथा कोई जन्म के बारह दिन बाद तथा कोई जन्म के दिन ही (नाम दे दिया जाता था) सम्पन्न किया जाने वाला संस्कार बताते है ।[5] नामकरण संस्कार के शुभ अवसर पर संबंधियों को बुलाया जाता है तथा उन्हें भोजन भी कराया जाता है । तत्कालीन समाज में इस अवसर पर आमंत्रित लोगों को किस प्रकार भोजन कराया जाता था इसका दृश्य इस प्रकार है:

जेंवत अहीर, नंद मंदिर गहीर भीर, भोजन परोसिबे कौबीर सबरे फिरै
कढ़ो झोरझोरी, परसत बरजोरी, भरे भात झकझरी, झोरी झलि झबरे फिरै

1- घनानंद ग्रंथावली पृ0 23।

2- मनूची , स्टोरिया द मोगोर , भाग 3, पृ0 150, मीर हसन अली: आब्जरवेशन्स... पृ0 212 , मुहम्मद यासीन , ए सोशल हिस्ट्री . पृ0 63

3- माया के चरित जाके जानत न वेद सो अजान , नामु धरै ता निरीह नर हरि को -
देव ग्रंथावली - देव चरित्र पृ0 5 छं0 ।।
जे0ए0 डुबाएस हिन्दू मैनर्स..... पृ0 156, कानून-ए- इस्लाम, ऑन द मुस्लिम नेम एण्ड द मैनर ऑफ नेमिंग पृ0 26, 29, 33, 34 ग्रोस, पृ0 99, तथा आईन भाग3, पृ0317

4- डुबाएस हिन्दू मैनर्स........पृ0 156

5- ओविंगटन, ए वोयाज टू सूरत (अनु0 एस0एस0 रॉलिन्सन) 1929, पृ0 197 डुबाएस हिन्दू मैनर्स,....पृ0 156 हर्कलॉट्स इस्लाम इन इण्डिया पृ0 26, मनूची स्टोरिया....भाग2, पृ0 343 ।

6-

माखन मलाई, खाँड खोर सिरिविरनि वहो, महो दूध दही मिले, रावर धरे
पौढ़े जग्यनायक, अंगूठनि को चूसत, दसूठनि को जूठनि को देव दूबरे फिरें ।[1]

नामकरण संस्कार के पश्चात् "अन्न प्राशान" नामक रस्म अदा की जाती है ।[2] इसरस्म को तब किया जाता है जब शिशु छह माह का हो जाता है [3] इस संस्कार को पूर्ण करने के लिए प्रथम बार शिशु को अन्न खिलाया जाता है [4] तत्कालीन मध्ययुगीन कवि ने इस पासनी संस्कार कहा है। [5]

अन्य संस्कारों में मध्ययुगीन समाज में "उपनयन" संस्कार महत्वपूर्ण माना गया है।[6] इस संस्कार के पश्चात् ही जनेऊ धारण किया जाता है । अवलोकित काल में जनेऊ धारण किये जाने का उल्लेख मिलता है :

1- देव, देवचरित्र, पृ0 5 छं0 14

2- पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, प0 151-57 (अन्प्राशन का विस्तृत विवरण । तथा डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 156 ।

3- डुबाएस हिन्दू मैनर्स.... पृ0 156 ।

4- आर. बी. पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 151; डुबाएस हिन्दू मैनर्स, पृ0 156,

5- देव देवचरित्र, पृ0 6 छं0 15 ।

6- उपनयन संस्कार"- आर. एण्ड बी, भाग 1, पृ0 357 तथा विस्तृत विवरण के लिए देखिए भाग 1, पृ0 16 पृ0 18 ।

सीस लटूरी कुटिल जनेऊ तुलसि माला ।[1]

विवाह : विवाह को भारतीय समाज में सबसे महत्वपूर्ण संस्कार माना गया है।[2]

सार्थसामाजिक तौर पर ~~सम्य से~~ विवाह को जीवन की एक अनिवार्य आवश्यकता माना गयाहै। अविवाहित व्यक्ति को भारतीय समाज में सम्मान की दृष्टि से नहीं देखा जाता ।[3]

देश-काल एवं सामाजिक परिस्थिति के अनुसार विवाह संबंधी नैतिक मानदंड परिवर्तित होते रहते हैं । वैसे आठ प्रकार के विवाह माने गये हैं[4] जिसमें से कुछ समाजानुमोदित वैवाहिक पद्धतियां तत्कालीन समाज में प्रचलित थीं, यथा अभिवावक वर्ग द्वारा निश्चित विवाह, इस प्रकार के विवाह अभिवावक के अनुमोदन पर होता था तथा विवाह सम्बंधी सारे निश्चय अभिवावक ही लेते थे पारंपरिक तौर से यह विवाह होता था ।[5] विवाह से पूर्व पति पत्नी एक दूसरे

1- सोमनाथ ग्रंथावली: ध्रुवविनोद, प्र0ख0, पृ0552 छं0 40; पुन, वही ग्रंथावली, का द्वितीय खण्ड, पृ0 231 छं05; सुजानविलास, पृ0 639 छं0 54; पृ0 627 छं04 (प्रस्तुत छंद में जनेऊ कोउपवीत भी कहा गया है) वही, मनूची भाग3, पृ0 64

2- पाण्डेय, हिन्दू संस्कार, पृ0 261; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स...... पृ0 205; अल्तेकर पोजीशन आफवीमेन, पृ0 37; लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, पृ0115 ।

3- डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 205 ।

4- आइन-ए-अकबरी , भाग3, पृ0 338-39 ।

5- देव ग्रंथावली, रसविलास, पृ0 234छं09; भावविलास, पृ036 छं09; सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद पृ0 533-34; 38; 39-40; तथा छं0 15, 21; 59, 60; 61 , 9; मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग3, पृ0 152; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स.... पृ0 215 ।

से नहीं मिल सकते थे[1] इसे आदर्श विवाह माना गया है । विवाह स्वयंवर विधि द्वारा भी किया जाता था :

रूकमवती प्रद्युमन सुनाम ।।
वरे स्वयंवर में अभिराम ।।[2]

स्वयंवर विधि से विवाह करने के अलावा कवि ने प्रेम-विवाह का भी वर्णन किया है जिनमें प्रेमी इस बात के इच्छुक हैं कि उनका विवाह इच्छित व्यक्ति से ही हो इसका उल्लेख निम्न प्रकार से हुआ है :

गोप-सुता कहैं, गौरि गुसाईंन । पाँय परों विनती सुनि लीजै,

× × ×

× × ×

सुन्दर साँवरो नंदकुमार, बसै उर जो वह, सो बर दीजै ।।[3]

विवाह की एक अन्य विधि प्रचलित थी, जिसे गंधर्व विवाह कहा गया। इस प्रकार का विवाह स्त्री पुरूष अपने आप कर लेते थे :

1- मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 3, पृ0 152

2- सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंद विनोद, पृ0 589 छं0 23; पृ0 562 छं0 86; पृ0 770 छं0 21; पृ0 772 छं0 31 ।

3- मतिराम ग्रंथावली: रसराज, कृष्णबिहारी मिश्र, छं0 63; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि , पृ0 91

पै सकुंतला ने कियौ, अपनौ आप विवाह ।
धरनो पति दुष्यंत सौं, मंडित हिऐ उछाह
और अनेकनि किए यों अपने ब्याह बिलास ।
है मेरे उपदेश में साहस कौ आभास ।[1]

आभनेरपर तत्कालीन समाज में विवाह परम्परागत रूप से किया जाता था । सर्वप्रथम ज्योतिषि बुलाकर शुभसगुन का विचार करके तब विवाह का मुहूर्त निकलवाया जाता था:

प्राणनाथ ज्योतिषी बुलायो । ताही क्षण तासो फरमायो ।
सगुन सुमंगलन विचारी । रचि सुमूहरत सब सुखकारी ।[2]

मुहूर्त निकलवाने के बाद वैवाहिक संबंधी दिन तारीख निश्चित किये जाते हैं ।[3] विवाह से पूर्व फलदान[4] ((तिलक)) नामक रस्म अदा की जाती है। विवाह से पूर्व अन्य कई रस्में होती हैं विवाह वाले घर में मंडप बनता है:-

हरित बाँस मंडफ सुभ साजा । आमुन पल्लव छाय विराजा[5]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: माधवविनोद, पृ0 361 छं0 115; देव और उनकी कविता डॉ0 नगेन्द्र पृ0 51

2- बोधा: विरह वारीश, पृ0 211 छं0 4; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 216

3- डुबाएस, हिन्दू मैनर्स कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 215

4- बोधा: विरह वारीश, पृ0 223 छं0 23; 223/19; के0 एम0 अशरफ लाइफ एण्ड कंडीशन आफ द पीपुल आफ हिन्दुस्तान, पृ0 147 ।

5- 'मंडफ' बोधा, विरह वारीश, पृ0223 छं0 26; ((मंडफ हरे बांस का बनता था उसे ऊपर घासफूस से उसे छाते थे)) पृ0 323, 28; पृ0 223 छं0 29; पृ0 225 छं0 मंडफ को मंडवा भी कहा गया है। मनूची, स्टोरिया द मोगोर भाग3, पृ0 62 पृ0 55 ।

तिलक के दिन पंडित लगन लिखते हैं उसी के अनुरूप अन्य वैवाहिक कार्यक्रम निश्चित होता है ।[1] दोनों को अर्थात् वर तथा वधू दोनों को (हल्दी चावल पीले कपड़े का कंगन बंधा जाता है । कंगन एक हाथ में ही बांधा जाता है :

कंकन एक हाथ में बाँध्यौ । ....।[2]

वर तथा वधू दोनों को तेल चढ़ाया जाता है इस अवसर पर स्त्रियाँ मंगलगीत तब तक गाती रहती है जब तक यह रस्म चलती रहती है :

मोदभरी मंगल सब गावैं । एक तीया तेल चढ़ावैं ।[3]

विवाह के समय पुरोहित पूजा-पाठ करवाते हैं ।[4] मंडप में कलश रखा जाता है ।[5] विवाह में कुटुंबजन, संबंधियों को आमंत्रित किया

1- लिखी लगन पंडित सुर ज्ञानी । सोध मुहूरत अति सुखदानी,
बोधा विरह वागीश, पृ० 222, छं० 9, 222/10, डुबाएस हिन्दू मैनर्स 21

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथविनोद, पृ० 527 छं० 31, माधव विनोद पृ० 469 छं० 104, डुबाएस: हिन्दू मैनर्स, .. पृ० 222 ।

3- सोमनाथ ग्रंथावली; शशिनाथ विनोद, पृ० 525/29, 527/30, बोधा विरह वागीश, पृ० 224 छं० 32, पृ० 223 छं० 30 डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ० 218

4- गनपति पावक पूजिकै समिध सुपारी पान ।
परि भाँवरि रतिनाथ के बहुविधि बजे निसान ।
-बोधा विरह वागीश, पृ० 225 छं०13, सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ० 538 छं० 59,
ऋचा वेद की द्विज ने उचरी और रीति पीछे से सचरी, पृ० 526 छं०28, डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ० 221, पृ० 222

5- द्वार कलस मंडप महँ सोई । जगमग सब ठौर होई ।
बोधा ग्रंथावली: पृ० 223 छं० 29, वि० वा० पृ० 222 छं० 17,
सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ० 526 छं० 28,
डुबाएस: हिन्दू मैनर्स ..... पृ० 219

जाता है ।[1]

विवाह के अवसर पर तरह-तरह के भोजन बनवाये जाते थे ।[2] विवाह के समय सबसे महत्वपूर्ण रस्म "कन्यादान" को मानी गयी है जिसे पाणिग्रहण संस्कार भी कहा गया है ।[3] इस समय भी गीत गाये जाते हैं । (वर एवं वधू के) दोनों के भाँवरि या फेरे [4] होते हैं ;

1- ....। कुटुंब सनेही सब बुलवाये ।

-बोधा: वि० वा० पृ० 222 छं० 11; पृ० 224-छं० 33; डेलाविले, पृ० 430 पृ० 431 ; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ० 218

2- बनी असरफी से रबड़ी अरू पेरा ।
मोदक मगद मलूक और मट्‌टै पहें सेरा ।
औरो साज अनेक और फल खट्‌टे मीठे ।
षटरस व्यंजन सकल भाँति के बने इकट्‌ठे ।।

- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथविनोद पृ० 524/4, बोधा: विरह वागीश, पृ० 224. छं० 33; 224 छं० 34; पृ० 224छं० 35; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स ...., पृ० 226 पृ० 277; मनूची , भाग3, पृ० 57

3- सोमनाथ ग्रंथावली: (महादेवकोब्याहुलो) शशिनाथ विनोद पृ० 526छं०31; माधव विनोद, पृ० 412 छं09; बोधा: बिरहवागीश, पृ० 223 छं० 21; आईन; भाग3, अनु. सरकार पृ० 337 -342; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स...पृ० 2[illegible]

4- सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ०538, छं० 59, बोधा: विरह वागीश पृ० 225 छं010, पृ० 225 छं० 13

जिसमें वर-वधू सात बार अग्नि को साक्षी मानकर उसके समक्ष चारों ओर घूमते हैं ।[1] विवाह सम्पन्न होने के बाद दूसरे दिन भात की रस्म होती है । इसमें मंडप के नीचे वर तथा उसके संबंधियों को भात (दही, बड़ा, भात आदि) खाने को दिया जाता है :

दूजे पुन सब कुटुँब बुलायो । बरा भात मड़वा को खायो ।[2]

इस अवसर पर स्त्रियाँ गीत गाती है । भात की रस्म के बाद बर तथा उसके संबंधियों को कुछ उपहार दिया जाता है जिसे (टीका) कहा गया ।

विवाह के अवसर पर बाजे संगीत तथा आतिसबाजी आदि का प्रदर्शन होताहै :

नौबत बजी भई असवारी । आतसबाजी त्यौं उजियारी ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ० 538 छं० 59, बोधा वि० वा० पृ० 225 छं० 10, पृ० 225 छं० 13

2- बोधा: वि० वा० पृ० 224 छं० 33; पृ० 212 छं० 23; पृ० 226 छं० 17; जनरल पंजाब हिस्ट्री सोसा. भाग 10, पृ० 1; पृ० 3; बाहवालपुर के खत्री भी इस परम्परा को मनाते हैं (बाहवालपुर गजेटियर 1904, पृ० 114

3- बोधा: वि० वा० पृ० 225 छं० 5, सोमनाथ ग्रंथावली, शशिनाथ विनोद, पृ० 533 छं० 15; डेलावैली, पृ० पृ० 30-431; मनूची: स्टोरिया, भाग3, पृ० 150-151; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स ....., पृ० 224

विवाह के अवसर पर सबको पान जरूर बाँटा जाता है :

सबहिन को बोड़ा(पान) दियैा बड़ी प्रीति के साथ ।[1]

विवाह के रस्मे में "गौने" का उल्लेख मिलता है :

गौनें को अब रीति करावौ ।
गाँठि जोरि के सुख बरसावौं ।।[2]

1- बोधा: विरह वागोश: पृ0 226 छं0 18; पृ0 221 छं0 24; पृ0 223 छं0 23; भिखारीदास ग्रंथावली: पृ0 229 छं0 46; देव: सुखसागर तरंग, 92 छं0 268; देव:अष्टयाम, पृ0 7छं0 7; भावविलास पृ0 126 छं02; सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 126 छं0 16; मुहम्मदयासीन: ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया, पृ0 65, डुबाएस. हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, पृ0 217

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद पृ0 540 छं0 9; देवग्रंथावली, भाव विलास, पृ0 36 छं0 9; रसविलास, पृ0234 छं0 12; पृ0 234 छं09; मतिराम सतसई, पृ0 384 छं0 195; पृ0 390 छं0 262; पृ0 392 छं0 289; मतिराम: रसराज, पृ0 257 छं0 242; पृ0 248 छं0 208; पृ0 230 छं0 134; पृ0 256 छं0 241; छं0 269 छं0 296; पृ0 82 छं0 141

अलौकिक काल में विवाह के अवसर पर दान-दहेज[1] दिये जाने का भी उल्लेख मिलता है । दहेज में विभिन्न प्रकार के वस्त्र, आभूषण गाय, स्त्री, हाथी रथ घोड़े हीरा, जवाहर आदि दिये जाने का वर्णन कवियों ने किया है ।[2]

1- सोमनाथ ग्रंथावली ब्रजेंदविनोद , पृ0 645 छं0 68; 560/ 74; शशिनाथविनोद, पृ0 522 छं0 79; बोधा; विरह वागीश:पृ0 222 छं0 14; थैवनॉट, पृ0 248; मैन्डेल्सो., पृ0 62, मनूची, स्टोरिया.. भाग 3, पृ0 152; बार्टोलोमियो, पृ0 272 ।

2- दई दाइजैं दूध दिवैयाँ ।।
दस हजार अति सुन्दर गैयाँ ।।
दो ही तीनि हजार लुगाई ।।
कंठनिक भूषन छवि छाईं ।
अरु बहुरंगनि सजें दुकूलनि ।।

नव हजार अरु हत्थी दीनै।
सतन गुन गज ते रत्थ नवीनें
रत्थनि तें सत गुनें तुरंगा।।
हय ते सत गुन नर सुभ ढंगा ।।

– सोमनाथ ग्रंथावली: ब्रजेंदविनोद पृ0 560 छं0 74; माधवविनोद, पृ0 412 छं09; बोधा; विरह वागीश, पृ0 222 छं0 14; पृ0 155; मासीर-ए आलमगीरी, भाग 1, पृ0 404 ; आइन-ए-अकबरी भाग3 (ब्रेवरिज) पृ0 677-678) ।

दहेज की इस कुप्रथा का बोझ गरीब वर्ग के लोग उठाने में असमर्थ थे । कभी-कभी तो विवाह के लिए गरीब वर्ग जो कर्ज लेता था उसे जीवन भर नहीं चुका पाता था ।[1] संभवत: दहेज और अन्य सामाजिक धार्मिक कारणों से प्रेरित होकर लोग बाल विवाह कर देते होंगे । अधिकांशत बाल विवाह सात-आठ वर्ष की आयु में होता था । अवलोकित काल में बाल विवाह का उल्लेख मिलता है:

पारबती सु चौक बैठारी । आठ बरस की गुन उजियारी ।[2]

बाल विवाह के अतिरिक्त एक अन्य कुप्रथा भी प्रचलित थी वह है बहुविवाह :

एकते मोहि करी पिय तीसरी तीसरी ते उन्हें दूसरी कीनी [3]

1- जनरल ऑफ रॉयल एशियाटिक सोसाइटी (बम्बई) भाग 3, पृ० 15; वार्टोलोमियो, पृ० 272; डुबाएस; हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ० 230

2- सोमनाथ ग्रंथावली: शशिनाथ विनोद, पृ० 526 छं० 27; अल्तेकर, पोजीशन आफ वोमेन इन इंडिया पृ० 68-73; ग्रोस, 1, पृ० 194; कालीकिंकरदत्त: सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड ऐकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी (1707-1813) पृ० 60; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ० 212

3- कवितोष और उनका सुधानिधि, सं० डॉ० सुरेन्द्र माथुर, छन्द 47, पृ० 6 मतिराम ग्रंथावली: (सतसई) छं० 9, देवसुधा, मिश्रबंधु छं० 209, देव-शब्द रसायन, सं० जानकीदास सिंह मनोज, पृ० 117; कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इं सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी (1707-18 पृ० 61, डुबाएस हिन्दू मैनर्स; पृ० 207-8

वैसे तो सामान्य तौर पर एक विवाह को ही सर्वत्र नैतिक समझा जाता है किन्तु इस विषय में देश और काल के अनुसार सामाजिक लोकाचारों का रूप भिन्न-भिन्न हो सकता है क्योंकि कहीं समाज का एक वर्ग केवल एक पति एवं एक पत्नी को अनुमति देता है जबकि अन्यत्र इसका रूप भिन्न हो जाताहै जैसा कि प्राचीन साहित्य में मिलता है ।[1] मुसलमानी देशों में एक पति कम से कम चार पत्नियां रखने का अधिकारी है और कहीं इससे भी अधिक पत्नियां रखने की व्यवस्था समाज ने दी है ।[2]

किन्तु अधिक पत्नियाँ रखने के कुछ कारण या नियम रहे होगें यथा, बहुपत्नीत्व उसी दशा में मान्य है जब स्त्री बांझ हो अथवा उसे पुत्र न होकर पुत्रियाँ ही हो :

गुरूजन दूजे ब्याह कों, प्रतिदिन कहत रिसाइ ।
पति को पत राखै बहू, आपुन बांझ कहाइ ।।[3]

1- विप्रश्चतस्त्रो विन्देत--भार्यास्तिस्रस्तु भूमिपः।
द्वे च वैश्योयथाकामं भार्यैकामपि चान्त्यजः।
(विप्रकेलिए चार क्षत्रिय केलिए तीन वैश्य केलिए दोतथा शूद्र केलिए एक भार्या को अनुमति दी गयीहै।
अग्निपुराण(प्रथम खण्ड)ख0 श्रीरामशर्मा आचार्य, 59/1(शकुन्तला अरोरा रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ083

2- एच वाइटले,सेक्स एण्ड मारल्स, पृ0 10; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियो की नैतिक दृष्टि पृ083

3- मतिराम ग्रंथावली: (सतसई) छं09; शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियोंकी नैतिक दृष्टि, पृ0 86; डुबाएस, हिन्दू मैनर्स, पृ0207-8 कालीकिंकरदत्त, सोशल लाइफ......पृ0 6।

इसी प्रकार यह प्रथा सामाजिक आर्थिक प्रतिष्ठा मे भी संवर्धित रही ।[1]

वास्तव में बहुविवाह सम्पन्न वर्ग के लोगों अर्थात् शासक सामंतो आदि में प्रचलित थी ।[2] क्योंकि गरीब वर्ग इसका भार नहीं उठा सकता था सामाजिक आर्थिक रूपसे वह असमर्थ था । समाज की हरम व्यवस्था भी इस बात को पुष्टि करती है ।[3]

विवाह संस्कार को संतानोत्पत्ति एवं गृहस्थ धर्म के पालन की भावना को लेकर जीवन में अनिवार्य रखा गया है:

ब्याही कुल आचार सो सुद्ध सुकीया बाम ।

सुख सेवा संतान हित जस रस निर्मल नाम ।।[4]

अंतिम संस्कार अन्त्येष्टि संस्कार माना गया है जिसमें व्यक्ति को अपने-अपने देश में परम्परानुसार पंच तत्व में विलीन कर दिया जाता है ।[5]

1- {भारत में समाज शास्त्र प्रजाति और संस्कृति सं0 गौरीशंकर भट्ट, पृ0 675/ राखी कैद नारीन को भय दिखाय समुझाय, बोधा, विरह वागीश पृ0 39

2- डुबाएस हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज पृ0 206 तथा पृ0 368; कालीकिंकर दत्त , सर्वे आफ ....पृ061, शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि, पृ0 92 ।

3- कलीकिंकरदत्त: सर्वे ऑफ .....पृ056

4- देव ग्रंथावली {सुजानविनोद} लक्ष्मीधर मालवीय. 2/92; तथा वही ।

5- विस्तृत विवरण आर. बी. पाण्डेय, हिन्दू संस्कार ।

आठवाँ अध्याय

आर्थिक-स्थिति

आर्थिक - स्थिति

• हिन्दुस्तान की विशेष उत्तमता यह है कि यह विस्तृत देश है। यहाँ चाँदी और सोने की विपुलता है। हिन्दुस्तान में दूसरी सुविधा यह है कि यहाँ प्रत्येक व्यवसाय और उद्योग के कारीगर अगणित मिलते हैं। प्रत्येक काम के लिए कई ऐसे लोग तैयार रहते हैं जिनमें यह काम वंश-परम्परा से चला आया है।[1]

इस प्रकार भारत के प्रमुख आर्थिक स्त्रोत कृषि, व्यापार एवं वाणिज्य थे। किन्तु 17वीं शताब्दी सेही भारत में कृषकों की दशा शोचनीय हो गयी। तत्कालीन विदेशी यात्री के विवरण से कृषि की अवनत दशा पर प्रकाश पड़ता हैं।[2] जिससे ज्ञात होता है कि इस युग में कृषक कृषि छोड़कर नगरों की ओर आकृष्ट होने लगे थे। अट्ठारहवीं शताब्दी तक जागीरदारों के आमिलों एवं जागीरदारों के अत्याचारों के कारण कृषक कृषि के प्रति और भी उदासीन हो गये थे।[3]

इसके अतिरिक्त माराठा-जाट एवं विभिन्न सैनिक विद्रोहों के मध्य फसलें नष्ट हो जाती थीं[4] तथा समय-समय पर अनावृष्टि तथा अतिवृष्टि के प्राकृतिक

1- इलियट एण्ड डाउसन, द हिस्ट्री आफ हिन्दुस्तान, भाग 4, पृ0 221-223

2- बर्नियर, पृ0 205, मनूची, स्टोरिया द मोगोर, भाग 4, पृ0 451

3- कालीकिंकर दत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी 1707-1813, पृ0 110

4- खाफी खाँ, मुन्तखब-उल-लुबाब, इलियट एण्ड डाउसन, भाग 7, पृ0 294-96

प्रकोप भी अच्छी उपज के लिए बाधक सिद्ध होते थे ।[1]

उत्तर मुगलकालीन सम्राटों को भी कृषि की उन्नति के लिए उल्लेखनीय कार्य करने का अवसर प्राप्त नहीं हो पाया । यद्यपि फर्रूखसियर के समय में 1717 में इनायत उल्ला काश्मीरी ने सुधार का प्रयत्न किया किन्तु 1718 के लगभग दिल्ली एवं बंगाल के प्रान्त में दुर्भिक्ष पड़ जाने के कारण स्थिति अत्यअधिक गंभीर हो गयी थी, असंख्य लोग - भूखों मर गये तथा उन्हें अपनी संतानों को बेंचने के लिए बाध्य होना पड़ा । एक वर्ष पश्चात् स्थिति सामान्य हो सकी और 1719 में अपेक्षाकृत मूल्यों का स्तर गिरा ।[2]

किन्तु, दुर्भिक्ष समाप्त हो जाने पर भीकृषि के समुचित साधनों के प्रयोग न होने के कारण अधिक अनाज नहीं उत्पन्न होता था अतः भारत में विशेषकर दिल्ली में अनाज मँहगा था । 1758 में अनाज की मँहगाई की यह दशा थी कि रूपये में केवल 9 सेरगेहूँमिलता था मूँग की दाल रूपये की आध सेर, उड़द की दाल रूपये में पाँच सेर थी ।[3]

देश के सभी भागों में इस प्रकार की आर्थिक अवस्था नहीं थी । कुछ क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न थे । जैसे; अवध भौगोलिक दृष्टि से धनधान्य

1- ए0के0 चटर्जी: फर्रूखसियर एण्ड हिज़ टाइम्स, पृ0 361-62

2- ए0के0 चटर्जी: फर्रूखसियर एण्ड हिज़ टाइम्स, पृ0 361-62

3- सर जदुनाथ सरकार: फाल ऑफ दमुगल इम्पायर, भाग 2, पृ0 154

पूर्ण था, यहां गेहूँ चावल, जौ, चना, मक्का, बाजरा तिलहन तथा अन्य धान्य की बड़ी फसलें उत्पन्न होती थी, रूई, अफीम तथा गन्ना आदि भी यहाँ के अधिकांश भागों में उत्पन्न होते थे ।[1]

दिल्ली में विभिन्न प्रकार के बाजार भी लगाते थे। उच्चवर्गीय स्त्रियां भी दुकानें लगाती थीं :

" बैठती दुकान लैके रानी रजवारन की "[2]

<u>मिर्जापुर</u> : मिर्जापुर ऊनी एवं रेशमी वस्त्रों की तथा काश्मीर, नैनीताल आदि स्थानों की वस्तुओं की बड़ी मंडी मानी जाती थी ।[3] यह कस्बा धनी व्यापारियों से भरा पड़ा था जो स्थानीय उपजों तथा निर्मित वस्तुओं को विभिन्न प्रान्तों को भेजते तथा बाहर से अन्य वस्तुएं मंगाते थे । मिर्जापुर फलों तथा शाक की प्रथम श्रेणी की मंडी थी ।[4] रूई के व्यापार के लिए भी यह महत्वपूर्ण मंडी थी ।[5]

<u>गोरखपुर</u> - गोरखपुर में चावल, घी, कांच के बर्तन, मुर्गियाँ आदि मिलती थीं।[6] पहाड़ियों के लोग सोना, कांच के गहने, शहद, मोम, कस्तूरी,

---

1- डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव: अवध के नवाब, पृ0 275

2- भूषण ग्रंथावली: पृ0 98, बाजारों के विशद विवरण हेतु, डॉ0 मुहम्मद उमर: हिन्दू तहजीब पर मुसलमानों का असर, पृ0 487-89।

3- डा0 आशीर्वादीलाल श्रीवास्तव: अवध के नवाब, पृ0 275, आगरा, 1957

4- वही

5- ट्रैवेर्नियर, ट्रेवेल्स इन इंडिया, पृ0 156

6- डॉ0 आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, अवध के नवाब, पृ0 276-277

अंगूर, मिर्च, लहसुन, अदरक, सोंठ, अनार तथा शिकारी लोग चिड़िया आदि बेचने के लिए आते थे ।[1]

गाजीपुर, जौनपुर : गाजीपुर और जौनपुर के कस्बे विभिन्न प्रकार के इत्रों एवं सुगंधित तेलों के लिए प्रसिद्ध थे । इसके अलावा कपड़ों में झोना तथा महरगुल नामक कपड़ा खूब बुना जाता था ।[2]

फैजाबाद : फैजाबाद भी एक महत्वपूर्ण आर्थिक केन्द्र था ।[3] अवध की स्वतंत्र सत्ता स्थापित होने पर बुर्हानुल्मुल्क ने अयोध्या से चार मील की दूरी पर घाघरा नदी के तट पर एक ऊँचे स्थान पर चारों ओर कच्ची दीवार बनवा कर मध्य में खस का एक बंगला बनवाया था तथा बेगमों के लिए कच्चे महल बनवाए और इस बस्ती का नाम "बंगला" पड़ गया । यह स्थान सफदरजंग के समय में फैजाबाद के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा अवध की राजधानी बन गया, इस बंगले के चारों ओर उमरा तथा विभिन्न वर्ग के लोगों ने मकान और बाजार बनवाये तथा फैजाबाद का महत्व तीव्र गति से बढ़ने लगा । सफदरजंग के पश्चात् नवाब शुजाउद्दौला ने प्रारम्भ में लखनऊ बसाकर उसे राजधानी बनाया अतः फैजाबाद की शोभा कम होनेलगी किन्तु शुजाउद्दौला वर्ष में दो-तीन बार फैजाबाद अवश्य जाता रहा तथा नवाब अहमद खां बंगश के परामर्श पर पुनः फैजाबाद को राजधन

1- वही,

2- ट्रेवेर्नियर: ट्रैवेल्स इन इंडिया, पृ०67-68

3- डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, द्वितीय भाग, पृ० 343

बनाया तथा पुराने कच्चे चहारदीवारी के स्थान पर नवीन सिरे से शहरपनाह बनवायी । उसके प्रयत्नों से इस नगर और बस्ती को अत्यअधिक उन्नति हुयी तथा इस नगर ने दूसरी दिल्ली का रूप धारण कर लिया। दिल्ली के लोगों ने दिल्ली छोड़कर फैजाबाद में बसना प्रारम्भ कर दिया । कुछ ही दिनों में फैजाबाद अत्यन्त समृद्ध नगर बन गया ।[1]

फैजाबाद की आर्थिक स्थिति का आँखों देखा वर्णन किसी ने इस प्रकार किया है :

" जब मैं सर्वप्रथम घर छोड़कर फैजाबाद गया तो अभी मुमताज नगर तक ही पहुँचा हूँ जो नगर से चार मील की दूरी पर है। मैंने देखा बाजार लगी है, एक पेड़ के नीचे विभिन्न प्रकार की मिठाइयां गर्मागर्म खाने, कबाब, सालन, रोटियां, पराठे आदि बिक रहें हैं । नानखताइयां, विभिन्न प्रकार के शर्बत बिक रहे हैं और सैकड़ों मनुष्य उन्हें खरीदने के लिए दुकानों पर गिर पड़ते हैं ।[2]

फैजाबाद में निर्मित कपड़ों की अत्यअधिक प्रशंसा की है, टांडा में सूती कपड़ा अच्छा बनता था, घाघरा नदी की ओर से यहाँ के निर्मित कपड़े कलकत्ता तथा अन्य नगरों को भेजे जाते थे । यद्यपि 1793 में इन कपड़ों की मांग गिर गयी थी, किन्तु पुनः मांग बढ़ने की आशा थी क्योंकि यहाँ पर निर्मित

1- डॉ० आशीर्वादी लाल श्रीवास्तव, द्वितीय भाग, पृ० 343-67

2- विलियम होए: मेमॉयर्स ऑफ फैजाबाद, पृ० 89

कपड़े चुंगी विमुक्त, सस्ते तथा अत्यन्त उच्च श्रेणी के होते थे अतः उद्योग उसी प्रकारसेचलता रहा ।[1]

कर : राज्य और खेती करने वालों के बीच संबंध स्थापित करने का "कर" एक माध्यम था । अवलोकित काल में कई प्रकार से धन वसूल किये जाते थे । कुछ राज्य कर होते थे जैसे हासिल, रिसालें आदि । कवि ने राज्य कर रिसाल का उल्लेख इस प्रकार किया है :

एदिल सों वेदिल हरम कहै बार-बार,
भेजना है भेजो सो रिसालैं, सिवराज जू कों, [2]

अधिकांश कर पेशकस, जकात आदि कर मुगलों के सम्पर्क से राजस्थान में चालू हुए थे ।[3]

आयात-निर्यात कर भी लगता था ।[4] इन राज्य करआदि के अलावा पेसकस (भेंट) के द्वारा राज्य आर्थिक लाभ प्राप्त करता था :

पेसकल लेता है प्रचंड तिलंगानै को ।[5]

1- टेवेर्नियर, ट्रवेल्स इन इंडिया, पृ0318-21।
2- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, पृ0 36-37 छं0 29
3- जी0 एन0 शर्मा: सोशल लाइफ इनमेडिवल राजस्थान, पृ030।
4- कालीकिंकरदत्त: सर्वे आफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन सेट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 8।
5- सोमनाथ ग्रंथावली: दीर्घनगरवर्णन पृ0 825 छं012, भूषण ग्रंथावली: शिवराज भूषण पृ034 छं0 206, पृ0 40 छं0245 , मनूची स्टोरिया द मोगोर, पृ0 436

उद्योग : राजपरिवार, अधिकारी वर्ग और सैनिक विभाग की आवश्यकता समयानुकूल बढ़ने लगी, क्योंकि रहन-सहन, शासन और युद्ध के तरीकों में नया मोड़ आ गया था। ज्यों-ज्यों गाँव कच्चे माल का उत्पादन करते थे त्यों-त्यों शहरों और कस्बों में उसकी सहायता से कई उद्योग पनपते थे साथ ही सतत् युद्ध की स्थिति से, कस्बो में बस्तियाँ बढ़ने से औद्योगिक कार्य में विकास होने लगा।[1]

अवलोकित काल में धातु कार्य ने भी बड़ी उन्नति की थी। शस्त्रों को बनाने के लिए लुहार होते थे जिनका सम्मान होता था :

त्यौं लोहे के काम सौं है लुहार कौ नाम।[2]

अन्य उद्योगों में कपड़े की रँगाई का उद्योग प्रचलित था :

"त्यौं पट में अति ही चटकीलौ चढ़ै रंग तीसरी बार के बोरै।"[3]

वस्त्रों की रँगाई के साथ बंधाई [4] जिसे बांधनू कहा जाता था तथा

1- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2, पृ0425; ट्रेवेर्नियर, भाग 2 अध्याय4, पृ0 33

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 165 छं027, मासीर-ए-आलमगीरी, इलियट एंड डाउसन, भाग 3, पृ0 189, भाग 7, पृ0 187, तुजुक-ए- जहाँगीरी, अनुवादक आर. एण्ड बी. पृ0 377-379 आइन-ए-अकबरी, भाग2, पृ0 191-92

3- मतिराम: ललितललाम, छं0 9, तोष:सुधानिधि, पृ0 34 छं0 102, वही

4- देव: सुजानविनोद पृ0 33 छं0 8, आईन॰ 32, ब्लाखमैन, पृ0 87

छपाई [1] का कार्य भी होता था।

" वस्त्रों की छपाई का कार्य इतना सुन्दर होता था कि वह कभी धुल नहीं सकता था"। [2] सोने-चाँदी के तारों द्वारा अच्छे कपड़ों पर (अधिकांशतः साड़ी में) बेलबूटों को बनाने का काम होने लगा। इसे बादला, जरकशी या जरतारी कहा गया। [3] जोधपुर के कुशालचन्द का नाम भी सोने-चाँदी के कारीगरों में लिया जाता है, जो 18वीं शताब्दी में हुआ था। [4]

व्यापार-वाणिज्य का कार्य बनिया ही करते थे :

बनिक पुत्र व्यौपार कूं आयौ आनँद लद्धि। [5]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ० 91 छं० 264, "मआसिर-ए-आलमगीरी इलियट एण्ड डाउसन भाग7, पृ० 187

2- उमाशंकर मेहरा, मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति पृ० 106

3- देव ग्रंथावली: भाव-विलास, लालकिनारी वाली बादले कीसाड़ी"पृ0123, शब्द-रसायन, पृ० 71; जरकसी, 'सारी जरकस बारी'भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ० 119 छं० 138; देव ग्रंथावली: शब्द-रसायन, पृ० 25, पृ० 96, सुजानविनोद, पृ० 47 छं० 5, "जरतारी " सारी जरतारी, मतिराम: ललितललाम, छं० 90, भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खंड, पृ० 36 छं० 249, देव:राग रत्नाकर, पृ० 15 छं० 62, सुखसागर तरंग, पृ098छं0 285

4- गोपीनाथ शर्मा: राजस्थान का इतिहास, पृ० 493

5- सोमनाथ ग्रंथावली: सुजानविलास, पृ0 807, छं07, दीर्घनगर वर्णन, पृ0 820 छं0 18; ब्रजेंदविनोद, पृ0 699, छं0 20, पृ0 708, छं0 24; रामकलाधर 442छं0 14; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 271; मुहम्मदयासीन:ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया, पृ085, कालीकिंकरदत्त, सर्वे ऑफ इंडियाज़, सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी; पृ0 43, जहांगीरनामा, पृ0 313-14, ट्रेवेर्नियर, ट्रैवेल्स इन इंडिया भाग2 पृ0 144

कवियों ने स्त्रियों को भी कई प्रकार के व्यवसाय करते हुए दिखाया है तथा व्यवसाय के अनुरूप उसके नाम को संज्ञा भी दी है जैसे: तमोलिनि

रंगित चोलो ते ढोलो खरी चुनि, चाइसों गांठि उधेरिअमेठी
ऊँचो दुकान पै बेंचत पान, तमोलिनि ....।[1]

इसी प्रकार हलवाइनि का उल्लेख हुआ है :

हाट के ऊपर, हाटक वेलि सी, बेंचति है हलुआहलवाइनि [2]

इसी प्रकार चुरिहारिनि[3] (चूड़ी बेचने का व्यवसाय करने वाली) गन्धिन[4] (इत्र का व्यवसाय करने वाली) बढ़इनि[5], (लकड़ी का सामान बनाने वाली)

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 269

2- देव ग्रंथावली: सुखसागर, पृ0 93 छं0 270

3- चुरिहारिन-

लाल चुरी तेरे अली लागी निपट मलोन
हरियारी करि देउँगी हौं तो हुकुम - अधीन

- भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 30 छं0 208;

देवग्रं०: सुखसागर तरंग, पृ0 94 छं0 279

4- गन्धिन - देव ग्रंथावली सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 267;
भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश पृ0 32 छं0 22

5- बढ़इनि -

देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 94 छं0 277

दरजिनि[1] ({कपड़ों को सिलाई कढ़ाई करने वाली}) कुम्हारिनि[2] ({मिट्टी के बर्तन बनाने वाली}) सुनारिनि[3] ({सोने-चाँदी का व्यवसाय करने वाली}) आदि विभिन्न प्रकार की स्त्रियों का उल्लेख मिलता है किन्तु अधिकांश उद्धरणों से यह पता नहीं चलता कि कौन सी स्त्री अपने पति के कारण व्यवसाय में संलग्न थी और कौन सी उस व्यवसाय को स्वतंत्र रूप से करने के कारण उक्त संज्ञा से अभिनन्दीत थी ।

विभिन्न पेशों के अन्तर्गत कवि ने बैधक[4] का उल्लेख किया है ।

<u>आयात- निर्यात</u> : व्यापारी विभिन्न वस्तुओं का आयात -निर्यात करते थे यथा: नमक, सुपारी, घी, चावल, बांस, मछली, अदरक, चीनी, तम्बाकू मदिरा, आदि ।[5]

1- "दरजिन" अंतरपैठि दुहूँ पट के, कवि देव निरंतर ता उर आनै ।

× ×

कीन्ही करे जिनकी दरजै, दरजी की बहू, बरजी नहिं मानै ।
-देवग्रंथावली:सुखसागरतरंग पृ0 93,छं027

2- कुम्हारिन " देवग्रंथावली:सुखसागर तरंग, पृ0 93 छं0 272

3- "सुनारिन " भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 32 छं0 205; देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, पृ0 92 छं0 266

4- बोधा: विरह वागीश, पृ0 107 भिखारीदास ग्रंथावली: रससारांश, पृ0 32 छं0 221

5- कालीकिंकर दत्त:सोशल लाइफ एंड एकोनामिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ, सेन्चुरी , पृ0 79

अन्य देश - विदेश से जो आयात-निर्यात होता था उसमें विशेषकर बंगाल से मालाबार, पर्शिया, चीन तथा अफ्रीका आदि देशों को रूई (काटन) कालीमिर्च, नशीले पदार्थ, फल कच्चा रेशम, चावल, अदरक, हल्दी आदि भेजे जाते थे।[1] चावल और चीनी विशेष रूप से बंगाल से इन देशों को भेजे जाते थे। 1756 में लगभग पचास हजार मन चीनी बंगाल से इन देशों को निर्यात हुआ था।[2]

तम्बाकू जैसे नशीले पदार्थ से औरंगजेब के समय में 50 हजार प्रति दिन के हिसाब से कर प्राप्त किया जाता था।[3] ऐसी स्थिति में निःसंदेह बाहर माल भेजकर अधिक लाभ प्राप्त किया जाता होगा।

क्रय-विक्रय में दलालों का उल्लेख मिलता है[4]। दलाल उसे कहा जाता है जो क्रेता और विक्रेता दोनों से कुछ लाभ प्राप्त करके दोनों को समान उचित मूल्य पर दिलवाता है। दलाल को मध्यस्थ भी कहा जाता था।[5]

1- कालीकिंकर दत्त: सर्वे ऑफ इंडियाज़ सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 77

2- वही

3- मनूची: स्टोरिया द मोगोर, भाग 2 पृ0 175

4- देव:देवसुधा, पृ0 125, कालीकिंकरदत्त:- सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 113

5- कालीकिंकरदत्त: वही।

भारत का विदेशी व्यापार भी उस समय प्राय: उन्हीं वस्तुओं से अधिक संबद्ध था जो उच्च वर्ग अधिक इस्तेमाल करते थे जैसे: मुख्यत: सोना, चाँदी, ताँबा अच्छे किस्म के ऊनी कपड़े यूरोप और फ्रांस से विशेषकर मंगाये जाते थे ।[1] खुरासाना से घोड़े आयात किये जाते थे ।[2]

व्यापार में जहाज का प्रयोग होता था । .तथा,

" मुगल जहाजों में यूरोप के जहाजों की अपेक्षा अधिक सामान लादा जा सकता है । – – – इनमें कम्पास या क्वाड्रेण्ट का उपयोग नहीं होता, परन्तु यह भारत वर्ष से ईरान, बसरा, मोखा, मुजम्बिक, मोम्बासा, सुमात्रा, मेडागास्कर और अन्य स्थानों पर पहुँचते हैं । वे केवल ध्रुव तारे या सूर्यास्त या सूर्योदय को देखकर चलते हैं ।[3]

यद्यपि आगे चलकर विदेशी जहाजों के द्वारा व्यापार होने लगा परन्तु मुगल बादशाह नौ–सेना के प्रति लापरवाह नहीं थे । " सूरत की पहली लड़ाई के बाद भी इस शक्ति के प्रति मुगल बादशाह की रूचि समाप्त नहीं हुई और सन् 1759 से 1829 तक प्रति वर्ष मुगल बादशाह द्वारा नौसेना पर उसका एक अफसर नियुक्त किया जाया करता था, जिसका प्रधान स्थान सूरत था, जिससे वह मुगलों के व्यापारिक जहाजों की रक्षा कर सके ।[4]

1– कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इंडिया, जिल्द 4, पृ0 316

2– वही

3– भूषण ग्रंथावली: पृ0 81, डी पन्त, द कॉमर्शियल पॉलिसी ऑफ द मुगल्स " पृ0 270

4– वही ।

व्यापार-वाणिज्य उन्नत दशा में होते हुए भी निरतंर राजनीतिक कलह और युद्ध-विग्रह के कारण प्रदेश को आर्थिक क्षति तो हो ही रही थी, इसके अतिरिक्त मालगुजारी वसूल करने की तत्कालीन प्रचलित पद्धति ने भी कोढ़ में खाज का काम किया क्योंकि मालगुजारी या तो जमींदारों के या अप्रत्यक्ष रूप से उनके मुखियों, मुनीमों, गुमाश्तों, पट्टेदारों, कारिंदो आदिके माध्यम द्वारा वसूल की जाती थी। इन लोगों ने उस अराजकतापूर्ण परिस्थिति से लाभ उठाने की दृष्टि से राजकीय आय के मूल उद्गम किसान- वर्ग पर नाना भाँति के अत्याचार किए। प्रधान केन्द्रीय सत्ता मे निर्बल हो जाने से जमींदारों, गुमाश्तों आदि मालगुजारी उगाहने का काम लाभकारी न रह गया था। उस परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति स्वयं जमीन का मालिक बन बैठने की चिन्ता करने लगा। परिणाम यह हुआ कि बहुत से किसानअपनी जमीन खो बैठे जिससे कृषि तथा वाणिज्य-व्यवसाय को बहुत धक्का पहुँचा।[1]

इसके साथ ही अट्ठारहवीं शती में बंगाल से भारत का धन इंग्लैण्ड द्रुत गति से जाने लगा। नादिरशाह तथा अहमदशाह के आक्रमण, ईस्ट इंडिया कम्पनी के द्वारा प्लासी के युद्ध के पश्चात् से दर का दुरूपयोग, अंग्रेजों की व्यापारिक नीतियों एवं भारतीय व्यापारियों पर अत्याचारों, देश के राजनैतिक परिवर्तनों, 1747 ई0 में ईरान में गृह-युद्ध तुर्की साम्राज्य के अन्त इजिप्ट तथा

1- डा0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय: आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ0 37

बगदाद में विद्रोहों के कारण भारत के वाह्य व्यापार को क्षति पहुँची थी ।[1]

किन्तु इसका तात्पर्य व्यापार समाप्त होना नहीं था यद्यपि विभिन्न उद्योगों वाले शिल्पकार एवं श्रमिकों को इस संक्रामक काल में विभिन्न राजनैतिक प्रहारों को सहना पड़ा किन्तु फिर भी इस शताब्दी में सर्वाधिक पेशेवरों तथा पेशों को नाम प्राप्त होते हैं । बड़े उद्योगों के अलावा - ~~अलावा~~ गुलफरोशी, चूड़ी साजी, मीनाकारी आदि उद्योग लोकप्रिय थे ।[2]

इस प्रकार अन्ततः यह कहा जा सकता है कि अट्ठारहवीं शताब्दी में जहाँ एक ओर वाह्य व्यापार एवं वाणिज्य को कुठाराघात लगा था वहीं विभिन्न हस्तशिल्प तथा अन्य कलाएं अपने चरम विकास पर थीं, जो विभिन्न राजनैतिक परिवर्तनों के मध्य पनप रही थीं, अतः विभिन्न विद्रोही एवं अव्यवस्था के मध्य इससे अधिक आर्थिक विकास मध्यकालीन युग में संभव नहीं था ।[3]

1- जगदीश नारायण सरकार: स्टडीज इन इकनॉमिक लाइफ इन मुगल इंडिया, पृ0368-72, मजूमदार राय चौधरी एण्ड दत्ता, एन एडवांस हिस्ट्री ऑफ इंडिया ।

2- विशद विवरण डॉ0 मुहम्मद उमर: हिन्दू तहजीब पर मुसलमानों का असर तथा मुहम्मद यासीन, ए सोशल हिस्ट्री ऑफ इस्लामिक इंडिया ।

3- वी0पी0 एस रघुवंशी: इंडिया इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी पृ0 322-36, विशद विवरण, द कैम्ब्रिज एकोनॉमिक हिस्ट्री आफ इंडिया, तपन राय चौधरी, द मिड ऐट्टीन्थ सेन्चुरी बैक ग्राउन्ड ।

नौवाँ अध्याय

अट्ठारहवीं शती के प्रमुख कवि व उनके काव्य

आचार्य सोमनाथ :

कविवर सोमनाथ भरतपुर वैर के प्रशासक श्री प्रताप सिंह के आश्रित परम पंडित कवि थे ।[1] जाटराज परिवार में सर्वत्र इनका आदर और सम्मान था । सोमनाथ काकविता काल सं0 1756 से 1817 तक माना जाता है। स्वयं उन्होंने अपने ग्रंथों में अपनी रचनाओं का काल दिया है जिससे उनका काव्यकाल उक्त ठहरता है ।[2]

सोमनाथ जी श्री सिरौरा (मथुरा के निकट एक गाँव) वंश के माथुर चौबे थे । जिस क्षेत्र में सोमनाथ की कर्मभूमि थी वह ब्रज का प्रभाव क्षेत्र रहा है और सर्वदेव उपासना की परम्परा वहाँ पर चलती रही है । जिस राजदरबार में सोमनाथ जी थे उस भरतपुर का इतिहास बहुत प्राचीन न होते हुए भी अत्यंत महत्वपूर्ण रहा है । यहाँ के लोग दृढ़ निश्चयी , वीर और साहसी होते हैं । वर्तमान भरतपुर राज्य की स्थापना बदन सिंह द्वारा सन् 1718 में हुई और डीघ नामक स्थान पर इसकी राजधानी बनायी गयी । इनके दो लड़के थे, सूरजमल जाट और दूसरा प्रतापसिंह । सूरजमल जाट को डीघ का शासन और प्रताप सिंह को वैर का शासन बदन सिंह जी ने सौंपा था । बदनसिंह की मृत्यु के बाद सुजान सिंह गद्दी पर बैठे जिन्हें सूरजमल के नाम से भी लोग जानते

1- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, संपादक सुधाकर पाण्डेय, पृ0 49, भूमिका से उद्धृत) डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार-कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 9

2- वही, पृ0 49- 50 ।

हैं । सूरजमल ने 1732 ई0 में भरतपुर पर अपना आधिपत्य कायम किया । पतापसिंह सूरजमल के छोटे भाई थे । वे साहित्यकारों, विद्वानों, कलाकारों आदि को आश्रय देने वाले उदार मना राजा थे और उन्होंने सोमनाथ जी को अपने दरबार का प्रमुख कवि बनाया।[1]

कवि सोमनाथ के ग्रंथों के अध्ययन से पूर्व, उस देश काल के संक्षिप्त ज्ञान भी आवश्यक प्रतीत होता है जिसके बीच सोमनाथ जी रहे । श्री सोमनाथ का कार्यक्षेत्र वह प्रदेश रहा है जहाँ वैष्णव संस्कृति के मध्यकालीन काव्य की अजस्र धारा बहती रही । वैर क्षेत्र सहज ही गोवर्धन से मिला रहने के कारण और मथुरा तथा आगरा के पास का नगर होने के कारण एक ओर जहाँ मध्यकालीन धार्मिक वैष्णव संस्कृति का केन्द्र रहा है, वही मुगल सभ्यता और संस्कृति की छाया भी उस पर पड़ती रही है और मुगल वैभव से उनकी प्रतिस्पर्धा भी थी । मुगलों के कमजोर होने पर जाट प्रभुत्व में आये और इन्होंने भरतपुर के इतिहास में अपना गौरवशाली स्थान बना लिया । यद्यपि भरतपुर राजस्थान का अंग रहा है तो भी वह सदा से आगरा और मथुरा के निकट होने तथा उसके प्रभाव के कारण इसको ब्रज प्रदेश का सहज अंग माना जाना अधिक उचित होगा ।[2]

इन तथ्यों की दृष्टि से जब हम उसके सांस्कृतिक पक्ष की ओर जाते हैं तो एक मध्यकालीन उस संस्कृति के दर्शन होते हैं जो मुगलों के दरबार में जन्मी, पनपी, बढ़ी । सामान्य जीवन यहाँ के राजाओं का, राजघरानों का,

---

1- वही, पृ0 49-50

2- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, पृ0 52

कवियों और पंडितों का वही था जो मुगल दरबार में था । जहाँ तक भाषा का संबंध है, ब्रजभाषा इस क्षेत्र में सर्वत्र काव्य की तथा साहित्य की भाषा रही है। अधिकांशत: यह माना गया कि मध्यकाल में केवल श्रृंगारिक काव्य और भक्ति संबंधी साहित्य को ही प्रश्रय प्राप्त होता था किन्तु वास्तुस्थिति यह है कि समाज में जितने विषय अंगीकृत थे, सभी के ऊपर साहित्य की रचना होती थी और स्वतंत्र अनुवाद का कार्य भी होता था । भरतपुर के कवियों ने ~~कवियों ने~~ अनेक क्षेत्रों यथा ज्योतिष, वास्तुकला, चिकित्सा विज्ञान आदि पर भी रचनाएँ कीं । राजा के मत का प्रभाव जनता पर भी पड़ता था और कवि भी उससे असंतृप्त नहीं रहता था । यद्यपि डीह और वैर वैष्णव और ब्रज प्रभाव क्षेत्र में था तो भी यहाँ समस्त हिन्दू देवी देवता समान रूप से पूजित रूप प्रतिष्ठित होते थे और उन पौराणिक कथाओं की चर्चा भी होती थी जिन कथाओं का हिन्दू धर्म में विशेष महत्व है ।[1]

इस प्रदेश की एक विशाल साहित्यिक परम्परा भी रही है ।[2] उस समय देश में जो साहित्यिक प्रवृत्तियाँ चल रहीं थी, वे थीं -रीति, भक्ति, नैतिक और वीर काव्य की । मूल धारा रीति साहित्य की थी और कवि सोमनाथ ऐसी ही परम्परा के रसमय शास्त्र कवि थे । [3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, पृ0 52-53 {भूमिका से उद्धृत}

2- वही, पृ0 53

3- वही, पृ0 53

कवि सोमनाथ द्वारा रचित प्रमुख ग्रंथों का विवरण इस प्रकार है । रसपीयूषनिधि, श्रृंगारविलास, माधव विनोद, महादेव को ब्यहुलो या शशिनाथविनोद, ध्रुवविनोद, सुजानविलास, प्रेमपच्चीसी, संग्राम दर्पण, ब्रजेन्द्रविनोद रासपंचाध्यायी, रामचरित-रत्नाकर[1] 4 एवं युक्तितरंगिणी ।[2]

रसपीयूषनिधि का वर्णन कवि ने 22 तरंगों में किया है , प्रथम तरंग में राजकुल का वर्णन है । दूसरे तरंग में कवि सोमनाथ कवि की प्रशंसा करते हैं, अपने कुल का वर्णन करते हैं, तीसरे तरंग में कवि का कथन है पिंगल की रीति समझने केलिए छंद ज्ञान आवश्यक है इसलिए सर्वप्रथम पिंगल के संबंध में ज्ञानपूर्वक कवि ने लिखा है ।

चौथे तरंग में छंद पर विचार किया गया है, उनका लक्षण उदाहरण और भेद बताया गया है।

पाँचवा तरंग वर्णवृत्त वर्णन का है । छठें तरंग में काव्य का लक्षण प्रयोजन, काव्य के भेद वर्णित किए गए हैं । सप्तम तरंग ध्वनि वेग, रस लक्षण एवं रसस्वामी से संबंधित है । आठवें अध्याय में श्रृंगार रस का वर्णन किया गया है उसके दो प्रकार, संयोग और वियोग बताए गए हैं । नायिका भेद का कथन स्वकीया लक्षण उदाहरण तथा कुल वधु आदि का वर्णन किया है । कवि ने स्वकीया नारी का भेद ज्येष्ठता और कनिष्ठा रूप में भी विवाह के आधार पर किया है ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 51-52 (भूमिका सेउद्धृत)

2- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ० 9

नौवाँ तरंग परकीया वर्णन से संबंधित है और सामान्या को भी उसी के भीतर संक्षेप में समाहित कर लिया गया है ।

रसपीयूषनिधि की दसवीं तरंग में मानवती और गर्विता नारी का चित्रण किया है । ग्यारहवीं तरंग में सोमनाथ मुग्धादि स्वाधीन पतिकादि नायिकाओं वर्णन करते हैं ।

बारहवीं तरंग का नाम है, उत्तमादिनायिका सखी कर्म दूतीकर्म वर्णन नामक तरंग । इसमें उत्तमा, मध्यमा और अधमा तीन प्रकार की नायिकाएँ बताई गई हैं ।

तेरहवीं तरंग में नायिका, सखा, दर्शन, दृष्टानुराग और चेष्टा वर्णन को चित्रित किया गया है ।

चतुर्दश तरंग में संयोग श्रृंगार का वर्णन और प्रकार को चित्रित किया गया है ।

पन्द्रहवें अध्याय में विप्रलंभ श्रृंगार का लक्षण और दूसरी दस दशा काकथन किया गया है ।

सोलहवीं तरंग में रसध्वनि वर्णन है । सर्वप्रथम हास्य रस का लक्षण और उनका उदाहरण दिया गया है ।

सत्रहवीं तरंग में भाव ध्वनि का लक्षण दिया गया है । उसके लक्षण देते हुए यह बताया गया है कि जब कवित में संचारी भाव व्यंग्य हो जाता है तो उसे भाव ध्वनि कहते हैं ।

अट्ठारहवीं तरंग में रसाभास सोमनाथ जी ने उसे माना है जहाँ कवित्त में अनुपयुक्त रस का वर्णन होता है ।

उन्नीसवीं तरंग में मध्यम काव्य गुणीभूत का वर्णन किया गया है । इसका लक्षण दिया गया है और उसको गद्य में भी समझाने का यत्न किया गया है ।

बीसवीं तरंग में काव्यदोष का वर्णन किया गया है । इक्कीसवीं तरंग में कविता का गुण वर्णित है और शब्दालंकारतथा चित्रालंकार का भी वर्णन किया गया है ।

अन्तिम तरंग 338 छंदों की है जिसमें अर्थालंकार, संसृष्टि और शब्दालंकार का वर्णन किया गया है ।[1]

ग्रंथ के अन्त में ग्रंथ की रचना का समय दिया गया है और एक सवैया में नंद कीगाय चराने वाले मोहन से प्रार्थना की गयी है कि हमारी लज्जा तुम्हारे हाथ मेंहै । अन्त में रघुनंद आनंदकंद को हृदय में कवि ने ध्याया है क्योंकि ये सुख को सरसाने वाले हैं ।[2]

इस प्रकार रसपीयूषनिधि नामक ग्रंथ से अन्य कवियों की भाँति नारी के रूप वस्त्राभरण का आदि को जानने में तो सहायता मिली ही कवि ने

1- विस्तृत विवरण के लिए सोमनाथ ग्रंथावली: खण्ड 1, रसपीयूषनिधि,

2- सोमनाथ ग्रंथावली: रसपीयूषनिधि, पृ0 224 छं0 336; पृ0 224 छं0 337, पृ0 224 छं0 338

कृष्ण के प्रति ... अनुराग का चित्रण किया उससे वैष्णव धर्म के ऊपर भी कुछ प्रकाश पड़ता है ।

तत्कालीन समाज में रचे जाने वाले रीतिकाव्य की एक परिपाटी रही है कि रसराज श्रृंगार के विषय प्रायः प्रत्येक कवि ने काव्य की रचना की है सोमनाथ जी ने श्रृंगार विलास नाम का ग्रंथ प्रस्तुत किया है। ग्रंथ का कारण कवि ने यह बताया कि कवियों ने उल्लासपूर्वक रस के बहुत से ग्रंथ बनाये हैं उनकी छाया बाँधकर मै इस श्रृंगार विलास ग्रंथ की रचना कर रहा हूँ । प्रथम उल्लास में कवि की मौलिकता इतनी ही मात्र है । बाकी रसपीयूषनिधि के सप्तम तरंग से उसने भाव ग्रहण किये हैं । `कहीं -कहीं छंदभी ज्यों के त्यों ले लिए हैं । कहीं- कहीं नए छंद भी रचे हैं । कहीं-कहीं कुछ नया नाम भी दिया है । फिर भी श्रृंगार विलास रसपीयूषनिधि का श्रृंगार रस से संबद्ध संक्षिप्त परिवर्तित, संपादित रूप मात्र है । इसका अलग मूल व्यक्तित्व नहीं है । संभव है कि किसी केलिए यह लिखा गया हो या परम्परा के निर्वाह के लिए मूल ग्रंथ से इस ग्रंथ को अलग निकाल दिया गया है ।[1]

कवि सोमनाथ कुछ दिन तक नवाब आजमखां (शाह आजम) के दरबार मेंभी रहे और वहां पर नवाबोल्लास नामक ग्रंथ की इन्होंने रचना की ।[2]

नवाब गाजीउद्दीन इमादुल मुल्क जो जाट दरबार में शरणार्थी था।वह समय - समय पर दरबार के उत्सवों में सम्मिलित होता है यह ग्रंथ उससे संबंधित है ।[3]

1- सोमनाथ ग्रंथावली: खण्ड 1, पृ0 67 पृ075 (भूमिका से उद्धृत)

2- वही, पृ0 51

3- वही, पृ0 75

कवि ने चार उत्सवों का वर्णन मात्र किया है ईद बकरईद, दशहरा और दीपावली ।[1]

अत्यन्त संक्षिप्त किन्तु महत्त्वपूर्ण वस्तु नवाबोल्लास में मिलती है एक ओर जहाँ तात्कालीन समाज में मनाये जाने वाले हिन्दू- मुस्लिम त्यौहारों का पता चलता है वही दूसरी ओर इस मान्यता का खंडनहोता है कि हिन्दू काव्य में हिन्दू संस्कृति की ही अभिव्यक्ति हुयी है जो लोग ऐसी मान्यता रखते हैं, उनके लिए ऐसे कवि की रचनाएं एक चुनौती है । वास्तव में हिन्दू मुस्लिम दोनों की भाषा हिन्दी रहीहै और मुगल दरबार से लेकर जनसामान्य तक हिन्दी भले हीराजभाषा न रही हो लोक भाषा रही है। ईद, बकरईद के साथ दशहरा और दीपावली का वर्णन इसका उदाहरण है ।

इस प्रकार नवाबोल्लास अपने आपमें बहुत महत्त्वपूर्ण न होते हुए और परम्परागत होते हुए भी अपनी महिमा इसलिए स्थापित करताहै कि मुसलमानों के दरबार में भी हिन्दू कवि रहते थे और मुसलमान बादशाह भी उसी प्रकार दीवाली और दशहरा मनाते थे जैसे बकरईद और ईद । क्योंकि किसी के भी राज्य में प्रजा केवल हिन्दू या मुसलमान नहीं थी । राजा सबका ध्यान रखता था ।

दीर्घनगर वर्णन में कवि ने जाट राजाओं की राजधानी का वर्णन किया है। यह सुन्दर ग्राम अत्यन्त ही ललाम है, जहाँ सुन्दर गढ़ है और जिनकी

1- सोमनाथ ग्रंथावली: खण्ड 1, नवाबोल्लास पृ0 831 छं0 1; पृ0 831 छं0 2; पृ0 832 छं0 3; पृ0 832छं0 4

बुर्जे इसी प्रकार शोभायमान हैं जैसे दिदेह । उन बुर्जियों पर सहस्त्रों पताकायें कलधौत रंग की विराज रही हैं जो युद्ध के जीतने का प्रतीक हैं । गढ़ में पूर्ण प्रकाश है और उसके राजा का निवास है । उसमें उत्तुंग बंगले और उन पर सुन्दर कलश विराजते हैं और वहाँ पर स्वर्णजटित राज सिंहासन है और प्रत्येक द्वार पर तोरण और वितान बना हुआ है । सुन्दर -सुन्दर झालरे लगीं हैं उस पर जैसे सूर्य की किरणों की आभा झलकती है । लगता है यह ब्रजराज का निवास स्थान है । लोहे से युक्त बड़े-बड़े दरवाजे शत्रु के लिए काल के समान हैं क्योंकि कीलयुक्त हैं । गढ़ के चारों तरफ सरिता , उसके आगे द्वार है और फिर चौमुहानी, फिर बाजार है अच्छी-अच्छी अनगिनत दुकानें हैं और लोगों के गृह (दरवाजे) पर श्रीयुत समाज जुटता है ब्राह्म्मण , क्षत्रिय, वणिक, कायस्थ सभी जाति के लोग अपने गुण और धर्म के अनुसार वहाँ रहते हैं । वहाँ पर चार आश्रमों की व्यवस्था है। अपना धर्म धारण करके बिना भय के विनय सम्पन्न लोग विचरते रहते हैं -

दीरघ सुग्राम, अति ही ललाम ।
जहँ गढ़ बिलंद, छलके अमंद ।।
बुर्जनि अनेक, मंडित, विवेक ।
सहसनि बिसाल, जुत जंत्र जाल ।।
तिनपै पताक, सरसंक धाक ।
कलधौत रंग, जितवार जंग ।। क्रमशः

गढ़ में प्रकास, नृप के अवास ।
राजनि सुधारि, रच्चे विचारि ।।
बगला उतंग, कलसनि सुढंग ।
छवि को छटान बैठन विधान ।।
तिनके मझार, गद्दी उदार ।
कंचन लसाइ जिनमैं सुभाई ।।
अरू चहूँ ओर आभा अछोर ।
प्रति द्वार द्वार । तोरन बिहार ।
आगै बितान । अति जोतिवान ।।
झालरि अनूप । रवि किरन रूप ।
इमि काम काम । बृजराज धाम ।।
अरू गढ़ दुवार । सोहहिं प्रकार ।
बड्डे कपाट । जुत लोह ठाट ।।
कोला कराल । रिपु कौ जुकाल ।
तिनमैं अनंत । ते जगमगंत ।।
अरू गढ़ परिष्य । सरिता सरिष्य ।
आगै सुद्वार । चौपथ बजार ।
अनगिन दुकान । राजति सुठान ।।
अरू गृह दराज । जुत श्री समाज ।।
बहु द्विज बसंत । निजु धर्म संत ।

छत्री सरौंड । पुनि गहैं मैडैं ।।

अरू बनिक जाति । निस द्यौस राति ।

जुत धर्मख्याल । उर मैं दयाल ।।

अरू धर्मसील । कायस्थ डील ।

बहु जाति और । लहि बसो ठौर ।।

आश्रम जु चारि । निजधर्म धारि ।

बिहरैं अभीत । अति ही विनीत ।[1]

इस एक से बीस छंद के बीच हमें महत्वपूर्ण जानकारी तत्कालीन समाज चित्रण के विषय में मिलती हैं । एक ओर तो जाति(वर्ण)का पता चलताहै दूसरी ओर उच्चवर्गीय आवास कैसे होते थे इसका विस्तृत वर्णन मिलता है । आश्रम व्यवस्था पर भी थोड़ा प्रकाश पड़ा है।

इसके अलावा बाग तालाब, सरोवर आदि का वर्णन में इस काव्य में हुआ है[2] छंद से कवि ने अपने का आश्रयदाता के मनोंरजन में विषय में शिकार खेलने का वर्णन किया है ।[3] इन सबके अलावा कवि ने यह भी लिखा कि किस प्रकार शासक अन्य शत्रुओं को हरा देताहै और उनके पेसकस(कर) वसूल करता है ।[4]

1- सोमनाथ ग्रंथावली· खण्ड 1, दीर्घनगर वर्णन, पृ० 819-20; छं० 1-20

2- सोमनाथ ग्रंथावली: खण्ड 1, दीर्घनगर वर्णन, पृ0820 -821 छं0 22-30

3- वही, कवित्त पृ0 823 छं0 2

4- वही, पृ0 825 छं0 12

तात्पर्य यह कि इस काव्य ग्रंथ में समाज की व्यवस्था पर अधिकाधिक सामग्री हमें उपलब्ध होती है ।

यद्यपि यह रचना बहुत विस्तृत नहीं है किन्तु जिसके आश्रय में कवि था केवल उसका ही नहीं वरन् उसके स्थान का भी वर्णन प्रस्तुत करता है । इसका अभिप्राय है कि कवि को उस स्थान से भी स्वभाविक प्रेम है बनावटी नहीं । धरतीमाता के प्रति इस देश की परम्परा का धर्म रहा है और आज के युग में राष्ट्रप्रेम के रूप में परिवर्तित और अभिवृद्ध हुआ है । इसलिए इस वर्णन का महत्व अपने गुण के कारण है, इसमें अपनी धरती के प्रति प्रेम का सहज भाव है ।

सोमनाथ केवल आचार्य कवि नहीं थे, अपितु ज्योतिष विद्या के भी विद्वान् थे । कवि ने संग्रामदर्पण नामक ग्रंथ में ज्योतिषशास्त्र का सहज ढंग से ज्ञान दिया है।[1]

सुजान विलास की रचना कविवर सोमनाथ ने संवत् 1807 वि० में की इसमें मध्ययुग में प्रचलित सिंहासन बत्तीसी की कथा है ।[2]

माधवविनोद नाटक संस्कृत के प्रख्यात नाटककार भवभूति के प्रसिद्ध नाटक मालती माधव का पद्यबद्ध अनुवाद है ।[3] नाटक के माध्यम से विभिन्न

1- विस्तृत विवरण हेतु, सोमनाथ ग्रंथावली खण्ड 1, संग्रामदर्पण

2- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ० 81 भूमिका से उद्धृत

3- वही, पृ० 85

प्रकारके वेशभूषा आदि का पता चलता है । प्रेमपच्चीसी एक प्रकार का स्वछंद प्रेमकाव्य है। आरंम्भ में एक दोहे में प्रेमदेव नंदलाल की वंदना है अन्त में दोहे में फलश्रुति के साथ-साथ रचना का निमित्त भी बता दिया है । कवि कहते है :

पच्चीसी यह प्रेम की सुनि सुख होवै मित्त ।

सोमनाथ कवि ने रच्यौ नंदकिसोर निमित्त ।[1]

कवि प्रेमी का सारा उपालंभ भगवान् कृष्ण से ही है । अतः रचना कृष्ण काव्य के अन्तर्गत आती है ।

महादेव जीको ब्याहुलौ या शशिनाथ विनोद नामक प्रबंध काव्य में भगवती उमा और देवाधिदेव महादेव जी के विवाह का रोचक वर्णन है। यह विशुद्ध भक्तिकाव्य है । विवाह में वैदिक विधियों के साथ लौकिक कृत्यों का भी मनोंरजक और लोकग्राही चित्रण हुआ है । विवाह के समय भोजन के जितने व्यंजनों का वर्णन कवि सोमनाथ ने किया है कुछ गिने चुने ही कवियों ने किया है -

बनी असरफी से र बड़ी बरफी अरू पेरा।

मोदक मगद मलूक और मट्ठै पहँ सेरा ।।

फेनी गूँका गजक भुरभुरे सेव सुहारे ।

जोर जलेबी पुंज, कंद सी पगे छुहारे ।।

1- सोमनाथ ग्रंथावली, खण्ड 1, पृ0 88

निकुती छोटो छाँटि मंजु मुतिलडू बनाए ।
सरस अंमृती खुरमा सुंदर बेस सजाए ।।
सुन्दर पेंठे पाग और खाजे अति खासे ।
ल्याचोदाने और सकरपारै परकासै ।।
उरद मूँग को पिठो पोसि के लडुवा कोने ।
बहुत घोव में भूजि सिरोंजा सहित नवोनै ।।
और चंद से गोल दही में बरा भिजोये ।
लौनैं मिरच अरू लौंग पोसि तोनि मधिनु सँजोये ।।
और साज अनेक और फल मीठे खट्ठे ।
षट्रस व्यंजन सकल भाँति के बने इकट्ठे ।
चूरन पाँच महाकवि विधि बनवाए रखाए ।
मोठे चूरन और चिरपिरे और कषाए ।।[1]

इस प्रकार इस ग्रंथ से भो समाज चित्रण केलिए अच्छो सामग्री मिलो । समाज में प्रचलित वैवाहिक संस्कार तथा खानपान का विस्तृत वर्णन इस पुस्तक से प्राप्त हुआ

इस प्रकार कवि सोमनाथ ने सारो काव्यविधाओं को साधिकार अपनाया और सफलता के साथ उन्हें निभाया भो है । ऐसो चतुर्मुखी दृष्टि और नवोन्मेषिनो प्रतिभा के धनी रीतिकार आचार्य कवियों में शायद हो कोई मिले ।

1- सोमनाथ ग्रंथावली महादेवजो कौ ब्याहुलौ या शशिनाथ विनोद,
पृ0 524 छ0 1-5

देव कवि :

देव उस अट्ठारहवीं शताब्दी के कवि हैं जिसमें सब कुछ बिखर रहा था, साम्राज्य टूट रहा था, सामन्त उभर रहे थे, भक्ति बाह्याचार में अधिक चली जा रही थी, मनुष्य को कहीं चैन नहीं था, सम्बन्धों में अविश्वास आने लगा था, ऐसे जमाने में भक्ति युग के बाद मानवीय मूल्यों की नयी परीक्षा का अवसर जिन्हें मिला, उन्होंने इन्हें कवि होकर परखा, अपने कर्म में पूरी निष्ठा रखी, सजगता बरती, मनुष्य को जोड़ने वाले व्यापार की सूक्ष्म अर्थवत्ता की पहचान कराई और आस्तिक भाव को पूरी तरह संभाल कर रखा।[1]

कवि देव संस्कृत प्राकृत की मुक्तक परम्परा के एक ओर उत्तराधिकारी थे, दूसरी ओर लोकजीवन में अभिव्याप्त श्रीकृष्ण की लीलाओं की अभिव्यक्तियों से अभिभूत थे और किसी न किसी रूप में अलौकिक प्यार के भी साझीदार थे।[2]

श्रृंगार-कवियों में उच्चकोटि की गणना में आने वाले कवि देव का जन्म हिन्दी साहित्य के इतिहासकारों ने संवत् 1730 और रचनाकाल संवत् 1746 से 1790 के लगभग तक माना है।[3]

.. देव जाति के धौसरिया

1- देव: देव की दीपशिखा: विद्यानिवास मिश्र, पृ0 7 भूमिका से उद्धृत

2- वही, पृ0 8

3- डा0 नगेन्द्र; देव और उनकी कविता, द्वितीय संस्करण, 1957 पृ079

ब्राह्मण थे ।[1] देव का जन्म इटावा शहर में हुआ ।[2]

देव के 18, 19 ग्रंथ ही उपलब्ध हैं जिसमें मुख्य ग्रंथ भाव विलास, भवानी विलास, सुजानविनोद रसविलास, काव्यरसायन तथा सुखसागर तरंग आदि मुख्य हैं ।[3]

इनके अलावा जो ग्रन्थ प्राप्त हैं उनमें देवचरित्र, वैराग्यशतक, देवमायप्रपंच, अष्टयाम, प्रेमचन्द्रिका आदि हैं ।[4] देव का एक अन्य ग्रन्थ "शब्दरसायन" है जिसे सबसे प्रौढ़ रीतिग्रंथ मानागया है।[5]

"शब्द रसायन " में काव्य-स्वरूप का विश्लेषण कवि ने इस प्रकार किया है -

> शब्द सुमति मुख ते कढ़ै, लै पद बचननि अर्थ ।
>
> छन्द , भाव, भूषण सरस, सो कहि काव्य समर्थ ।[6]

इस छन्द में काव्य के पूर्णतम स्वरूप की अभिव्यक्ति की है और इसे ही समर्थ काव्य

1- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार-कवियों की नैतिक दृष्टि , पृ08
2- देव: देव की दीपशिखा: विद्यानिवास मिश्र पृ0 7
3- डॉ0 नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ0 79
4- डॉ0 पुष्पारानी जायसवाल, देवग्रंथावली
5- डॉ0 नगेन्द्र: देव और उनकी कविता, पृ0 56
6- देव: शब्द रसायन पृ0 2 छं0 10

की संज्ञा दी है । काव्य के मूल उपादानो में भाव, भूषण §अलंकार§ सरस §रस§ छन्द आदि की गणना की जाती है । इसमें सन्देह नहीं कि देव ने इसमें अपने भाव एवं कला दोनों पक्षों का समर्थन बहुत दृढ़तापूर्वक किया है ।

कवि देव ने श्रृंगार की तुलना में अन्य रसों का विश्लेषण अधिक निष्ठा के साथ नहीं किया । फिर भी कुछ रसों के अवान्तर भेदों और उनके स्वरूप के विवेचन में इनकी सूक्ष्म एवं प्रौढ़ मेधा का परिचय अवश्य मिलता है ।[1]

भाव विलास में देव ने अलंकार प्रकरण को छोड़कर समस्त वर्णन श्रृंगार के ही परिवेश में किया है । श्रृंगार को प्रथमत: दो भागों में विभाजित किया है संयोग और वियोग :

रस सिंगार के भेद द्वै, हैं वियोग संजोग ।[2]

भवानी विलास में आचार्य देव ने नायक नायिका भेद प्रारम्भ ~~प्रारम्भ~~ के पूर्व राधा कृष्ण को शुद्ध सच्चिदानन्द और श्रृंगार की मूर्ति रूप से अभिहित किया है :

श्यामा श्याम किशोर जुग, पद बन्दौं जग बन्द ।
मूरति रति सिंगार की, सुद्ध सच्चिदानन्द ।।[3]

1- डॉ० किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ० 131

2- देव: भवानी विलास, पृ० 12

3- देव: भवानी विलास, पृ० 1

इस प्रकार आचार्य देव मूलत: लौकिक श्रृंगार के ही गायक थे और उस युग में इनकी तुलना में श्रृंगार के ऐसे जबरदस्त गायक बहुत कम ही मिल पाते हैं । इनके विस्तृत श्रृंगार विवेचन को रीतिकाल के अन्य कवियों की तुलना में अप्रतिम माना है ।[1]

देव का नायक नायिका भेद विवेचन अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत और मौलिक है। यो नायिका भेद से संबंधित देव ने कई ग्रन्थों की रचना की है, किन्तु उनमें मुख्य ग्रन्थ भाव विलास, भवानी विलास, रसविलास, सुख-सागरतंरग, सुजानविनोद आदि हैं जिसमें रसविलास की अधिक श्लाधा की गयी है ।[2]

भवानी विलास के तृतीय विलास के अन्तर्गत अंश भेद के आधार पर स्वकीया नायिका का विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया है ।[3] देव ने भाव विलास में नायिका भेद के संदर्भ में 385 भेदों का संकेत कियाहै ।[4]

जाति विलास तथा सुखसागर तरंग में भी कवि ने नायिका के भेद का निरूपण किया है। किन्तु ये नायिका भेद जाति के आधार पर व्यवसाय के आधार पर किया जिसमें नगर वासिनी स्त्रियों मे नागिरि दूती द्वारपालिका, जौहरिन, छीपनि, पटइनि, सुनारिनि, गंधिनी, तेलिनि, तमोलिनि, हलवाइनि, बनीनी, कुम्हारिनि, दरजिभि, कंजरिनि, जुलाहिनि,

---

1- डॉ0 नगेन्द्र: रीत-काव्य की भूमिका तथा देव और उनकी कविता, पृ0 90

2- मिश्रबन्धु, हिन्दी नवरत्न, पृ0 282 पंचम संस्करण

3- भवानी विलास, तृतीय विलास, पृ0 25

4- देव: भाव विलास, पृ04 छं0 97

मोचिनि , बढ़इनि, लुहारिनि, चूहरिनि, गणिका, ब्राह्मणी, छत्रानी, खजानी वैस्यानी, काइथिनि, किरारिन, भरभूजनि, नाइनि, मालिनि, धोबिनि, आदि का चित्रण किया है ।[1] जाति विलास का यह चित्रण कवि देव ने एक तटस्थ कलाकार की भाँति किया।[2]

ऐश्वर्य के बीच रहते हुए कवि देव ने गाँव के रीतिरिवाज, गाँव की वेशभूषा, गाँव के उल्लास, गाँव के वातावरण और गाँव के सहज प्यार का भी चित्रण देव नेकिया ।[3] कवि देव की यह बड़ी उपलब्धि है ।

ग्रामीण नायिका-भेद के बारे में कवि में कविदेव उतने ही सजग दिखाई पड़ते हैं जितेन कि अन्य बातों में । ग्रामीण नायिका भेद का जो अनुपम चित्र कवि देव ने प्रस्तुत किया वह अतुलनीय है। पहले कवि देव ने इस बात पर प्रकाश डाला कि गाँव क्याहै तदुपरान्त यह बताया कि कौन सी स्त्री गाँव में रहेन के कारण ग्रामीण की संज्ञा से विभूषित हुयी ।

बन मैं जो लघु पुर बसैं तासो कहिये गांव ।
तहाँ बसै ग्रामीन तिय गँवारी ताको नाँव ।।
अहिरनि अरू काछनि कही कलारि और कहारि ।
और तुनेरिन पाँच विधि बरनहु नारि गँवारि ।।[4]

1- देव ग्रंथावली: सुखसागर तरंग, डा० पुष्पारानी जायसवाल, पृ० 91 से 97 तक

2- देव देव की दीपशिखा, भूमिका से उद्धृत ।

3- देव: देव की दीपशिखा, भूमिका से उद्धृत ।

4- देव ग्रंथावली: लक्ष्मीधर मालवीय, पृ० 187

कहीं- कहीं जाटिनी और कुरूमिनि को भी ग्रामीण नायिका के अन्तर्गत रखा गया ।[1]

कवि ने बनवासिनी[2] स्त्रियों के अन्तर्गत ऋषिपत्नी ब्याध्र-बधू भीलनी ,को रखातथा सैन्योवासिनी[3] के अन्तर्गत वृषली, वेश्या, मुकेरिन को रखा और मार्ग वासिनी[4] के अन्तर्गत बनजारिनि, योगिनी, नटी कंजरिनि को रखा ।

देव ने स्वकीया परकीया आदि नारियों के विभिन्न भेद बताये हैं । इस प्रकार सुखसागरतरंग को नायिका भेद का एक विश्व कोष समझना चाहिए । वास्तव में देव के सुन्दर छन्दों का उन्हीं के द्वारा चयन होने के कारण इस ग्रंथ का महत्व और ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक है।[5] चूँकि यह ग्रंथ अष्टयाम जाति विलास रसविलास और भाव विलास आदि ग्रंथों के उत्कृष्ट छन्दों को संकलित करके प्रस्तुत कियाहै अतः देव मर्मज्ञ महोदयों ने इस ग्रन्थ को प्रौढ़ता और उत्कृष्टता की अत्यधिक श्लाघा की है ।[6]

1- देव ग्रंथावली: भाग 1, डॉ० पुष्पारानी जायसवाल ,पृ० 97 छं० 292; पृ० 97 छं० 293

2- देव ग्रंथावली: भाग 1, डॉ० पुष्पारानी जायसवाल पृ० 98 छं० 298 पृ० 98 छं० 299, पृ०99 छं० 300

3- वही, पृ० 99 छं० 301, पृ० 99 छं० 302, पृ० 99 छं० 303 ।

4- वही, पृ० 99 छं० 304, पृ० 100 छं० 305, पृ० 100 छं० 306, पृ० 100 छं० 307

5- डॉ० नगेन्द्र: रीति-काव्य की भूमिका तथा देवऔर उनकी कविता, पृ० 38

6- मिश्रबन्धु, हिन्दी नवरत्न, पृ० 291

कवि देव ने नायिका भेद, वर्गीकरण के सन्दर्भ में कुछ नवीन ढंग से इसकी संगतियाँ बैठाने का प्रबल प्रयास किया है । भवानी विलास में इन संगतियों के दो रूप है: प्रथम के अन्तर्गत पूर्वानुराग , प्रथम संयोग और सुख भोग आताहै, जिसके अन्तर्गत क्रमशः मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा के विभिन्न भेदों को अन्तर्भूत किया गया है और द्वितीय के अन्तर्गत मुग्धा और प्रौढ़ा के क्रमशः काम की दस दशाएँ दस अवस्थाएँ एवं दस हावों का वर्णन किया गया है :

मुग्ध तिया की दस दसा, कहो पूर्व अनुराग ।
दसाऽवस्थ मध्यानि की बरनत सुनहु सभाग ।।[1]

इस प्रकार कवि देव नेजो विभिन्न प्रकार की नायिका भेद का चित्र प्रस्तुत कियाहै उससे हमें तत्कालीन समाज में स्त्रियों की जाति, उनके द्वारा अपनाये गये व्यवसाय, तथा उनकी स्थिति उनके आपसी संबंधों आदि पर विशेष रूप से प्रकाश पड़ताहै जिसके फलस्वरूप समाज में स्त्रियों की दशा जानने में हमें पर्याप्त सहायता मिली ।

इसी प्रकार वैराग्य शतक में कवि ने समस्त दार्शनिक विचार माया-मोह,अज्ञानता,ब्रह्म और आत्मा के बारे में लिखा है साथ ही धर्म के वास्तविक रूप के बारे में भी बतातेहैं । कवि ने बतायाकि माया-मोह के प्रपंच मे फंसा हुआ व्यक्ति काम, क्रोध,कपट सबका शिकार हो जाता है अत: संसार में विरोध केबीजबोता रहता है । सदैव वह लाभ की ही चिंता में रहताहै वह जगह-जगह

1- देव: भवानी विलास पृ0 70

परमेश्वर की तलाश में (तीर्थयात्रा) घूमता रहता है किन्तु अज्ञानता के कारण वह यह नहीं समझ पाता कि चौदहों भुवन, सातों दीप और नवों खण्ड में निवास करने वाले प्रभु तो स्वयं उसमें विराजमान हैं ।[1]

किन्तु जब वह ईश्वर के स्वरूप कोसमझ लेता है तब मनुष्य को इस सत्य के अलावा और कुछ नहीं दिखता :

तुही पंचतत्त्व, तुही सत्त्व रज तम थावर औ जंगम, भयो भव मैं ।
तेरीये विलास लौटि तोही मैं समान्यो, कहू जान्यो न परत पहिचानो जब जब मैं
देख्यो नहीं जात, तुही देखियत जहां तहां दूसरो न देख्यो देव तुही देख्यो अब।[2]

इसीलिए कवि ने यह बताया कि बाह्याडम्बर से कुछ नहीं मिलने वाला बल्कि इन सारे दिखावे को छोड़कर अज्ञानता(माया-मोह) का आवरण हटा कर देखो तो सम्पूर्ण चेतन आनंदमय स्वरूप का रूप स्वयं तुम्हें अपनी आत्मा में मिलेगा:

कथा मैं न कंथा मैं न तीरथ के पंथा मैं न पोथी मैं न पाथ मैं, न साथ की बसति मैं ।
जटा मैं न मुंडन, न तिलक त्रिपुंडन, न नदी कूप कुंडन, अन्हानदान रीति में ।
पीठ मठ मंडल न कुंडल कमंडल मैं, माला दंड मैं न देव देहरे मसीत मैं ।
आपही अपार, पारावार, प्रभु पूरि रह्यो पाइयो प्रगट परमेसुर प्रतीति मैं ।।[3]

1- वैराग्य शतक, पृ0 37 छं0 25; तत्वदर्शन पच्चीसी, पृ0 38 छं0 4; तत्वदर्शन पच्चीसी पृ0 39 छं0 10; पृ0 38 छं0 5
2- वैराग्यशतक, तत्वदर्शन पच्चीसी पृ0 39 छं0 9
3- वैराग्य शतक, पृ0 40 छं0 18; देव की दीपशिखा, पृ0 65 छं0 100

अज्ञान की स्थिति समाप्त हो जाने पर साधक और साध्य के बीच अभेद हो जाता है । कवि ने अद्वैतवाद के साथ द्वैताद्वैत सिद्धान्त की स्पष्ट झलक दी है :

स्याम सरूप घटा ज्यों अनूपम , नील पटा तन राधे के झूमैं ।
राधे के अंग के रंग रँग्यौ पट बीजुरी ज्यों धन से तन भूमैं ।।
है प्रतिमूरति दोऊ दुहूँ की बिधौ प्रतिबिंब वही घट दूमैं ।
एक हीदेव दुदेह दुबेहरै"देव " दुधा इक देह दुहूँ मैं ।। [1]

वर्षा ऋतु के मेदुर मेघो में राधा-माधव के दर्शन करने वाले महाकवि देव कहते है कि आकाश में उमड़ते- घुमड़ते काले कजरारे मेघों में कृष्ण के श्यामल शरीर और महारानी राधा के नील पट के स्पष्ट दर्शन हो रहे है । कृष्ण का नील कलेवर और राधा की नीली साड़ी इनमेघ-धराओं में दिखाई पड़ रहे हैं - ये काले बादल मानों इन्हीं दोनो के प्रतिरूप हो । इनमें रहकर जोबिजली चमकती है वह राधा के गौरवर्ण तथा कृष्ण के पीताम्बर प्रतिबिम्ब है ।यो दमकती हुयी दामिनी में कवि चम्पक-हेमवर्णी राधा के रंग और कृष्ण के पीले रेशमी कहराते हुए दुपट्टे के दर्शन करता है। काले मेघों और राधा माधव की अंगच्छवियों मेंएकरूपता बताते हुए वह उनमे एक दूसरे का प्रतिरूप देखकरआनन्दित होता है । राधा में कृष्ण और कृष्ण में राधा के दर्शन तो होते हीहै, यहाँ काले मेघो में चंचला भी राधा माधव की सी प्रतिमूर्ति बन गई है। एक ही में दो शरीर और दो शरीर में एक ही छवि प्रतिबिम्बित है ।

1- देव की दीपशिखा, पृ0 67 छं0 103

कवि की आध्यात्मिक दृष्टि का इससे बढ़कर और क्या उदाहरण हो सकता है ।

कवि देव द्वारा रचित अन्य ग्रन्थों से हमें तत्कालीन समाज की वेशभूषा प्रसाधन तथा खान पान, त्यौहार, पर्वोत्सव आदि के बारे में जानने मे सहायता मिली । चूँकि कवि ने कृष्ण को नायक और राधिका को नायिका का आधार माना है फलत: मनोरंजन के साधनों में विशेषकर साथ खेलने वाले खेल चोर-मिहीचनी आदि का अधिक चित्रण किया । होली के अवसर पर राधा कृष्ण एक दूसरे पर रंग गुलाल डालते हैं । कहने का तात्पर्य यह है कि कवि ने लगभग-लगभग समाज के सभी पक्षों पर दृष्टि डाली है जिसके परिणामस्वरूप हमें समाज चित्रण के विभिन्न पहलुओं पर पर्याप्त सामग्री भी देव की कृतियों से मिली ।

कवि ने सबसे अच्छा चित्र तत्कालीन समय की गिरती हुयी राजनैतिक अवस्था का प्रस्तुत किया है :

> साहिब अंध, मुसाहिब मूक, सभाबहिरी, रंगरीझकोमाच्यो ।
> भूल्यौ तहां, भटक्यो भट औघट, बूड़िबे को काहू कर्म न बाच्यो ।
> भेष न सूझयो, कहयो समझयो न बतायो सुन्यो न कहा रूचि राच्यो ।
> देव तहां निधरे नट की बिगरी मति को सगरी निसि नाच्यो ।।[1]

प्रस्तुत छन्द में कवि ने पतित राजनैतिक अवस्था का जो चित्र प्रस्तुत किया है

1- वैराग्यशतक: जगदर्शन पच्चीसी, पृ0 33 छं0 25

उससे समाज के स्वरूप की स्पष्ट झलक मिल जाती है ।

यद्यपि देव कवि के जितने ग्रन्थ हैं उन्हें स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं कहा जा सकता क्योंकि सभीएक दूसरे पर अवलम्बित हैं फिर महाकवि देव रीतिकाल के मान्य आचार्यों में माने जाते हैं ।[1]

भिखारीदास :

भिखारीदास जाति के कायस्थ एवं प्रतापगढ़ निवासी थे ।[2] ये संवत् 1791 से 1807 तक प्रतापगढ़ के अधिपति श्री पृथ्वी सिंह के भाई हिन्दूपति सिंह के आश्रम में रहे ।[3] आचार्य दास अट्ठारहवीं शताब्दी के उत्कृष्ट आचार्यों के अन्तर्गत आते हैं । काव्य प्रयोजन के सम्बन्ध में निस्संदेह आचार्य दास का दृष्टिकोण पर्याप्त मौलिक है। आचार्य दास केअनुसारकाव्य के तीन हेतु हैं - शक्ति, सुकवियों द्वारा सीखी, हुई काव्य रीति एवं लोकानुभव इन्हीं तथ्यों को आचार्य दास ने काव्य-रथ के रूपक द्वारा स्पष्ट किया है ।[4] दास के अनुसार जैसे रथ धुरन्धर (बैल) सूत (रथवाहक) और चक्र (पहिया) इन तीनों मे से किसी एक के अभाव में नहीं चल सकता , ठीक उसी प्रकार शक्ति काव्य रीति एवं लोकानुभव केबिना काव्य-रचना संभव नहीं ।

1- डॉ0 नगेन्द्र देवऔर उनकी कविता ,पृ0 79

2-डॉ0 शकुन्तला अरोरा: रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ09

3- वही

4- भिखारीदास:काव्यनिर्णय, पृ0 । छ0 12

आचार्य भिखारीदास ने अपने आदर्श रूप में एक प्रकार से सूर, तुलसी, केशवदास, बीरबल प्रभृति कवियों के नाम गिनाये है :

एक लहै तप पुंजन के फल ज्यों तुलसी अरू सूर गोसांई ।
एक लहै बहु सम्पति केशव भूषण ज्यों बरवीर बढ़ाई ।।
एकन्ह को जस ही सों प्रयोजन है रसखानि रहीम के नाई।
दास कवित्तैन की चरचा बुधवन्तन को सुख दै सब ठांई ।।[1]

काव्य की सजग कलात्मक साधना के लिए काव्य के समस्त स्पृहणीय तत्वों को सीखना अति अनिवार्य था । बिना सम्यक् जानकारी के काव्य-क्षेत्र में कूदना उस समय के कवियों केलिए सम्भव न था । अत: आचार्य भिखारीदास ने काव्यांग निरूपण के पूर्व हिन्दीकाव्य की भाषा के सम्बन्ध में पर्याप्त विवेचन किया है । आचार्य दास हिन्दीकाव्य परम्परा के आचार्य माने जाते हैं ।[2]

आचार्य दास ने काव्य की भाषा के लिए ब्रजभाषा को स्वीकार किया और कहा कि इसमें संस्कृत और फारसी के शब्दों का भी समावेश किया जा सकता है, यदि उन भाषाओं के शब्द हिन्दी में खप सकते हों । यह प्रयास भाषा को समृद्धि में पूर्ण सहायक हो सकता है ।[3] निस्सन्देह हिन्दी के लिए आचार्य भिखारीदास के भाषा विवेचन की यह नूतन उपलब्धि है ।

1- काव्य निर्णय, पृ0 4
2- डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 69
3- डॉ0 भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ0 136

भिखारीदास द्वारा प्रणीत काव्यशास्त्रीय ग्रन्थों में काव्य निर्णय, "श्रृंगारनिर्णय, रससारांश, तथा छंदोर्णव पिंगल आदि महत्वपूर्ण हैं ।[1]

काव्यनिर्णय नामक ग्रन्थ में काव्य प्रयोजन, अलंकारमूल वर्णन, रसांग वर्णन, ध्वनि वर्णन, गुणीभूत व्यंग्य वर्णन, गुणदोष आदिअन्य सभी अंगों का विवेचन किया गयाहै ।[2]

आचार्य दास के श्रृंगार एवं नायक-नायिका भेद निरूपक ग्रन्थ में श्रृंगार निर्णय का विशेष उल्लेख किया जाता है क्योंकि श्रृंगारनिर्णय नामक ग्रन्थ में भिखारीदास ने श्रृंगार और नायक नायिका भेद का बड़ा ही सर्वांग पूर्ण एवं वैज्ञानिक विवेचन प्रस्तुत किया है और यह क्रमबद्ध वैज्ञानिक विवेचन आचार्य देव की तुलना में अधिक महत्व का माना जाता है ।

आचार्य दास नेभी देवकवि की भाँति सामान्यतया श्रृंगार को दो भागों मेंबाँटा है (1) संयोग श्रृंगार (2) वियोग श्रृंगार । इसके निरूपण में परिपाटी- पालन की ही प्रवृत्ति पाई जाती है, किसी मौलिक, धारणा का परिचय नहीं मिलता । किन्तु आचार्य भिखारीदास ने वियोग श्रृंगार को चार भागों में बाँटा । वियोग श्रृंगार के चारों भेद के अन्तर्गत दस दशाओं की स्थिति मानी है ।[3] दस दशाओं का यह वर्गीकरण आचार्य भिखारीदास का अपना है। इन्हें उन्होंने पूर्व के आचार्यों के कथित मार्ग से कुछ हटकर अपने ढंग

1- (डॉ0 भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ0 147; (भिखारीदास ग्रंथावली, (प्रथम खण्ड) सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 5-6; डॉ0 (शकुन्तला अरोरा रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि; पृ0 9

2- डा0 भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र, काइतिहास पृ0 147

3- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड , पृ0 155

से प्रस्तुत किया है । भिखारीदास ने काफी गम्भीरता से नायिका भेद की असंगतियों को सुलझाया है ।[1]

आचार्य भिखारीदास ने नायिका भेद के अन्तर्गत एक अन्य नवीन उद्भावना की भी चर्चा की जाती है । वह नवीन उद्भावना यह है कि इन्होंने सभी रखेलियों को स्वाधीन पतिका (आदर्श पत्नी) के अन्तर्गत रखकर बड़ी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया है ।[2] यद्यपि आचार्य दास को यह संकेत आचार्य देव से ही मिला था, किन्तु इसे ग्राह्य बनाने का समस्त श्रेय आचार्य दास को ही है ।

आचार्य दास का एक मात्र नवरस निरूपक ग्रन्थ रस सारांश है। इसग्रन्थ की रचना सं0 1791 में हुयी थी ।[3]

रस सारांश में नवरसों का विवेचन अत्यन्त संक्षिप्त शैली में किया गया है । "सारांश" शब्द भी इसके संक्षिप्तीकरण की ओर स्पष्ट संकेत कर रहा है । इस ग्रन्थ में प्रायः दोहों की अधिकता है। यह ग्रन्थ अन्य कवियों की तुलना में मौलिक माना गया है । [4]

सभी आचार्य अथवा सभी कवि अपने से पूर्व हुयी रचनाओं को अथवा पूर्व रचित ग्रन्थों को आधार बनाते हैं । आचार्य भिखारीदास ने इस ग्रन्थ

1- डा0 नगेन्द्र: रीति-काव्य की भूमिका पृ0 163

2- डॉ0 नगेन्द्र: रीति-काव्य की भूमिका, पृ0 163

3- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम भाग, सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ085

4- मिश्रबन्धु: दूसरा भाग, द्वितीय संस्करण, पृ0 635

के विवेच्य विषयों के आधार ग्रन्थ काव्य प्रकाश,[1] दशरूपक[2], रसमंजरी[3], रसगंगाधर[4] तथा श्रृंगार तिलक[5] आदि हैं । किन्तु इन आधार ग्रन्थों को सर्वत्र महत्त्व नहीं दिया गया है, क्योंकि विवेचन आचार्य दास ने अपनेढंग से किया है ।

रस सारांश में श्रृंगारेतर रसो में केवल बीर रस के आलम्बन भेद मे सत्यवीर, दयावीर, रणवीर और दानवीर जैसे चार भेदों की उद्भावना की है ।[6]

श्रृंगार निरूपण में आचार्य भिखारीदास ने पर्याप्त पांडित्य प्रदर्शित किया है । रस सारांश में विवेचित तथ्यों के आधार पर इसका सहज उद्घाटन किया जा सकता है । आचार्य भिखारीदास ने प्रथमतः परम्परानुसार श्रृंगार को मुख्यतः दो भागों (संयोग, वियोग श्रृंगार) में तो विभाजित ही किया था पुनः इनके दो- दो भेद कर डाले है :

(1) सम श्रृंगार (2) मिश्रित श्रृंगार ।

1- काव्य प्रकाश आचार्य मम्मट, (टीकाकार हरिमंगल मिश्र) :
2- दशरूपक: धनंजय (टीकाकार भोलाशंकर व्यास),
3- रस मंजरी भानु (टीकाकार जगन्नाथ पाठक)
4- रसगंगाधर: पण्डितराज जगन्नाथ
5- श्रृंगारतिलक: कालिदास
6- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, संपादक आचार्य पंण्डित विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ066

सम श्रृंगार से दास का अभिप्राय है - जहाँ नायक अथवा नायिका का संयोगात्मक अथवा वियोगात्मक वर्णन किया जाय ।[1] मिश्रित श्रृंगार से अभिप्राय है- जहाँ संयोग में वियोग और वियोग में संयोग का वर्णन किया जाय ।[2]

आचार्य दास ने मिश्रित (संयोग में वियोग) के उदाहरण इस प्रकार दिये हैं -

संयोग में वियोग -

सौतुख सपने देख सुनि, प्रियबिछुरनकी बात ।
सुख हीमें दुख को उदय, दम्पत्ति हूं ह्वै जात।।[3]

वियोग में संयोग : पत्री सगुन संदेश लखि, पिय वस्तुनि को पाइ ।
अनुरागिनी वियोग में, हर्षोदय ह्वै जाइ ।।[4]

आचार्य भिखारीदास ने श्रृंगार की सीमा यहीं नहीं समाप्त की, अपितु उसके परिविस्तार को उत्तरोत्तर संबंधित करने की पूर्ण सक्रियता दिखायी है। इस दृष्टि से इन्होंने संयोग श्रृंगार के दो मुख्य भेदों का उल्लेख

1- डॉ0 सत्यदेव चौधरी: हिन्दी रीति परम्परा के प्रमुख आचार्य, पृ. 345

2- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ0 61 पृ0 345

3- भिखारीदास ग्रंथावली: छं0 420

4- भिखारीदास ग्रंथावली: छं0 423

किया है -

§1§ संयोग श्रृंगार §2§ सामान्य श्रृंगार

जहाँ दम्पति मिलकर बिहार करते हैं, वहाँ संयोग श्रृंगार होता है और जहाँ हाव, हेला आदि अनुभावों के माध्यम से नायक-नायिका के सौन्दर्य वैविध्य का वर्णन होताहै, वहाँ सामान्य श्रृंगार होता है।[1]

श्रृंगार को जन्य नैतिकता के आधार पर दो मुख्य भागों में विभाजित किया गया है -

§1§ नायक जन्य श्रृंगार §2§ नायिका जन्य श्रृंगार ।[2]

श्रृंगार निर्णय की भांति रस सारांश में निरूपति नायक-नायिका भेद का आधार संस्कृत में लिखित भानुकृत रस मंजरी है।[3] फिर भी आचार्य दास ने रसमंजरी में उल्लिखत सभी भेदों को ज्यों का त्यों नहीं ग्रहण किया, अपितु उनका वर्गीकरण उन्होंने अपने ढंग से किया है। इस संदर्भ में कुछ लोगों का कथन है कि भिखारीदास के रस सारांश में कथित नायक-नायिका भेद रस मंजरी से भिन्न होते हुए भी पूर्ववर्ती हिन्दी परम्परा से सर्वथा भिन्न नहीं है।[4]

1- मिलि बिहरें दंपति जहां सो संजोग सिंगारू ।
भिन्न भिन्न छविबरनिये, सो सामान्य विचारू ।।
- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम भाग, पृ0 42 छं0 284

2- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम खण्ड, पृ0 64

3- डॉ0 किशोरी लाल: रीतिकवियों को मौलिक देन, पृ0 138

4- डॉ0 सच्चिदानन्द चौधरी: हिन्दी काव्य शास्त्र में रस सिद्धान्त पृ0 310

किन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या दास ने वर्गीकरण की वही प्रक्रिया अपनायी जो पूर्ववर्ती हिन्दी नायक नायिका भेद के आचार्यों में मिलती है । इस दृष्टि से देखने पर पता चलता है कि समस्त रीति परम्परा में आचार्य भिखारीदास ही ऐसे आचार्य हैं, जिन्होंने नायक-नायिका भेद के क्रमबद्ध विवेचन में अपना पूर्ण पाण्डित्य प्रदर्शित किया है सर्वप्रथम आचार्य भिखारीदास की नवीनता का दर्शन हमें उनकी परकीया नायिका के प्रकृति भेदों में होता है ।

आचार्य भिखारीदास ने ही सर्वप्रथम परकीया निरूपण में वर्गीकरण विषयक नूतन चेष्टा की । आचार्य दास ने सर्वप्रथम परकीया के महत्व को स्वीकार किया और श्रीमानों के भवन में रहने वाली अन्य दाराओं को भी स्वकीया की कोटि में रखने का सफल प्रयास किया ।[1] आचार्य दास के इस परकीया प्रेम की प्रचुरता का उल्लेख करते हुए किसी ने लिखा है :

" हिन्दीकाव्य में इन्हें परकीया प्रेम की प्रचुरता दिखाई पड़ी जो रस की दृष्टि से रसाभास के अन्तर्गत आता है । बहुत से स्थलों पर तो राधा-कृष्ण का नाम आने से देव काव्य का आरोप हो जाता है और दोष का कुछ परिहार हो जाता है । पर सर्वत्र ऐसा नहीं होता । इससे दास जी ने स्वकीया का लक्षण कुछ अधिक व्यापक करना चाहा ।[2]

1- श्रृंगार निर्णय: संपादक रामकृष्ण वर्मा, पृ0 22

2- हिन्दी साहित्य का इतिहास: आचार्य पं0 रामचन्द्र शुक्ल, पृ0 278

इस प्रकार आचार्य दास ने परकीया को इयत्ता को अन्य आचार्यों की तुलना में अधिक गहराई के साथ ग्रहण किया वास्तव में स्वकीया के अन्तर्गत परकीया का समावेश भिखारीदास की मौलिक स्थापना की ।[1]

अस्तु , दास की नायिका भेद के क्षेत्र में जो मौलिकता मिलती है, उसका निष्कर्ष यों है -

॥क॥ वर्गीकरण के माध्यम से विवेचित नायिका भेद बहुत व्यवस्थित है।

॥ख॥ दास जी की मान्यताओं में उत्तरोत्तर परिष्करण होता रहा इस कारण तद्विषयक तर्क एवं धारणाएँ अधिक पुष्ट एवं आधार है ।

॥ग॥ रखेलियों को भी स्वकीया के अन्तर्गत रखकर उस क्षेत्र में निश्चय ही उन्होंने एक नवीन धारणा का परिचय दिया ।

॥घ॥ इनका जैसा वर्गीकरण न तो जल्दी संस्कृत मे न हिन्दी में देखने को मिलता है ।

देव कवि की ही भाँति आचार्य भिखारीदास ने जो नायक नायिका भेद का चित्र दिया है उससे हमें नारियों की स्थिति के बारे में तो पता चलता ही है साथ ही संयोग और वियोग श्रृंगार के रूप में स्त्रियों के अलंकरण, खान-पान वेशभूषा, मनोरंजन ,प्रसाधन आदि सभी पहलुओं पर प्रकाश पड़ता है ।

1- भिखारीदास ग्रंथावली: प्रथम भाग , पृ0 63, डॉ0 किशोरीलाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 140

संयोग के समय स्त्रियां और पुरूष दोनों ही अच्छे वस्त्र और आभूषण आदि से अलंकृत रहते थे अतः यह जानने में सहायता मिली कि कौन कौन से वस्त्र तथा आभूषण आदि प्रचलित थे । जबकि वियोग में स्त्रियाँ आभूषणों आदि का परित्याग कर देती थी तथा चंदन आदि लेप का प्रसाधन के रूप में प्रयोग करती थी जो उनके शरीर को शीतलता प्रदान करें ।

संयोग होने पर नायक नायिका होली, आँख मिहोचनी जैसे खेल एक साथ खेलती थीं । इस प्रकार मनोरंजन के साधन पर प्रकाश पड़ता है ।

स्वकीया परकीया, गणिका आदि के भेद के आधार पर तत्कालीन समाज में नारियों के कितने रूप और क्या स्थान था यह पता चलता है ।

कहने का तात्पर्य यह है कि भिखारी दास जी की काव्य ग्रंथों से तत्कालीन समाज चित्रण करने में पर्याप्त सहयोग मिला ।

<u>महाकवि भूषण :</u> भूषण महाराज कान्यकुब्ज ब्राह्मण कश्यप गोत्री त्रिपाठी (तिवारी) थे इनके पिता का नाम रत्नाकर था और ये त्रिविक्रमपुर (वर्तमान तिकवाँपुर) में रहते थे । यहाँ कवि भूषण ने अपना वंश परिचय इन शब्दों में दिया है :

> द्विज कनौज कुल कश्यपी, रतनाकर सुत धीर।
> बसत त्रिविक्रमपुर नगर तरनि तनूजा तीर ।।[1]

1- भूषण ग्रंथावली शिवराजभूषण, छं0 26, महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद-दीक्षित पृ0 16(भूमिका से), भूषण ग्रंथावली प0श्याम बिहारी मिश्र, पृ0 5 (भूमिका से उद्धृत)

भूषण-चारभाईयों, चिंतामणि भूषण, मतिराम नीलकंठ उपनाम जटाशंकर ।[1]

महाकवि भूषण की जन्म तिथि क्या थी इस पर विद्वानों में मतभेद है कुछ लोगों ने भूषण ग्रंथावली की भूमिका में भूषण की जन्म तिथि 1614 ई० मानी है ।[2] किन्तु इस सम्बन्ध में उन्होंने जो प्रमाण दिया है इस पर स्वयं उन्होंने सन्देह प्रकट कियाहै। उन्होंने लिखा है :

" अब हमको भूषण का जन्म काल संवत् 1692 के आस-पास मालूम होता है ।[3] अन्य लोगों ने महाकवि भूषण का जन्म काल 1670 संवत् अर्थात् 1614 ई० माना है।[4] कोई भूषण महाकवि की जन्म तिथि संवत् 1700 लिखते हैं अत: इन विभिन्न तिथियों को देखते हुए निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता । कुछ लोगों ने महाकवि भूषण के भाई मतिराम के आधार पर भूषण महाकवि की जन्म तिथि निकालने का प्रयास किया है। मतिराम उनके बड़े भाई थे और मतिराम की जन्म तिथि 1603 ई० यदि ठीक है [5] तो भूषण महाकवि का जन्म उसके बाद हुआ होगा और वह 1692 संवत् या 1700 संवत् के आस पास हो सकता है ।

1- भूषण ग्रंथावली: संपादक तथा टीकाकार, पं श्याम बिहारी मिश्र, पृ० 5
2- भूषण ग्रंथावली : मिश्रबन्धु, (सातवां संस्करण) पृ० 6
3- हिन्दी नवरत्न मिश्रबन्धु , पृ० 300
4- हिन्दी साहित्य का इतिहास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल (नौवां संस्करण) पृ० 254
5- मतिराम ग्रंथावली : (परिचय और भूमिका वाला भाग ।) पं० कृष्ण बिहारी मिश्र, पृ० 25।

भूषण का वास्तविक नाम क्या था ? इस संबंध में विद्वानों ने अनुमान से काम लिया है। कुछ लोग भूषण का असली नाम मनिराम मानते हैं। इसके लिए उन्होंने जो प्रमाण दिया है, वह यह है -" कहते हैं सितारा गढ़ नरेश शाहू महाराज के राजकवि "मनिराम" राजा के पास अल्मोड़ा आए थे। उन्होंने राजा की प्रशंसा में यह एक कवित बनाकर सुनाया था। राजा ने दस हजार रूपये और एक हाथी इनाम में दिया।[1] वह छन्द इस प्रकार है।

पूरन पुरूष के परम दृग दोउ जानि,
कहत पुरान वेद बानि जोरि रढ़ि गई।
दिन पति ये निमापृति ज्यों,
दुहुन की कीरति दिसानि मांझि मढ़ि गई।
रवि के करन भये महादानि यह,
जानि जिय आनि चिन्ता मौझि चढ़ि गई।
तोहि राज बैठत कुमाऊँ श्री उदोतचन्द
चन्द्रमा को करक करेजेहू ते कढ़ि गई।[2]

आगे लिखा है कि -" चूँकि साहू महाराज के दरबारी कवि केवल भूषण ही थे अन्य कोई नहीं, अत: मनिराम हमारे चरित नायक भूषण का ही वास्तविक नाम था।[3]

1- महाकवि भूषण, पं० भगीरथ प्रसाद दीक्षित, पृ० 14 पृ० 15

2- वही,

3- वही, पृ० 15

किन्तु प्रश्न यह है कि भूषण नाम यदि वास्तविक नाम नहीं था तो भूषण कवि के नाम से इनकी प्रसिद्धि कैसे हुई । इसके बारे में कहा गया कि भूषण कवि चित्रकूटाधिपति हृदयराम के पुत्र रुद्रराम सोलंकी के आश्रय में कुछ दिन रहे । इनकी कवित्व शक्ति से प्रसन्न हो रुद्रराम ने इन्हें सन् 1666 लगभग "कवि भूषण " की उपाधि दी और तभी से भूषण कहलाने लगे । चित्रकूट नरेश द्वारा दी गयी उपाधि की बात को स्वयं कवि ने स्पष्ट कहा है :

कुल सुलंक चित्रकूटपति, साहस सील समुद्र ।
कवि भूषन पदवी दई, हृदैराम सुत-रुद्र ।[1]

कवि भूषण के बारे में एक रोचक बात यह प्रचलित है कि कवि भूषण जी पहले बिल्कुल अपढ़ और निकम्मे थे एवं चिंतामणि कमासुत और कुटुम्ब के आधार थे । भूषण सदा घर बैठे बैठे बगलें बजाया करते थे और बड़े भाई की कमाई से पेट भरा करते थे । एक दिन भोजन करते हुए भूषण ने अपनी भावज से नमक माँगा । उसने क्रोध से कहा-" हाँ, बहुत सा नमक तुमने कमाकर रख दिया है न जो उठा लाऊँ । यह बात इन्हें असह्य हो गई और उन्होंने मुह का ग्रास उगलकर कहा-"अच्छा अब जब नमक कमाकर लावेंगें, तभी यहाँ भोजन करेंगें । " ऐसाकहकर भूषण जी घरसे खाली हाथ यों निकल पड़े और कहते हैं इन्होंने अपनी जिह्वा काटकर श्रीजगदंबाजी पर चढ़ा दी और ये एकदम भारी कविश्वर हो गये ।[2] यद्यपि इस बात में अतिशयोक्ति हो सकती है किन्तु फिर भी थोड़ी बहुत

1- भूषण: आचार्य विश्वनाथ मिश्र, , शिवराजभूषण छं0 28

2- भूषण ग्रंथावली पं0 श्याम बिहारी, पृ0 6-7

सच्चाई तो अस्पष्ट ही होगी । भूषण के आश्रयदाता के बारे में भूषण सबसे पहले संवत् 1721 या 1723 के आस पास चित्रकूट नरेश के पास पहुँचे । कहते हैं कि सोलंकियों का राज्य 1728 संवत् में महाराज छत्रसाल ने छीन लिया । अतः भूषण 1728 के पूर्व ही चित्रकूटाधिपति के पास गए होंगे । औरंगजेब से मिलने के लिए शिवाजी जयसिंह के साथ सन्धि के पश्चात् दिल्ली आये थे । यह भेंट 1666 ई0 अर्थात् 1723 संवत् में हुई । इसके अनन्तर शिवाजी औरंगजेब के जाल से मुक्त होकर दक्षिण लौट आए । इससे शिवाजी उत्तर भारत में प्रख्यात हो गये । संभवतः भूषण इस ख्याति को सुनकर संवत् 1624 में रायगढ़ आए । यहाँ लगभग छः वर्ष तक वे छत्रपति शिवाजी के आश्रय में रहे । उन्होंने अपना प्रसिद्ध ग्रंथ शिवराज भूषण यही पर संवत् 1730 में पूर्ण किया ।[1] शिवराज भूषण के निर्माण काल तक किन-किन दरबारों में भूषण जा चुके थे इसका उल्लेख स्वयं कवि ने एक छन्द में कर दिया है :

मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ,
सिरी नगरे को कवित्त बनाये ।
बान्धव जाहु कि जाहु अमेरि कि,
जोधपुरै कि चितौरहि धाये ।।
जाहु कुतुत्व कि एदिल पै कि,
दिल्लीसहु पै किन जाहु बुलाये ।

1- भूषण और उनका साहित्य: राजमल बोरा, पृ0 65

भूषन गाय फिरौ महि में,

बनिहै चित चाहि सिवाहि रिझाये ।।[1]

इससे स्पष्ट है कि भूषण कवि मोरंग , कुमाऊँ, श्रीनगर, रीवां ,अमेर, जोधपुर चित्तौण, कुतुबशाह और आदिल शाह के वंशजों के दरबारों में जा चुके थे तथा दिल्ली के बादशाह से इन्हें बुलाने का निमंत्रण भी मिल चुका था । इसके अतिरिक्त प्रारंभ में चित्रकूटपति हृदयराम सुरकी द्वारा हमारें चरित्रनायक मनिराम को "कवि भूषण " की उपाधि प्राप्त हो चुकी थी अत: उक्त दरबारों में उनका आना जाना निर्विवाद है ।

कवि भूषण के आश्रयदाताओं की सूची बहुत लम्बी है , जिनके नाम इस प्रकार हैं :

चित्रकूटपति हृदयराम सुरकी 1750 - 59 तक

कुमाऊँ नरेश उद्योतचंद वि0 संवत् 1731 - 55 तक

श्रीनगर (गढ़वाल) नरेश फतहशाह 174- 73 तक

रीवाधिपति अवधूतसिंह 1757 - 1812 तक

जयपुर नरेश सवाई जयसिंह 1756 - 1812 तक

सितारानरेश छत्रपति साहू 1765 - 1805 तक

बूँदी नरेश रावराजा बुद्धसिंह 1764 - 98 तक

दिल्ली नरेश जहाँदार शाह 1769 तक

मैंडू नरेश अनिरूद्ध 1770 के लगभग

असोथर नरेश भगवन्तराय खीची 1770 - 97 तक

बाजीराम पेशवा 1777 - 97 तक

1- शिवराजभूषण, पृ0 250

चिमनाजी चिन्तामणि 1780 के आसपास

चित्रकूट पति रुमन्नराय 1780 के लगभग

पन्ना नरेश छत्रशाल 1728-91 तक

एक स्वाभाविक प्रश्न यह है कि कवि भूषण इतने लोगों के आश्रय में क्यों रहे। बात यह कि हमारे चरित नायक महाकवि भूषण ने (राजनीतिक तथा साहित्यक) दोनों मार्गों का अवलंबन ले रखा था एक ओर तो वे काव्य रचना द्वारा राज दरबारों, सैनिकों, सरदारों और जनता में उत्तेजना उत्साह और नवजीवन का संचारकर नवोद्भाविनी भरने का प्रयत्न करते थे। दूसरी ओर वे सजीव ओजस्विनी मौलिक वाणी द्वारा राजनीतिक प्रणाली से उत्तेजना भरकर समाज के नेताओं को आलोड़ित करने में लगे थे। इस प्रकार से मौखिक और लिखित दोनों प्रकार से जागृति की जा रही थी। इसका स्वभाविक प्रभाव पड़ा कि हिन्दुओं में वैराग्य, अनुत्साह, निर्जीवता, अकर्मण्यता एवं मन्दता का जो प्रबल संचार हो रहा था वह दूर हो गया। वे अनुभव करने लगे कि हम भी पुराने गौरव को प्राप्त कर सकते हैं।

भूषण ने इस महान कार्य के लिए बाबर, हुमायुँ, अकबर, जहांगीर, और शाहजहाँ इन पाँचों मुगलबादशाह का सहारा लिया था जिनकी चर्चा अपनी रचनाओं में उन्होंने बार बार की है तथा औरंगजेब की भर्त्सना करते हुए "बब्बर अकबर के विरद बिसारे है, जैसी पंक्ति स्थान-स्थान पर भूषण की रचनाओं में मिलती है।

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित, भ्रमण और राज्याश्रय, पृ0 42।

परिणामत: औरंगजेब विरोधी मुसलमान भी हिन्दुओं के सहयोग की इच्छा करके अपने राज्यों को वापिस पाने की अभिलाषा से इनके साथ हो गये । इससे स्वभाविक दोनो में राष्ट्र निर्माण की भावना बढ़ने लगी । इस प्रकार सारे देश में उत्साह की एक लहर दौड़ा देना भूषण की रचना का प्रमुख कार्य बन गया ।[1]

इस महान कार्य को करने के लिए और जन-जन में उत्साह की लहर दौड़ाने केलिए जगह-जगह जाना आवश्यक था संभवत: इसीलिए भूषण महाकवि को इतने आश्रयदाताओं का आश्रय लेना पड़ा ।

इस प्रकार भूषण ने भारत के जन-जन को शिवाजी का प्रतिरूप बना देना चाहा था जिसमें बहुत कुछ अंश में वह सफलीभूत भी हुए । इस आदर्श की स्थापना करने में भूषण को कितनी सफलता मिली इस उनके शब्दों मे आंका जा सकता है । कविभूषण कहते है :

> नृप समाज में आपकी होन बढ़ाई आज ।
> साहि तनै सिवराज के करत कवित कविराज ।।[2]

तथा -

> को कविराज सभाजित होत,
> सभा सरजा के बिनागुन गाये ।[3]

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित (भूमिका मे आश्रयदातासे) पृ0 19-20

2- शिवराजभूषण, पृ0 278

3- वही, छं0 153

इन कथनों से तत्कालीन स्थिति का कुछ दिग्दर्शन हो जाता है साथ ही यह भी अनुभासित हो जाता है कि भूषण ने कितना महत्वपूर्ण कार्य डाला था । इस भावना को देश में भरने का कार्य 2150 वर्ष से क्षीण पड़ा हुआ था उसको सजग करके नवजीवन का विस्तार कर देना ही इस रचना की विशेषता है ।[1]

कवि भूषण की रचनाओं के विषय में भी मतभेद है। कोई भूषण की चार रचनाओं शिवराजभूषण, भूषण हजारा, भूषण उल्लास और दूषण-उल्लास का उल्लेख करता है ।[2] कुछ ने इन चार रचनाओं के अलावा अन्य दो रचनाओं शिवाबावनी तथा छत्रसाल दशक को भी लियाहै। [3]किन्तु ऊपर के चार ग्रंथो के बारे में यह कहा गया कि किसी स्थान पर विशेष प्रामाणिक रीति से न सुने जाने के कारण ये ग्रन्थ मान्य नहीं हैं ।[4] फलत: इनकी जो रचनाएं उपलब्ध हैं वह निम्न प्रकार से हैं :

<u>शिवराजभूषण :</u> शिवराजभूषण भूषण महाकवि का एक मात्र प्रामाणिक और श्रेष्ठ रचना मानी गयी है जिसका रचना काल कवि भूषण ने अपने

1- महाकवि भूषण, भगीरथ प्रसाद दीक्षित, पृ0 20

2- शिवसिंह सरोज, संपादक डॉ0 किशोरी लाल गुप्त, पृ0 761 । (ठाकुर शिवसिंहसेंगर ने 1878 ई0 मे हिन्दी कवियों को वृत्त संग्रह शिव सिंह मे)

3- भूषण ग्रंथावली: मिश्रबन्धु, सातवाँ संस्करण पृ0 3,

4- वही ,

ग्रंथ में इस प्रकार दिया है :

संमत सत्रह सौ तीस पर सुचि बदि तेरसिभानु ।

भूषन सिवभूषन कियौ, पढ़ौ सकल सुजान ।।[1]

इस दोहे पर इस ग्रंथ का रचनाकाल 1730 संवत् माना गया है ।[2]

शिवराजभूषण के आरम्भ में गणेश जी की स्तुति है, तत्पश्चात भवानी की । इसके बाद शिवाजी के पूर्वजों का अति संक्षिप्त परिचय प्रबन्धात्मक ढंग से परिचय दिया गया है । कवि ने अपना संक्षिप्त परिचय भी दिया है। बाद में ग्रन्थ लिखने का उद्देश्य इन शब्दों में किया है :

सिव चरित लखि यों भयौ, कविभूषन केचित।
भाँति -भांति भूषननि सों, कवि भूषन करौंकवित ।[3]
सुकबिन सों सुनि-सुनि कछुक, समुझि कबिन कौ पन्थ ।
भूषन भूषनमय करैन, शिवभूषन शुभ ग्रन्थ ।[4]

भूषण ने इस एक ग्रन्थ की रचना शिवाजी के चरित को भूषित करने के लिए की है । सुकवियों के पंथ को अपनाकर भूषण अपने ग्रन्थ को भूषणमय बनाता थे । ग्रन्थ के नाम की सार्थकता के संबंध में किसी विद्वान ने कहा है - {1} शिवाजी के यश वर्णन जिसमें किया गया है अर्थात् जिसके योग से उसे भूषण प्राप्त हुआ है। यह एक अर्थ है । {2} सिवा इसके भूषण काअर्थ अलंकार होता है। इससे अलंकारशास्त्र पर यह ग्रन्थ लिखा गया है। ऐसा अर्थ भी इसमें

1- भूषण आचार्य, विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 71, भूषण और उनका

2- वही, पृ0 81; साहित्य, राजमल बोरा, पृ0 70

3- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 348

4- वही, पृ0 29

निहित है §3§ भूषण कवि ने इस ग्रंथ की रचना की यह तीसरा अर्थ भी इससे व्यक्त होता है ।[1]

शिवराजभूषण इस ग्रन्थ की रचना का उद्देश्य लोक धर्म की रक्षा करने वाले नायक का गुणगान कर लोक धर्म की रक्षा, का आग्रह करना तथा राष्ट्रीय भावना को अभिव्यक्ति देना है ।[2]

शिवाबावनी : शिवाबावनी के बारे में कहा गया कि यह कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं, बल्कि भूषण के 52छन्दों का संग्रह मात्र है ।[3] संभवत: 52 छन्द होने के कारण ही इसे बावनी कहा गया । शिवाबावनी के बारे में कहा गया कि संवत् 1946 मे पूर्व इसका अस्तित्व नहीं था ।[4]

शिवाबावनी में प्रधान रूप से शिवाजी के यश और गौरव का गान है। अपवाद रूप में कुछ छन्दों को छोड़कर सभी छन्द शिवाजी से सम्बन्धित हैं । प्रत्येक छन्द एक स्वतंत्र खण्ड चित्र प्रस्तुत करता है। मुगलों के अत्याचार का वर्णन शिवाजी की प्रतिक्रिया, समयानुकूल देश की रक्षा करने में शिवाजी का आगे बढ़ना, शिवाजी द्वारा शत्रुओं का आतंकित रहना, इस्लाम के अत्यचार से हिन्दू

1- सरदेसाई, शिवाजी सौविनेर टरसेच्यूरी सिलेक्शन , बाम्बे, पृ03।

2- राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य, पृ0 72

3- भूषण ग्रथावली, मिश्रबन्धु §सातवाँ संस्करण§ पृ0 38

4- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ0 84 ।

धर्म की रक्षा करने में शिवाजी का नेतृत्व आदि के अखंड चित्र बड़ी ही ओजस्वी शैली में शिवाबावनी में मिलते हैं। शिवाबावनी की प्रसिद्ध पंक्ति है, " शिवाजी न होते तो सुनति होती सबकी ।[1]

<u>छत्रसाल दशक</u> - शिवाबावनी की तरह छत्रसाल दशक भी पीछे से किया युद्ध संग्रह मात्र है जिसे भूषण की सर्वथा प्रामाणिक रचना नहीं माना गया क्योंकि इसके छंद संदिग्ध हैं, जो इस बात को अप्रमाणित करते हैं कि यह प्रामाणिक रचना है ।[2]

छत्रसाल दशक में दो दोहे और बाद में दस कवित संग्रहीत हैं, जिनमें प्रथम दोनों दोहों में बून्दी के दोनों छत्रसाल और शत्रुसाल का उल्लेख हुआ है । बाद के दस कवितों में प्रथम दो कवित्तों में बूँदी नरेश छत्रसाल हाड़ा का वर्णन है और बाद में आठ कवितों में छत्रसाल बुन्देला की वीरता का वर्णन बड़ी ही ओजस्वी भाषा में किया गया है । [3]

<u>स्फुट काव्य</u> : स्फुट काव्य को स्वतंत्र रचना के रूप में नहीं स्वीकार किया इसमें शिवराजभूषण शिवाबावनी और छत्रसाल दशक के छंद भी सम्मिलित हैं ।[4]

1- विस्तृत विवरण, भूषण कृत: शिवाबावनी।

2- राजमल बोरा, भूषण और उनका साहित्य, पृ0 82

3- विस्तृत विवरण, भूषण कृत, छत्रसालदशक,

4- राजमल बोरा: भूषण और उनका साहित्य, पृ0 82-83

श्रृंगार रस सम्बन्धी स्फुट काव्य : कवि ने कुछ छन्द नायिका भेद का वर्णन करने की दृष्टि से लिखें हैं । जिसके अन्त में स्पष्ट कर दिया कि इसे मुग्धा और इसे उत्तमा नायिका कहते हैं ।[1]

कवि भूषण की ये रचना उनके काव्य की मूल प्रवृत्ति से हटकर है । सहज ही इस बात पर विश्वास नहीं होता कि वीर रस की कविता लिखने वाला कवि श्रृंगार के वर्णन वह भी घोर रति का वर्णन कैसे कर सकता है । संभवतः तत्कालीन साहित्यक प्रवृत्ति से प्रभावित होकर भूषण ने ऐसे पद्य लिखें हों ।

भूषण महाकवि की मृत्यु के बारे मे कहा कि घटनाओं के आधार पर 1707 ई0 और अधिकतम 1730 तक भूषण का रहना स्वीकार किया गया ।[2]

कवि भूषण की कृतियों सं हमें तत्कालीन समाज की राजनैतिक व्यवस्था का यथार्थ चित्र मिलता है कवि ने किले आदि के जो वर्णन किये हैं उससे भवन निर्माण कला पर प्रकाश पड़ता है । इसी प्रकार शिवाजी के शत्रु पक्ष से जो विभिन्न जाति के लोग युद्ध केलिए आये हैं उनसे जाति-व्यवस्था पर प्रकाश पड़ता है जैसे-

फौजें सेख सैयद और पठानन को
मिलि इलखास काहू मीर न सम्हारे हैं ।[3]

1- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, पृ084।

2- राजमल बोरा: भूषण और उनका साहित्य पृ090

3- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी, मिश्रबन्धु, छं0 25

इसी प्रकार राज दरबार में मनाये जाने वाले जश्न के बारे में कवि ने जो लिखा उससे उस समय का वैभव विलासिता तथा उत्सव आदि पर प्रकाश पड़ता है :

> जसन के रोज यों जलूस गहि बैठो जोडब
>
> इन्द्र आवै सोऊ लागे औरंग की परजा ।[1]

इसी प्रकार शृंगार संबंधी स्फुट काव्य में कवि ने जो नायिका भेद चित्र उपस्थित किया है उससे विभिन्न प्रकार की स्त्रियों की श्रेणी और स्थिति पर प्रकाश पड़ता है । इसी तरह से कवि ने शिकार पर जाते साहूजी आदि का जो चित्र खींचा है उससे मनोरंजन के साधन का पता चलता है जैसा कि मनोरंजन के साधन वाले अध्याय में दिया है । इसी प्रकार एक छन्द है जिसमें तत्कालीन समाज में उच्चवर्गीय स्त्रियों का खान पान आभूषण और निवास स्थान सबका एक साथ चित्र मिलता है इसके साथ ही ये समस्त सुख छिन जाने पर निम्नवर्गीय स्त्रियों की भाँति उनकी दयनीय दशा का मनोहारी चित्रण कवि ने किया है :

> " ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहनवारी,
>
> ऊँचे घोर मन्दर के अन्दर रहाती है ।
>
> कन्दमूल भोग करैं कन्द मूल भोग करै,
>
> तीनि बेर खाती सो तीन बेर खाती हैं ।।
>
> भूषन सिथिल अंग भूषन सिथिल अंग,
>
> बिजन डुलातीं ते वे बिजन डुलाती हैं ।

1- भूषण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, छं0 179

भूषन भनत सिवराज और तेरे त्रास ,

नगन जड़ातो ते वै नगन जड़ातो हैं ।[1]

प्रस्तुत छंद में उपरोक्त सभी बातों के अलावा उच्चवर्गीय तथा निम्नवर्गीय स्त्रियों की स्थिति का पता चलता है । इस प्रकार भूषण महाकवि की कृतियों ने समाज-चित्रण के लिए हमें विशेष सामग्री दी ।

<u>तोष :</u> तोष को अधिकांश लोगों ने कवि ही माना है किन्तु कुछ ने कवि के साथ-साथ तोष को आचार्य की कोटि में भी रखा है तथा उन्होंने उनके काव्यांगों के विश्लेषण विषयक महत्व की भूरिशः श्लाघा की है ।[2] तोष कवि के नाम के संबंध में हिन्दी के विद्वानों में पर्याप्त मत भेद है। कोई इनको तोषनिधि कहते है[3] जबकि अन्य विद्वानों ने तोष और तोषनिधि नामक दो कवियों के अस्तित्व को पृथक् कवि माना है ।[4] तोष और तोषनिधि की प्राप्त रचनाओं से इन दोनों कवियों के भिन्नत्व का प्रमाण स्वतः मिल जाता है । तोष कवि का एक मात्र ग्रन्थ, सुधानिधि, है ।[5] सुधानिधि श्रृंगार

1- भूषण ग्रंथावली: शिवाबावनी कवित मिश्रबन्धु (सातवां संस्करण)

2- मिश्रबन्धु, मिश्रबन्धुविनोद, द्वितीय भाग, द्वितीय संस्करण पृ0 413 ।

3- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0 282 ।

4- साहित्य समालोचक त्रैमासिक, भाग 1, अंक 3 पृ0 220

5- डॉ0 किशोरी लाल, रीति कवियों की मौलिक देन, पृ0 125

एवं नायिका भेद निरूपण से सम्बन्धित एक उत्कृष्ट रीति ग्रन्थ है ।[1]

तोष ने रस विवेचन के सम्बन्ध में प्रथमत: चार प्रकार के श्रृंगार का उल्लेख करने के अनन्तर नवरस का वर्णन किया है ।[2] यद्यपि यह कहा जाता है कि तोष ने रस विवेचन में संस्कृत के नाट्यशास्त्र (भरतमुनि) रसमंजरी (भानुभट्ट) श्रृंगार प्रकाश (भोज) रसार्णव सुधाकर (शिंगभूपाल), साहित्य दर्पण (विश्वनाथ) रसगंगाधर (जगन्नाथ) आदि ग्रन्थों से पूर्ण सहायता ली है, फिर भी यह नहीं कहा जा सकता कि सुधानिधि के सभी लक्ष्य एवं लक्षण संस्कृत के उक्त ग्रंथों से लिये गये हैं ।[3] रस विवेचन के अन्तर्गत कविवर तोष ने कुछ नूतन दृष्टि का भी उपयोग किया है । श्रृंगारेतर रसों के अरूपण में उन्होंने वात्सल्य और भक्तिरस को करूण[4] और शान्त रस[5] में सन्निविष्ट करने का सफल प्रयत्न किया है ।

कविवर तोष ने "सुधानिधि" ग्रंथ में अन्य रसों की तुलना में श्रृंगार का विशद एवं सूक्ष्म विवेचन प्रस्तुत किया है जिसे 4 भागों में बाँटा है संयोग, वियोग सामान्य तथा मिश्रित । संयोग, वियोग का विवेचन तो रसशास्त्रीय ग्रन्थों में प्राय: किया गया है, किन्तु सामान्य और मिश्रित श्रृंगार का निरूपण सर्वथा मौलिक है। सामान्य और मिश्रित से कविवर तोष

1- डॉ0 किशोरीलाल, रीति कवियों की मौलिक देन पृ0 125

2- तोष: सुधानिधि, पृ0 151 छं0 445

3- डॉ0 किशोरी लाल, रीतिकवियों की मौलिक देन, पृ0 125

4- तोष सुधानिधि पृ0 179 छं0 538

5- तोष सुधानिधि पृ0 179

का तात्पर्य इस प्रकार है। सामान्य श्रृंगार के अन्तर्गत नायिका की प्रेम क्रीड़ा और उसकी चेष्टाओं का समावेश किया जाता है[1] तथा मिश्रित श्रृंगार में संयोग में वियोग का मिश्रण और बियोग में संयोग का मिश्रण, का समावेश है। तोष की यह कल्पना साधारहै, क्योंकि संयोग में वियोग और बियोग में संयोग की स्थितियाँ प्राय: अनुभव की जाती हैं। यद्यपि रीति युग के अन्य कवियों ने इस प्रकार के मिलन स्थिति की कल्पना की है किन्तु उनकी संख्या बहुत अल्प है। मिलन की भिन्न स्थितियों और स्थान का मिलन तोष ने इस प्रकार किया है -धाई के घर का मिलन सूने सदन का मिलन, जल बिहार का मिलन, भय का मिलन, माइके का मिलन, वर्षा का मिलन आदि।[2]

कविवर तोष ने सुधानिधि "नामक ग्रंथ में नायक नायिका भेद का निरूपण विस्तार पूर्वक किया है। पहले तो कवि ने परकीया और सामान्य का विवेचन किया है किन्तु आगे चलकर एक-एक के कई भेद है जैसे परकीया स्त्री के भेद देखिए,

परकीया की प्रकृति पुनि, सुकवित छविध बखानि।
तिनकी तेरह भेद हैं, उदाहरण मैं जानि।।[3]

तोष कवि ने दूतियों की सभी चर्चा की है जिसमें हलवाइन, चुरिहारिन, पटइनि कोइरिन आदि नवीन दूतियों की चर्चा की है। इस प्रकार कवि तोष के एक मात्र ग्रन्थ "सुधानिधि" से तत्कालीन समाज में स्त्रियों का स्थान जैसा कि

1- तोष सुधानिधि पृ० 118

2- वही, पृ० 114, 115

3- तोष सुधानिधि में नायिका परकीया नायिका भेद के अन्तर्गत।

नायिका भेद और दूतियों के नाम से पता चलता है साथ ही दूतियों के माध्यम से स्त्रियों की विभिन्न जाति का तथा उनके कार्य का पता चलता है ।

कवि का नूतन विश्लेषण मिलन की भिन्न स्थितियाँ और मिलन से अप्रत्यक्ष रूप से तत्कालीन समाज में प्रचलित वेशभूषा पर प्रकाश पड़ता है । प्रारम्भ से ही भारतीयों की यह विशेषता रही कि लोग मौसम तथा समय के अनुसार वस्त्र धारण करते हैं । जैसे- वर्षा ऋतु में नायिका के लाल चुनरी ओढ़ रखी है किन्तु वर्षा की बूँदों से वह नष्ट हो जायेगी फलत: वह नायक से प्रार्थना करती है कि मेरी सुरंग चूनरी वर्षा में भीग जायेगी अत: आप आकर उसे बचा लें :

> लाला ! मेरी सुरंग चूनरी भीजै । लेहु बचाय आप पिय
> मोको, बूंद परै रंगछीजै ।[1]

इसी प्रकार संयोग वियोग की अवस्था का जो चित्रण कवि ने किया उससे समयानुसार वस्त्राभूषण प्रसाधन आदि के विषय में प्रकाश पड़ता है इस प्रकार तोष कवि ने ग्रन्थ सुधानिधि से तत्कालीन समाज के समाज चित्रण में विशेषकर वस्त्रादि,पर्वादि के संदर्भ में सहायता मिली ।

<u>बोधा</u> : बोधा का कवितकाल प्राय: संवत् 1830 से 1860 तक स्वीकार किया जाता है । रीतकाल की स्वच्छन्द काव्यधारा में बोधा कवि

1- तोष: ब्रजभाषा साहित्य का ऋतु सौंदर्य सं० प्रभुदयाल मीतल, पृ०89 छं0 25

का विशेष महत्व है । बोधा के हिन्दी ग्रंथों के विवरण में बोधा द्वारा रचित बागवर्णन, बारहमासी, फूलमाला, पक्षीमंजरी, पशुमंजरी, नायक नायिका कथन आदि ग्रंथों का उल्लेख मिलता है किन्तु इनकी उपलब्ध और प्रकाशित ग्रंथ दो ही हैं – विरह वागीश एवं इश्कनामा है ।[1]

बोधा पन्नानरेश, खेतसिंह के दरबारी कवि थे । यह पन्ना दरबार की एक वेश्या सुभान के प्रति आसक्त थे जिससे प्रेरित होकर यह काव्य रचना किया करते थे । इनका काव्य अत्यन्त मर्मस्पर्शी है जिसमें प्रेमपीर की प्रधानता है ।[2]

बोधा चूँकि दरबारी कवि थे अतः दरबार में होने के नाते तत्कालीन समाज का चित्रण अनायास ही इनके ग्रंथों में मिल जाता है भले ही बोधा ने प्रेमकाव्य लिखा है ।

<u>घनानंद</u> : घनानंद कवि जाति के कायस्थ थे और दिल्ली के सम्राट मुहम्मदशाह रंगीले के मुन्शी थे ।[3] घनानंद का जीवन-वृत बहुत कुछ जनश्रुतियों पर आश्रित है जिसमें एक बात यह भी कही गयी कि ये दरबार की "सुजान" नामक वेश्या पर बुरी तरह आसक्त थे किन्तु किसी कारण वश इन्हें सम्राट ने दरबार से निकाल दिया ये वृदांवन चले आये तथा वैष्णव धर्म के निम्बार्क सम्प्रदाय में दीक्षित हो गये ।[4]

1– बोधा ग्रंथावली· सपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र

2– डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 21

3– डॉ0 ग्रियर्सन, दि मार्डन वर्नाक्यूलर लिटरेचर आफ हिन्दुस्तान, पृ0 92; 347

4– आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ0 401

संभवत: इसो सुजान के कारण कवि ने सुजानहित नामक ग्रंथ को रचना को । घनानंद की अन्य रचनाएं, घनानंद कवित्त, प्रेमपत्रिका आदि का पता चला है जो घनानंद ग्रंथावलो" में संग्रहोत है ।[1]

घनानंद के निधन के बारे में कहा जाता है कि ये नादिरशाह के आक्रमण में मारे गये । किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से उचित नहों लगता क्योंकि नादिरशाह का आक्रमण दिल्लो पर हुआ था मथुरा में नहों और इससे ज्यादा प्रमाण यह है कि नादिरशाह के आक्रमण का कैसा भयानक दृश्य और परिणाम था उसका वर्णन कवि लिखते है ।[2] स्पष्ट है कि नादिरशाह के आक्रमण में कवि को मृत्यु नहों हुयो । हो सकता है अहमदशाह अब्दालो के आक्रमण में कवि को मृत्यु हुयो हो क्योंकि अब्दालो आक्रमण मथुरा पर पहला आक्रमण सन् 1757 और दूसरा 1761 में हुआ था ।

घनानंद जो को रचनाओं से जहाँ समाज चित्रण के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश पड़ा वहीं समय-समय पर विदेशो आक्रमणों आदि के वर्णन से तत्कालोन राजनैतिक दशा को जानने मे भो सहायता मिलो ।

1- घनानंद डॉ0 गणेशदत्त सारस्वत, पृ0 19

2- दिल्लो भई बिल्लो कटैला कुत्ता देखि डरो
भूल्यो मुहम्मदशाह पहिले अब कह टोकिये ।
बाबर हुमायूँ को चलायो अब बैस
ताको यह फैलो सोक परजा करम ठोकिया

-घनानंद ग्रंथावलो, पृ0 61 भूमिका से उद्धृत

आलम: आलम का रचना काल संवत् 1640 से संवत् 1680 निश्चित है ।[1] आलम के ग्रन्थों में आलम के कवित्त, कवित्त, संग्रह छप्पय, सुदामा चरित, श्याम-स्नेही, माधवानलकामंदला नामक ग्रंथों का उल्लेख है जिसमेंसे प्रथम पाँच ग्रंथों को मूल रूप से एक ही माना गया ।[2]

आलम कवि के विषय में कहा जाता है कि वे सनाढ्य ब्राह्म्मण थे तथा औरंगजेब के पुत्र मुहम्मदशाह के दरबार में थे ।[3]

कुमारमणि : कुमार मणि का एकमात्र काव्य "रसिक रसाल" है इस ग्रन्थ का आधार आचार्य मम्मट कृत काव्य प्रकाश है ।[4] काव्य प्रयोजन के संबंध में कुमारमणि की धारणा ~~उनके धारणा~~ उनके शब्दों में इस प्रकार है :

> अर्थ धर्म ~~अरु~~ कामना, लहियुत, मिटत विषाद ।
> सहृदय पावत कवित में, ब्रह्म्मानन्द सवाद ।।[5]

इस दृष्टि से कवि की काव्य विषयक धारणा उनका यह दृष्टिकोण उनकी स्वतंत्र चेतना और विवेक का परिणाम कहा जा सकता है । कवि ने उन्हीं तथ्यों का आकलन किया जो तत्कालीन युग और समाज के सर्वथा अनुकूल थे ।

1- आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, हिन्दी साहित्य का अतीत, भाग2 पृ062।
2- वही, पृ0 690 ।
3- डॉ0 शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ0 20
4- डॉ0 भगीरथ मिश्र, हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास, पृ0 5
5- कुमारमणि: रसिक रसाल, पृ0 2

मतिराम : मतिराम का जन्म संवत् 1674 में हुआ ।[1] मतिराम द्वारा रचित प्रसिद्ध ग्रंथ फूलमंजरी, जहाँगीर की आज्ञा से लिखी गयी इसमें 60 दोहें हैं जिसमें 59 में फूलों का वर्णन है, प्रत्येक दोहे में फूल का वर्णन है अन्तिम दोहे में कवि ने ग्रन्थ के लिखने का कारण स्पष्ट किया जिसमें जहाँगीर की आज्ञा है ।[2] एक अन्य ग्रंथ "ललितललाम" का प्रणयन कवि ने अपने आश्रयदाता बूंदी नरेश भाऊसिंह के आश्रय में लिखा । इस ग्रंथ में बूंदी नगर तथा भाऊसिंह की प्रशंसा में रचा गया ।[3]इसके अलावा अन्य प्रसिद्ध ग्रंथों में मतिराम सतसई, अलंकार पंचाशिका तथा रसराज हैं। रसराज जैसा इसके नाम से स्पष्ट है इसमें श्रृंगार रस को ही एकमात्र श्रेष्ठ रस माना है। परम्परानुसार इसमें भी नायिका नायक भेद का निरूपण किया गया है तथा भारतीय जीवन से लिये गये इनके मर्मस्पर्शी चित्रों की भूरिशः श्लाघा की गयी है ।[4]

इस प्रकार इन सभी कवियों ने भारतीय जीवन के जिन विभिन्न तत्वों का चित्र खींचा है उससे हमें तत्कालीन समाज चित्रण करने के पर्याप्त सामग्री मिली ।

1- डॉ० शकुन्तला अरोरा, रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि पृ० 5

2- मतिराम: फूलमंजरी

3- मतिराम ग्रंथावली: पृ० 16 भूमिका से उद्धृत

4- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ० 253 ।

पुस्तक-सूची

पुस्तक – सूची

हिन्दी साहित्य के प्राथमिक स्रोत

आलम

1. आलमकेलि – रचयिता आलम और शेख सं० भगवानदीन, संवत् 1979, काशी ।

2. श्यामस्नेही – आलम, डा० भवानी शंकर याज्ञिक, लखनऊ

3. आलमकेलि – नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 1912 बंगाला

4. आलम ग्रंथावली – विद्यानिवास मिश्र, वाणी प्रकाशन, दिल्ली- 2

(i) माधवानल कामकंदला

(ii) अक्षरमालिका

(iii) सुदामाचरित – नागरी प्रचारिणी सभा पुस्तकालय, काशी,

(6) माधवानल-कामकंदला – शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी, अमृतसर

(i) शृंगार-संग्रह संपादक सरदार कवि

7. बोधा ग्रंथावली संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, प्रथम संस्करण, संवत् 2031

(i) विरह- वारीश

(ii) इश्कनामा

(iii) विरही-सुभान दंपति-विलास

8. विरह- वारीश नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1894 ई०

9. भिखारीदास ग्रंथावली, – प्रथम खण्ड संपादक विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी संवत् 2013

(i) रससारांश

(ii) शृंगार निर्णय

10. छंदार्णव भारत जीवन प्रेस, काशी

शृंगार निर्णय

11 भिखारीदास ग्रंथावली, – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, नागरी प्रचारिणी सभा,
द्वितीय खण्ड काशी संवत् 2030

(i) काव्यनिर्णय

12. काव्यनिर्णय सं0 जवाहर चतुर्वेदी, संवत् 2019, ज्ञानवापी, वाराणसी ।

13 छन्दोर्णव पिंगल भिखारीदास कृत, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1902

14. भूषण ग्रंथावली – सं0 टी0 श्याम बिहारी, शुकदेव बिहारी, नागरी, प्रचारिणी सभा, काशी, 2015 वि0

15. भूषण ग्रंथावली – सं0 रामनरेश त्रिपाठी, प्र0 सं0, प्रयाग हिन्दी मंदिर 1987

16. भूषण ग्रंथावली – विश्वनाथ प्रसाद प्र0 सं0, काशी साहित्य सेवक कार्यालय, 1933

17. शिवराजभूषण – टीकाकार, रूपनारायण पाण्डेय कविरत्न, सन् 1931, नवल किशोर प्रेस, लखनऊ ।

18. शिवाबावनी – भगवानदास टिप्पणी सहित, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग, 1973

19. भूषण संग्रह – सं0 उदय नारायण तिवारी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग 1996

20 भूषण भारती – सं0 हरदयाल सिंह, प्रयाग इंडियन प्रेस, 1951 ई0
· स्फुट काव्य भूषण कृत

21. देव ग्रंथावली भाग 1 – डॉ0 पुष्परानी जायसवाल, हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, 1974

(i) देव चरित्र

(ii) सुखसागर तरंग

(iii) देवमाया प्रपंच नाटक

(IV) अष्टयाम

(V) प्रेम चन्द्रिका

22 देव ग्रंथावली: प्रथम खण्ड - लक्ष्मीधर मालवीय, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली प्रथम संस्करण, 1967

(i) भाव विलास

(ii) रस विलास

(iii) सुमिल विनोद -

23. भवानी विलास - डॉ० सुरेन्द्र माथुर, भारत जीवन प्रेस, 1893

24. शब्द रसायन - सं० जानकीनाथ सिंह, "मनोज" संवत् 2014 हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

25. रसविलास - सं० तिलेश्वर नाथ शास्त्री, 1961

26. सुखसागर तरंग- सं० बालादत्त मिश्र, संवत्, 1954, लखनऊ

27. अष्टयाम - सं० रामकृष्ण वर्मा, सन् 1965, सेन्ट्रल बुक डिपो, इलाहाबाद।

28 देवसुधा - संग्रहकार एवं टीकाकार: मिश्रबन्धु, संवत् 2005, गंगा-पुस्तक - माला, लखनऊ

29. भाव विलास - सं० लक्ष्मी निधि चतुर्वेदी, तरुण भारत ग्रंथावली, कार्यालय दारागंज, प्रयाग, ई० 1991

30. देव की दीपशिखा - विद्या निवास मिश्र, वाणी प्रकाशन नई दिल्ली, प्र०सं० 1983, द्वितीय संस्करण, 1988

घनानंद

31. घनानंद ग्रंथावली - सं0 विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, सवंत्, 2009, वाणी वितान, ब्रह्मनाल, बनारस ।

32. प्रेमपत्रिका " "

33. घनानंद कवित्त- - विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, वाराणसी, 1990

कुमारमणि

34. रसिक रसाल - प्रो0 कंठमणि शास्त्री, विशारद विद्या विभाग, काँकरोली, सं0 1776

मतिराम

35. मतिराम ग्रंथावली - करूणापति त्रिपाठी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी

36. मतिराम ग्रंथावली - सं0 कृष्ण बिहारी मिश्र, संवत् 2018 वि0, गंगा-पुस्तक माला · कार्यालय, लखनऊ

(i) मतिरामसतसई
(ii) रसराज
(iii) फूलमंजरी
(iv) ललितललाम

37. रसराज - सं0 मन्ना लाल द्विज, हि· सा· स· प्रयाग

38. मतिराम मकरन्द - मतिराम कृत, अनुवादक, हरदयालु सिंह, इण्डियन प्रेस, प्रयाग

39. मतिराम रत्नावली - शंकरनाथ शुक्ल, भारतवासी, प्रेस, प्रयाग

40. मतिराम मनोहर प्रकाश - राम मनोहर प्रकाशन, अजमेर

41. श्रृंगार सुधाकार - मन्ना लाल द्विज, हि० सा० स०, प्रयाग

42. रसराज - वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बम्बई, 1966

§ वाराणसी चौखम्बा§ , §लखनऊ§

43. मतिराम सतसई - संपादक श्याम सुन्दर दास, काशी

54. मतिराम सतसई कृष्ण बिहारी मिश्र [illegible]

सोमनाथ

55. सोमनाथ ग्रंथावली - सं० सुधाकर पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा,
प्रथम खण्ड- वाराणसी, संवत् 2029

(i) रसपीयूषनिधि

(ii) रासपंचाध्यायी

(iii) श्रृंगारविलास (पूर्वार्द्ध)

(IV) माधव विनोद

(V) महादेव को ब्याहुलौ या शशिनाथ विनोद

(VI) ध्रुव विनोद

(VII) श्रृंगार विलास (उत्तरार्द्ध)

(VIII) सुजान विलास

(IX) दीर्घनगर वर्णन

(X) नवाबोल्लास

(XI) संग्रामदर्पण

(XII) प्रेमपचीसी

56. रास पंचाध्यायी सोमनाथ कृत, भारतवासी, प्रेस, प्रयाग

57. सोमनाथ ग्रंथावली, द्वि. ख. सं० सुधाकर पाण्डेय, नागरी प्रचारिणी सभा,
वाराणसी, संवत् 2030

(i) राम चरित्र रत्नाकर (सुन्दर कांड)

(ii) रामकलाधर (बाल कांड)

(iii) ब्रजेंद विनोद

48. युक्ति तरंगिणी — सोमनाथ कृत, डॉ0 सत्यदेव चौधरी

हिन्दी साहित्य के सहायक स्रोत

49. घनानंद — डॉ0 गणेशदत्त सारस्वत, साहित्य निकेतन, कानपुर।

50. घनानंद और स्वच्छंद-काव्य धारा — मनोहर लाल गौड़, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, सं0 2029

51. रसखान और घनानंद — अमीर सिंह, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, 2008 वि.

52. महाकवि मतिराम — डॉ0 त्रिभुवन सिंह हिन्दी प्रचारक संस्थान, वाराणसी द्वितीय संस, 1970

53. मतिराम कवि और आचार्य — डॉ0 महेन्द्र कुमार, प्र0 सं0 1960 ई0 भारतीय साहित्य मन्दिर, (एस. चांद एण्ड सन्स से सम्बद्ध) फव्वारा, दिल्ली।

54. रीतिकाव्य — डा0 जगदीश गुप्त, वसुमती 38, जीरो रोड, इलाहाबाद 1968 ई0

55. रीतियुगीन काव्य की-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि — डॉ0 वेंकटरमणराव, जवाहर पुस्तकालय, मथुरा, 1972 प्र0सं0।

56. हिन्दी रीति परम्परा-के प्रमुख आचार्य — सत्यदेव चौधरी साहित्य भवन, (प्रा0) लिमिटेड, इलाहाबाद।

57. भूषण साहित्य एवं ऐतिहासिक अनुशीलन — डॉ0 भगवान दास तिवारी, साहित्य भवन लि0, 1972

58. महाकवि भूषण — भगीरथ प्रसाद दीक्षित, प्रयाग साहित्य भवन, 1953

59. भूषण और उनका साहित्य - राजमल बोरा, साहित्य रत्नालय, 37/50,
गिल्स बाजार, कानपुर ।

60 हिन्दी-रीति साहित्य - डा0 भगीरथ मिश्र, सन् 1963, राज कमल प्रकाशन,
दिल्ली, पटना ।

61. आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका - डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, हिन्दी परिषद् इलाहाबाद
यूनिवर्सिटी, 1952 ई0

62. रीतिकालीन साहित्य: परिवेश और मूल्य - डॉ0 इन्द्र बहादुर सिंह, अरविन्द प्रकाशन,
बम्बई

63 हिन्दी-रीति कविता और समकालीन उर्दू काव्य - डॉ0 मोहन अवस्थी, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद,
1978

64. आलम और उनका काव्य - डॉ0 भारत भूषण चौधरी, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क,
दिल्ली, 110006 प्र0 सं0 1976

65. मतिराम कवि और आचार्य - डॉ0 महेन्द्र कुमार, प्र0 सं0 1960 ई0 भारतीय
साहित्य मंदिर ।

66. भारत में प्रचलित नाक के आभूषण - नालिनदास गुप्ता, रिव्यू से प्रकाशित कलकत्ता ।

67 रीतिकालीन हिन्दी साहित्य में उल्लिखित वस्त्राभरणों का अध्ययन । - लल्लनराय, पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाब,
यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़, 1974

68. रीतिकवियों की मौलिक देन - डॉ0 किशोरी लाल, साहित्य भवन, इलाहाबाद
सं0 1971

70. ब्रजभाषा का ऋतु सौन्दर्य - सं0 प्रभुदयाल मीत्तल, मथुरा

71. बुल्ला शाह की सीहर्फी - बुल्लाशाह द्वारा कृत, श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस, बंबई

72. रीति कवियों की प्रेम व्यंजना - बच्चन सिंह, वाराणसी, ना० प्र० स०, 2015

73. प्राचीन भारत के प्रसाधन - अत्रिदेव विद्यालंकार, काशी भार० ज्ञान० 1958

74. प्राचीन भारत के कलात्मक विनोद - डॉ० हजारी प्रसाद द्विवेदी, हि० ग्र० र० कार्यालय, 1952 ई०

75. हिन्दी साहित्य का अतीत- सं० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, संवत् 2013 वि० वाणी वितान प्रकाशन, ब्रह्मनाल, वाराणसी ।

76. कवि तोष और उनका सुधानिधि - सं० डा० सुरेन्द्र माथुर, संवत् 2022 वि० नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी ।

77. मिश्रबन्धुविनोद - सं० गणेश बिहारी मिश्र, श्यामबिहारी मिश्र, शुकदेव मिश्र, संवत्, 1885, गंगा पुस्तक माला कार्यालय, लखनऊ ।

78. रीतिकाव्य संग्रह - डॉ० जगदीश गुप्त, सन् 1970 साहित्य-सदन इलाहाबाद ।

79. रीतिकाव्य की भूमिका - डॉ० नगेन्द्र सन् 1969, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली ।

80 रीति श्रृंगार - डॉ० नगेन्द्र सन् 1954

81. देव और उनकी कविता - गौतम बुक डिपो, दिल्ली, 1949 ई०

82. हिन्दी साहित्य का इतिहास - आ० रामचन्द्र शुक्ल, संवत्, 2015 वि० नागरी प्रचारिणी सभा, काशी

83. हिन्दी नवरत्न - ले० मिश्रबन्धु, संवत् 2012वि० गंगा पुस्तक माला, लखनऊ ।

84. हिन्दू संस्कार — डॉ० राजबली पाण्डेय, सन् 1957, चौखम्बा विद्या भवन, वाराणसी ।

85. वैदिक विज्ञान और भारतीय संस्कृति — गिरिधर शर्मा, चतुर्वेदी, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना, 1960 ई०

86. रीतिकालीन श्रृंगार कवियों की नैतिक दृष्टि । — डॉ० शकुन्तला अरोरा, दिल्ली, प्र० सं० 1978

87. हिन्दी शब्द सागर — आचार्य रामचन्द्र वर्मा, काशी ना० प्र०, 1930

88. हिन्दी वीर काव्य (1600-1800) — डॉ० टीकम सिंह तोमर, प्र०सं० 1954 ई० हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद

89. उत्तरी भारत की संत परम्परा — आचार्य परशुराम चतुर्वेदी, प्रयाग, इलाहाबाद भारतीभण्डार सं० 2021

90. संस्कृति के चार अध्याय — रामधारी सिंह दिनकर, तृतीय संस्करण 1962 ई० उदयाचल प्रकाशन आर्य कुमार रोड, पटना- 4

91. सूरसागर सटीक — सं० डॉ० हरदेव बाहरी, डॉ० राजेन्द्र कुमार, लोक भारती प्रकाशन 15ए महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 1978 ई०

92. साईं दीन दरवेश — अनवर आगेवान, अहमदाबाद, सं. २००९

93. मध्यकालीन भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति — उमाशंकर मेहता, विनोद पुस्तक मंदिर, हास्पिटल रोड, आगरा, प्रथम संस्करण, 1963

94. रीतियुगीन काव्य — कृष्ण चन्द्र वर्मा, पुस्तक मन्दिर, विवेकानन्द मार्ग, इलाहाबाद, १९६५

95. खड़ी बोली हिन्दी-साहित्य का इतिहास — ब्रजरत्नदास, काशी, सं. १९९५

अन्य सहायक स्रोत

1 आइन-ए- अकबरी, आफ अबुल फजल थ्री वायल्यूम्स, कलकत्ता, 1872-1873, इंग्लिश ट्रांसलेशन्स: वायल्यूम I, ब्लाकमैनन कलकत्ता, 1873, ब्लाकमैनस ट्रांसलेशन आफ वायल्यूम I एडी०, डी०सी० फिलौट, कलकत्ता 1927, वायल्यूम्स II एण्ड III एच० एस० जैरेट, कलकत्ता 1891-1894 जैरेट्स ट्रांसलेशन आफ वायल्यूम्स II एण्ड III, रिवाइस्ड एण्ड, एडी० सर जदुनाथ सरकार कलकत्ता, 1948-49 (आल० बिब० इंडिया) (बिब इंडिया)

2. अकबरनामा आफ अबुल फजल, थ्री, वायल्यूम्स कलकत्ता 1877, इंग्लिस ट्रांसलेशन बाई एच, ब्रेवरिज, थ्री, वायल्यूस कलकत्ता, 1907-1912

3. आखम-ए- आलमगीरी -एन्सीडोट्स आफ औरंगजेब, ट्रांसलेटेड बाई जे० एन० सरकार० कलकत्ता 1912

4. आलमगीरीनामा आफ मुहम्मद काजिम: एडी० खादिम हुसैन एण्ड अब्दुल हाई, कलकत्ता, 1868

औरंगजेब अनु० मुंसिफ, वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई

5. बाबरनामा आर तुजुक-ए- बाबरी बाई बाबर रिटेन इन तुर्की एण्ड ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश इन थ्री वायल्यूम्स बाई ए० एस० ब्रेवरिज, लूजाक एण्ड कम्पनी, लंदन 1921

6. बादशाहनामा आफ अब्दुल हमीद लाहौरी, एडी० कबीरूद्दीन अहमद एण्ड अब्दुर रहीम, टू वायल्यूम्स कालेजप्रेस कलकत्ता 1867-1868

7. बहारिस्तान-ए-गैबी आफ मिर्जा नाथन, इंग्लिश ट्रांसलेशन्स, डॉ० एम० आई० बोच, I एडी, टू वायल्यूम्स, गौहाटी, 1936

8. हुमायूँनामा आर हुमायुँन-नामा बाई गुलबदन बेगम, ट्रांसलेटेड इन टू, इंग्लिश, बाई ए० एस० बेवरिज, लंदन 1902

9. तुजुक-ए- जहाँगीरी बाई जहाँगीर, ट्रासलेटेड इन टू इंग्लिश बाई ए० रोगर्स एण्ड एच. बेवरिज, इन टू वाल्यूम्स

10. इकबाल नामा-ए- जहाँगीरी आफ मुतमद खान, इडी अब्दुल हई एण्ड, अहमद अली, कलकत्ता, 1865 (बिब इन्डिया)

11. खुलासात्-उत-तवारीख, सुजानराय भंडारी, सं० जाफर हुसैन, जी. एण्ड एस. संस दिल्ली 1918

12. मुन्तखाब-उत- तवारीख, अब्दुल कादिर बदाँयूनी, भाग।, बिवलाथिक

मुन्तखब-उल- लुवाब आफ खाफी खान, इडी, कबीरउद्दीन अहमद, टू वायल्यूल्स, कलकत्ता 1869-1874 इलियट एण्ड डाउसन कलकत्ता 1974

13. मआसीर-ए- आलमगीरी आफ साकी मुस्ताद खान, इंग्लिश ट्रांसलेशन बाई सर जदुनाथ सरकार, कलकत्ता, 1947 (बिब इन्डिया)

14. मिरात-ए- अहमदी, इडी. सैयद नवाब अली, बरौदा, 1927-28

मिरात-ए सिकन्दरी आफ सिकन्दर गुजराती, इंग्लिश ट्रांसलेशन बाई फैजुल्ला लतफुल्ला फरीदी, एजूकेशन सोसाइटी प्रेस, धरमपुर,, देअर इज अदर ट्रांसलेशन बाई इलियट एण्ड डाउसन ।

15. मआसीर-ए- आलमगीरी बाई मुहम्मद मुस्तैद खान साकी (पर्शियन टेक्स्ट बिब इंडिया) ट्रांसलेटेड इन टू उर्दू बाई मुहम्मद फिदा अली तलब, उस्मानिया (हैदराबाद) पब्लिकेशन्स ।

16· नुस्खा-ए- दिलकुशा आफ भीमसेन इंडो. बाई. जादुनाथ सरकार बम्बई, 1972

रूकयात-ए- आलमगीरी- ट्रान्सलेटेड इन टू इंगलिश बाई जे. एच. बिलीमोरिया
लन्दन 1908

सियार-उल- मुन्तखरीन ऑफ सैयद गुलाम हुसैन खान मेकेन्ड इंडो. थ्री वायल्यूम्स नवल किशोर प्रेस, लखनऊ, 1897, रेमन्डण्स इंग्लिश ट्रांसलेशान (मेकेन्ड इंडो. पब्लिशड. बाई आर केम्बरे, कलकत्ता

17· तारीख-ए- रशीदी बाई मिर्जा मुहम्मद हैदर दुगहत ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई इ डेनिसन, रोस, लंदन 1895

18· बर्नियर फ्रांसकोइस (1658) ट्रेवेल्स इन द मुगल इम्पायर (1656-68) ट्रांसलेटेड बाई आर्कीविल्ड कास्टेबिल (1891) आक्सफोर्ड (1934)

19· बार्टोलोमियो, फ्रा पालिनो द सान (1776-89) ए वोयाज टू द ईस्ट इंडीज कन्टेनिंग एन अकाउन्ट ऑफ द मैनर्स, कस्टम्स एटसेटरा आफ द नेटिव्स, नोट्स एण्ड, इलस्ट्रेशन्स बाई जान रेनिफोल्ड फास्टर ट्रांसलेटेड फ्राम जर्मन बाई विलियम जान्सटन

20 केरी (1695) इंडियन ट्रेवेल्स ऑफ थेवनॉट एण्ड केरी (1695) इंडो., बाई एस एन सेन, पब्लिशड बाई नेशनल आर्काइव्स आफ इंडिया, 1949

21 डेलावेली, पिट्रो (1623-24), द ट्रेवेल्स आफ अ नोविल रोमन इन टू ईस्ट इंडीज एण्ड अरेबियन डेजर्ट, लंदन, 1664 आल्सो द ट्रेवेल्स आफ पि ट्रो डेलोवेली इन इंडिया इन टू वायल्यूम्स बाई एडवर्ड ग्रे हैकलुइट सोसाइटी, द फारमर एडीसन इन मोस्टली यूज्ड ।

22. फ्रायर, जान एण्ड सर थामस रो ‹1672-81›, ट्रैवेल्स इन इंडिया इन द सेविन्टीन्थ सेन्चुरी, लंदन, ट्रुबनर एण्ड कम्पनी, 1873

23. फास्टर, विलियम, अर्ली, ट्रैवेल्स इन इंडिया, आक्सफोर्ड, 1921

24. ग्रोस, एफ. एस. ‹1754-58›, ए वोयाज टू द ईस्ट इंडीज विद जनरल रिफलेक्शन ऑन द ट्रेड आफ इंडिया लंदन, टू वायल्यूम्स।

25. हेमिल्टन, अलैक्जेण्डर ‹1688-1723› ए न्यू एकाउण्ट ऑफ दि ईस्ट इंडीज फ्राम ‹1688-1723› टू वायल्यूम्स लंदन, 1724

26. लिन्सटन, वैन जान हेजेन, ‹1583-88›, द वोयाज टू दि ईस्ट इंडीज वायल्यूम, I, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई आर्थर कुक बर्मिन, लंदन; [illegible], वायल्यूम (II) बाई पी० ए० टाइली, लंदन, 1885

27. मनूची निकोलाई वेनीशियन ‹1653-1708›, स्टोरिया द मोगोर ऑर मुगल इंडिया ‹1653-1708› ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई विलियम इरविन वायल्यूम वन टू फोर ‹1907-08› एटलांटिक पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली, 110002, रिप्रिन्टेड, 1989, I, II

28. मैन्डल्सो, एल्बर्ट ‹1638-39› द वोयाज एण्ड ट्रेवेल्स आफ दि एम्बेसडर्स सेन्ट बाई फ्रेडरिक ड्यूक आफ हाल्सटेन टू दि ग्रेट ड्यूक आफ मास्को, एक्सेक्ट्रा कन्टेनिंग ए पर्टीकुलर डिस्क्रेप्शन आफ हिन्दुस्तान, द मुगल्स, द ओरियंटल इसलैण्ड एण्ड चाइना‹ इन बुक थ्री› बाई आदम ओलीरियस, सेकेन्ड एडीशन लंदन 1669।

29- मांसरेट , एस. जे. (1580-83) , द कमेन्ट्री, ट्रांसलेटेड फ्राम लैटिन बाई जे0 एस. हायलैण्ड, एनोटेटेड बाई एस. एन. बनर्जी, 1922, आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ।

30- नियोहाफ जॅान (1665) वोयाज एण्ड ट्रैवेल्स इन टू ब्राजील एण्ड ईस्ट दि इंडीज़ प्रिन्टेन्ड बाई हेनरी लिन्टाह एण्ड जान आसबर्न ।

ओविगंटन ,जे (1689) , ए वोयाजे टू सूरत इन द इयर (1689) , लंदन 1696

31- पेलसर्ट फ्रांसिस्को, जहांगीर,'सस इंडिया, ट्रांसलेटेड बाई डबल्यू एच, मोरलैंड एण्ड पी. गेल, कैम्ब्रिज , 1925 ।

32- पीटर मुंडी (1628-34) ट्रैवेल्स इन यूरोप एण्ड एशिया, वायल्यूम टू,॥. ट्रैवेल्स इन एशिया (1628-34) सेकेन्ड सीरीज ,1914

33. रो सर थामस (1615-19) , द एम्बेसी टू द कोर्ट आफ द ग्रेट मुगल (1615-19) , एडी. बाई विलियम फॉस्टर ,लंदन, 1899, ए लेटर एडीशन इन ऑफ 1936 ।

34 स्टैबोरेनियस, जान स्प्लिन्टर (1768-71) , वोयाज टू द ईस्ट इंडीज, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई सैमुअल हुल विल्कॉक्स ,इन थ्री वाल्यूम्स, लंदन ।

35- थैवनॉट, एम. (1667), ट्रवेल्स इन टू दि लीवेन्ट इन थ्री पार्ट्स, ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश, 1686 पार्ट थ्री रिलेट्स टू इंडिया ।

36. ट्रेवेर्नियर जे0 बी0, ट्रेवेल्स इन इंडिया, इन टू वायल्यम्स सेकेन्ड एडीशन, न्यू दिल्ली ।

37. विलियम हाकिन्स {1608-13} अर्ली ट्रेवेल्स इन इंडिया बाई फास्टर, लंदन ।

38. अंसारी- सोशल लाइफ आफ दि मुगल इम्परर्स {1526-1707} न्यू दिल्ली, 1974

39 अशरफ के0 एम0 - लाइफ एण्ड कंडीशन आफ द पोपुल्स आफ हिन्दुस्तान, कलकत्ता, 1935 ।

40. अल्तेकर, ए0 एस, द पोजीशन आफ वोमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, बनारस, 1938 ।

41. एलिस हैवलौक -स्टडीज़ इन साइकालोजी आफ सेक्स ।

42 अल्बेरूनी - हिज इंडिया एन अकाउण्ट ऑफ द रिल्जिन फिलॉसफी, एक्सेक्ट्रा, आफ, इंडिया, इ. डी. 1030 एडीटेन्ड एण्ड ट्रांसलेटेड इन टू इंग्लिश बाई सचाऊ, लंदन, 1888वाल्यूम्स । एण्ड 2 ।

43. अली यूसुफ अब्दुल्ला - मेकिंग आफ इंडिया ।

44. मिसेज बृजभूषण जमीला- कास्टयूम्स एण्ड टेक्सटाइल्स आफ इंडिया, बम्बई, 1940

45. प्रसाद बेनी - हिस्ट्री आफ जहाँगीर, लंदन, 1930, हिस्ट्री आफ जहाँगीर थर्ड, इडीशन, इलाहाबाद 1940 ।

46. भट्टाचार्य जोगेन्द्रनाथ- हिन्दू कस्टम सेक्ट्स, थक्कर, स्पिंक एण्ड कम्पनी, कलकत्ता, 1846 ।

47 ब्राउनपर्सी - दि इंडियन आर्कीटेक्चर, तारपोरवाला बम्बई,
इंडियन पेन्टिंग्स अंडर द मुगल, क्लैरेंडन प्रेस, आक्सफोर्ड 1954 ई0

48. बृजभूषण जमोला - इंडियन ज्वेलरी, ओरनामेन्ट्स एण्ड डेकोरेटिव डिजाइन्स,
तारपोरवाला, सन्स एण्ड कम्पनी, प्र0 स0 बम्बई ।

49. दासगुप्ता टी0 सी0 - आस्पेकेट्स ऑफ बंगाली सोसाइटी, कलकत्ता,
यूनिवर्सिटी, 1935 ।

50. दत्त कालीकिंकर - सर्वे आफ इंडिया"ज़ सोशल लाइफ एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन
इन द ऐट्टीन्थ, सेन्चुरी, (1707 -1813) मुंशीराम मनोहर
लाल पब्लिशर्स, प्रा0 लि0 सेकेन्ड इडी. 1978

51 डुबाएस जे0 ए0 ए - हिन्दू मैनर्स, कस्टम्स एण्ड सेरेमनीज, आक्सफोर्ड, थर्ड
एडीसन ।

52. इलियट, सर एच. एम. - डाउसन, जान द हिस्ट्री आफइंडिया ऐज, टोल्ड
बाई, इट्स, हिस्टोरियन्स ऐट वायल्यूम्स, लंदन
1867-1877

53. इलियट एण्ड डाउसन - भाग7, किताब महल, 15 थॉर्नहिलरोड, इलाहाबाद ।
ई0 जी0 ब्राउन - ए लिट्रेरी हिस्ट्री ऑफ पर्शिया, जिल्द 3, कैम्ब्रिज, 1951

54. घुर्ये- जी0 एस- इंडियन कास्ट्यूम्स, बम्बई, 1951 ।

55. धुर्ये जी० एस० – कास्ट क्लास एण्ड ऑक्युपेशन, पाप्युलर बुक डिपो, बम्बई,
1961 ।

56. गैरेट एण्ड एडवर्ड – मुगल रूल इन इंडिया, एशियन पाब्लिकेशन सर्विस, नई
दिल्ली, इंडिया 1979 ।

57. ग्रियसन जी०ए० – बिहार पीजेन्ट लाईफ, कलकत्ता, 1885

58. ग्रियसनजी०ए०– दि मार्डन वर्नाक्युलर लिटरेचर ऑफ हिन्दुस्तान , ए एस.
सो, कलकत्ता, 1889

59. ह्यूज़ , थामस पैट्रिक , ए डिक्शनरी आफ इस्लाम, लंदन, 1885

60 हबीबुल्लाह ए. बी. एम. – द फाउन्डेशन ऑफ मुस्लिम रूल इन इंडिया,
लाहौर , 1945 ।

61 हबीब इरफान – द अग्रारियन सिस्टम आफ मुगल इंडिया, बाम्बे, 1936

62 हुसैन यूसुफ – ग्लिम्पसेस आफ मिडीवल इंडियन कल्चर, लंदन, 1959

63 इरविन – लेटर मुगल्स, इडी. सर जदुनाथ सरकार टू वायल्यूम्स, कलकत्ता,
1922, सेकेन्ड, एडी. दिल्ली, 1971

64. जे० मिल – हिस्ट्री आफ ब्रिटिश इंडिया, वाल्डविन, वारडक, लंदन,
1926 ।

65 जाफर शरीफ – कानून-ए- इस्लाम और इस्लाम इन इंडिया कम्पोस्ट अंडर द
सुपरविजन आफ जी. एच. हरक्लाट्स, रिवाइज्ड बाई
विलियम कुक, आक्सफोर्ड 1921 आल्सो कानून-ए-इस्लाम
बाई जाफर शरीफ, लंदन, 1832, ट्रांसलेशन बाई. जी. एच.
हरक्लाट्स ।

66. कपूर एलिजाबेथ – दि हरेम एण्ड दि परदा, टी० स्पिार अनबनि लि. कलकत्ता,

प्रथमावृत्ति, 1915 ।

67. कुमार स्वामी के०ए० – राजपूत पैन्टिंग, भाग, 5

मुगल पेन्टिंग, भाग 6

68. गीर हसन अली मिसेज– ऑब्जरवेशन्स ऑन द मुसलमान्स, ऑफ इंडिया इडो,

डबल्यू कुक, आक्सफोर्ड, 1917

69. मैकालिफो, मैक्स आर्थर– द सिख रिलिजन, ऑक्सफोर्ड, 1909, सिक्स वायल्यूम्स

70. मलिक, जहीरूद्दीन – द रिजाइन ऑफ मुहम्मद शाह, एशिया पब्लिशिंग

हाउस, 1977

71. मूलर, एफ. मैक्स – सैकरेड बुक्स, आफ दि ईस्ट भाग 25, दि लॉज ऑफ

मनु (मनु स्मृति का अंग्रेजी अनुवाद) कैलेरेन्डनप्रेस,

ऑक्सफोर्ड, 1886

72. निजामी, के० ए० – स्टडीज इन मिडीवल इंडियन, हिस्ट्री एण्ड कल्चर,

इलाहाबाद 1956

73. निकोल्सन आर० ए० – आइडिया ऑफ पर्सनाल्टी इन सूफिज्म

74. निजामी के० ए० – सम आस्पेक्ट्स ऑफ रेलिजन एंड पालिटिक्स इन इण्डिया

ड्यूरिंग दि थर्टीन्थ सेन्चुरी, एशिया, पब्लिशिंग हाउस,

बम्बई, 1961 ।

75. ओन ए० जी – द फाल आफ द मुगल इम्पायर लंदन 1912

76. ओझा पी० एन०– ग्लिम्पसेस आफ सोशल लाइफ इन मुगल इंडिया, क्लासिकल

पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली ।

77. गावेल ग्राइम - ए हिस्ट्री आफ इंडिया प्लेट 14 जे0 बी0 ए एम बी, एम0 एस0 ।

78. प्रसाद जयशंकर - ग्यारहवीं सदी का भारत, बिहार, हिन्दी, ग्रंथ अकादमी द्वितीय संस्करण 1980

79. रघुवंशी, वी0पी0 एस- इंडियन सोसाइटी इन द ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, एशिया, पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली (1969) ।

80. सं. रॉस ई. डेनिसन - तारीखे फखरूद्दीन मुबारकशाह, आर. ए. एस. एन अल्फाबेटिकल लिस्ट ऑफ द फीस्ट्स एण्ड होलीडेज ऑफ दि हिन्दूज एण्ड मोहमडेन्स, कलकत्ता 1914 ।

81. री. जे. डी. - दि मोहमडेन्स (1001-1761) लौंगमेन्स, ग्रीन एण्ड क0 कलकत्ता 1894 ।

82 रायचौधरी ए.सी. सोशल कल्चरल एण्ड एकोनॉमिक कंडीशन आफ इंडिया

83 रसीद, ए0, सोसाइटी एण्ड कल्चर इन मिडीवल इंडिया, कलकत्ता, 1969 ।

84 सरकार जगदीश नारायण - स्टडीज इन एकोनॉमिक लाइफ इन मुगल इंडिया

85 सरकार, जे0 एन0 -हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब, 5 वायल्यूम्स, कलकत्ता, 1912-25

86 सरकार, जे0 एन0, स्टडीज इन मुगल इंडिया, कलकत्ता, 1919

87 स्लीमैन मेजर - रैम्बल्स ऐंड रिकलेक्शन्स, लंदन

88 शर्मा जी0 एन0 - सोशल लाइफ इन मेडिवल राजस्थान

89 शर्मा- गोपीनाथ - राजस्थान का इतिहास, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी आगरा - 3, 1979 ।

90. सावित्रीर शिवाजी - सं0 सखाराम सरदेसाई, टरसेंच्यूरी सिलेब्रेशन्स, बाम्बे, 1927 ई0

91. सिंह मोहन - हिस्ट्री ऑफ दि पंजाबी लिटरेचर, लाहौर

92. सहगल – एस0 पी0 – लाइफ आफ दि मुगल प्रिन्सेज ।

93. सुभान जॉन ए0 – सूफीज्म इट्स सेन्ट्स, एण्ड श्राइन्स, लाहौर (इंडिया) 1938

94. शाह और कामदार – ए हिस्ट्री ऑफ द मुगल रूल इन इंडिया।

95. शास्त्री एम0ए0 – आउटलाईन्स ऑफ इस्लामिक कल्चर, दि बंगलोर प्रेस, बंगलौर 1938 ।

96. सेन क्षितिमोहन – मिडीवल मिस्टिसिज्म ऑफ इंडिया, लंदन

यासीन मुहम्मद – ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया (1605–1748) लखनऊ, 1958

97. पंत, डी0 – कामर्शियल पालिसी आफ द मुगल्स, तारापोरवाला, बाम्बे 1930 ।

98. तिवारी, रामपूजन, सूफी मत साधना और साहित्य, ज्ञानमण्डल, लि0, बनारस प्र0 सं0 वि0 सं0 2013 ।

99. थामस, पी0 – फेस्टवेल्स एण्ड होलीडेज आफ इंडिया, डी0बी0 तारापोरवाला सन्स एण्ड कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई ।

100. ताराचन्द्र – इनफ्लुयेन्स ऑफ इस्लाम आन इंडियन कल्चर इलाहाबाद 1936 ।

101. टॉड, कर्नल जेम्स – द अनाल्स एण्ड एन्टिक्वीटीस ऑफ राजस्थान, इडी; बाई डबल्यू कुक थ्री वायल्यूम्स, 1920

102. उमर मुहम्मद – हिन्दुस्तानी तहजीब पर मुसलमानों का असर, 1975, दिल्ली

103 यासीन मुहम्मद – ए सोशल हिस्ट्री आफ इस्लामिक इंडिया (1605–1748) लखनऊ, 1958

संस्कृत ग्रंथ

1. आपस्तम्ब धर्म सूत्र - हरिदत्त टीका सहित, चौखम्बा, संस्कृत सीरीज, वाराणसी ।

2. अर्थवेद - टीकाकार: श्रीराम शर्मा, सन् 1969 संस्कृति संस्थान, मथुरा ।

3. अभिलषार्थ चिन्तामणि - सोमेश्वर देव, निर्णय सागर प्रेस ।

4. अर्थशास्त्रम् कौटलीय - टी0 पाण्डेय रामतेग शास्त्री, सं0 2019, पण्डित पुस्तकालय, काशी ।

5. बौधायन धर्मसूत्र- सं0 चिन्नस्वामी शास्त्री, सन् 1972 ई0 चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी ।

6. बृहद्धर्म पुराण - हरिप्रसाद शास्त्री, सम्पादक, कलकत्ता, 1888 ।

7. बृहदारण्यकोपनिषद्- सं0 शिरोमणि उत्मार, टी0वीरराघवाचार्य, टी. टी. पी. प्रेस, तिरूपति, 1954 ।

8. कामसूत्रम - टीकाकार गंगाविष्णु श्रीकृष्ण, शक संवत् 1856 । कल्याण प्रेस, बम्बई ।
(वात्सायन, टीका देवदत्त शास्त्री) ।

9. कृत्यकल्पतरु - लक्ष्मीधर, बड़ौदा, 1941-53 ।

10. छान्दोग्यपनिषद्- शंकरभाष्य, संवत्, 1994, गीताप्रेस, गोरखपुर ।

11. गौतम धर्म सूत्र - हरदत्त टीका सहित, आनन्दाश्रम संस्कृत, सीरीज, 1910 ।

12. महाभारत (शांति पर्व)- अनु0 रामनारायण दत्त, गीता प्रेस, गोरखपुर ।

13. मनुस्मृति - सं0 गोपाल शास्त्री, सन् 1970, चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी ।

14 मृच्छकटिकम् - महाकवि शूद्रक, डॉ0 रमाशंकर त्रिपाठी, सन् 1969, मोती लाल -बनारसीदास, वाराणसी ।

15 मेघदूत - कालिदास, नागार्जुन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 1979

16. नाम लिंगानुशासन- अमरसिंह, सं0 हरदत्त शर्मा

17. रघुवंश - कालिदास, -संजीवन सुधा टीका समेत । मध्य प्रदेश

18. ऋग्वेद- सायण भाष्य सहित, संपादक, एफ0मैक्समूलर, 1890-92, 5 भाग, वैदिक संशोधन, मण्डल, पूना, 1933-51 ।

19. ऋतुसंहार - कालिदास, निर्णय सागर, प्रेस, बम्बई, 1922

20. रसमंजरी - भानु, टीका जगन्नाथ, पाठक

21. रामचरित मानस- {गुटका} गीता प्रेस, गोरखपुर ।

22. विष्णुपुराण - बम्बई, 1889, विल्सन, 5 भाग, 1864-70, गीता प्रेस, गोरखपुर, सं0 2009 ।

23. वाल्मीकीय रामायण - हिन्दी अनुवाद, अनु० -चंडिकाप्रसाद अवस्थी, नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ 1934

24. याज्ञवल्क्य स्मृति- व्याख्याकार डा0 उमेश चन्द्र पाण्डेय सन् 1967, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी ।

1. हिन्दी भास्कर : साहित्य समालोचना, त्रैमासिक पत्रिका, पंजाब यूनिवर्सिटी
चण्डीगढ़ (ई0 हुए प्रकाश का केन्द्र) ।

2. शोध पत्रिका साहित्य संस्थान, उदयपुर, 1963 ई0

3. ओरियंटल कालेज मैगजीन, लाहौर, 1937.

4. लेख - चौधरी तपनराय, द मिड ऐट्टीन्थ सेन्चुरी, बैकग्राउन्ड, द कैम्ब्रिज
एकोनॉमिक हिस्ट्री आफ इंडिया, भाग2, 1982 ।

जरनल

1. इंडियन ऐन्टीक्वेरी, बम्बई,

2. इस्लामिक कल्चर, क्वाटरली, जनवरी 1980

3. जनरल आफ वेंकटेश्वर इन्स्टीट्यूट,

4. जनरल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, बम्बई ।

5. जनरल ऑफ एशियाटिक सोसाइटी आफ बंगाल, ।

डिक्शनरी

1. आप्टे - संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी, मोती लाल बनारसीदास, दिल्ली, 1970

2. इन साइक्लोपीडिया ब्रिटानिया, भाग 10, 12, लंदन, जोहन्सबर्ग

3. इन साइक्लोपीडिया अमेरिकाना भाग 26, 1951 न्यूयार्क

शोध-ग्रंथ

1. नटजी एस0के0, लाइफ एण्ड टाइम्स ऑफ फरूखसियर,
इलाहाबाद ।

2. दरबारी लाल, सोशल एण्ड एकोनामिक कंडीशन आफ नार्दन इंडिया ड्यूरिंग
द सेकेन्ड हाफ आफ सेवेन्टीन्थ सेन्चुरी,
डी0 फिल0 थिसिस ।